जागरी

सतीनाथ भादुड़ी
अनुवाद
हंसकुमार तिवारी

नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया, नयी दिल्ली

भूमिका

यद्यपि 'आलालेर घरेर दुलाल' (1808) से बगला उपन्यास की वर्ष-गणना शुरू हुई, यद्यपि इस पुस्तक के लेखक प्यारी चाद ने प्रयोजनीय वस्तु-ज्ञान का परिचय इस ग्रथ मे दिया था, तथापि इस विषय मे कोई सदेह नही कि हमारे उपन्यास-साहित्य के प्रथम प्रधान पुरुष है बकिमचद्र चट्टोपाध्याय। यह बात अब स्वीकार कर लेना अच्छा है कि 'आलालेर घरेर दुलाल' मे उपन्यास की महज शर्त पूरी हुई है, उपन्यास का प्राण-स्पदन अनुभूत नही हुआ है। बकिमचद्र ने ही बगला उपन्यास को एक शक्तिशाली शिल्पमाध्यम के रूप मे प्रतिष्ठित किया। उनके द्वारा सृष्ट चरित्र-पात्र की सजीव एकात जीवन-आकाक्षा मे सदेह नही रहा, सदेह नही रहा उन चरित्रो के अदृष्ट अथवा नियति के सबध मे लेखक की उन्नीसवी सदी की धारणा मे, सदेह नही रहा उनके सामाजिक पारिवारिक उपन्यासो के चरित्रो के साथ उस युग के भले लोगो की विशिष्ट चेतनालब्ध नये कालोचित यत्रणा की समानता मे। फिर भी शताब्दी गुजर जाने के बाद आज यह बात भी मन मे आये बिना नही रहती कि उनके सामाजिक भले लोग गोया खासे निश्चेष्ट-से थे, नीति और प्रथा के बीच वे नाहक ही आदोलित हुए। लेकिन फिर भी उनके नारी-चरित्र हरगिज भुलाये नही जा सकते, अस्वीकार नही किये जा सकते—व्यक्तित्व मे, छंद मे, सजीवता में, जीवन सम्मत वास्तवता मे—आविष्करणीया 'शैवलिनी' (चद्रशेखर–1875), अतुलनीया 'रोहिणी' (कृष्णकातेर विल–1878), विस्मयकर 'मृण्मयी' (कपाल कुडला–1866)। उनके 'भद्रलोग' जहा एक कृत्रिम सश्लेषण या फाल्स सिथेसिस की खोज मे खामखा ही घूमते रहे, वैसी स्थिति में उनके नारी-चरित्र, यहा तक की 'देवी चौधरानी' (1884) जैसी परिसीमित कल्पना के क्षेत्र मे भी निर्मूल जीवनावेग से स्पदित रहे। घर-बाहर का यह जो व्यवधान है, विवर्ण पुरुष और गति-चचल नारी के बीच यह जो दूरी है, वह भी शायद अगरेजो के स्वार्थनिर्मित कोलोनी के मध्यवित्तो के अस्तित्व की दूसरी एक बिडंबना है, और एक गजना है।

रवीद्रनाथ कम से कम 'चोखेर बाली' (1903) से ही हमारे मध्यवित्त जीवन की खडता से पीडित नाना विकार को पहचान पाये थे। उनके पुरुष चरित्रो ने इस औपनिवेशिक ऋजुता से, विच्छिन्नता से नायक की भूमिका मे लडाई की है। इस कोटि के नायको की योजना से उनके उपन्यासो में हम पाते है आपात अनाटकीय किंतु गूढ टेशन स्पदित व्यक्ति की कहानी। इस श्रेणी के गतिशील नायको मे गोरा, शचीश, अतीद्र अवश्य ही चिरस्मरणीय रहेगे। उनके नारी-चरित्रो की विशिष्टता को भी याद रखना होगा। विनोदिनी, सुचरिता, दासिनी, कुमू—इनमे से कोई भी अवकाश-बहुल आराम पुष्ट जीवन से उठकर नही आयी है। प्रत्येक का जीवन दुख और गरीबी की अभिज्ञता से ही निर्मित हुआ है। उन्होने इस देश के सीमित जीवन के दायरे से ही स्वातत्र्य-चर्चा की है। यहा तक की उनके अतिम दौर के बहुत ही रोमाटिक उपन्यास 'शेषेर कविता' (1929) की नायिका लावण्य भी स्वावलबिनी गवर्नेस है। 'चोखेर बाली' उपन्यास से ही बगला साहित्य का बीस शतकीय पर्याय शुरू हुआ। चरित्र तथा घटना-सस्थान का बकिमीय विन्यास इसके बाद से अचल हो गया। शुरू हुआ पात्र-पात्री के मनोजगत के घात-प्रतिघात के टेशन भरे उपन्यास का युग। चरित्र के बदले पात्र-पात्री का व्यक्तित्व और व्यक्ति स्वतत्रता प्रधानता पाने लगी। इन सबकी शुरुआत रवीद्रनाथ ने ही की। 'गोरा' और 'चतुरंग' (1910 और 1915)—रवीद्रनाथ के इन दो उपन्यासो मे नायक-नायिका के अस्तित्व की यत्रणा को सबसे ज्यादा शैल्पिक सार्थकता मिली है। 'गोरा' और 'चतुरग' कितना पहले लिखे गये—पर आज भी पहला महाकाव्योचित लक्षण मे बेमिसाल और दूसरा तीक्ष्ण सौदर्य मे, टेकनिक की दीप्ति मे अप्रतिद्वद्वी है।

बकिमचंद्र के नायक, नायिकाए घटनाओ के बड़े पहाड़ पर चढ़ा-उतरा की हैं। रवीद्रनाथ के उपन्यास मे उस माप की घटना ही नही होती। परतु उनके उपन्यास के नर-नारी के व्यक्तित्व के स्पर्श से साधारण घटना कितनी असाधारण हो उठती है। घटनाजनित द्वंद्व को रवींद्रनाथ व्यक्ति के अपने जीवन-द्वंद्व के उत्स मे खोजते है। गोरा के जन्मरहस्य को पाठको के सामने छिपा रखने की नाटकीयता के रवीद्रनाथ हामी नही। इस शिल्प-माध्यम के प्रतिष्ठाता गरचे बकिमचद्र हैं, किंतु बगाली मध्यवित्तो के अपने आपको आविष्कार करने की प्रेरणा से इस शिल्प-माध्यम का प्रथम व्यवहार

रवींद्रनाथ ने ही किया। बकिमचद्र ने अकित किया है रक्त-मास-स्नायु से बने व्यक्ति की आकांक्षा और विफलता का स्वरूप। रवीद्रनाथ ने बार-बार समझना चाहा है, व्यक्ति की सर्वविध चरितार्थता के मार्ग मे बाधा कहा है। इसीलिए उनके कोई दो उपन्यास वक्तव्य और आगिकरीति मे एक दूसरे से नही हुए। बकिम के उपन्यास क्लासिक स्थापत्य के निदर्शन हैं। उनके किसी भी प्रधान परिच्छेद का नाटकीय विन्यास स्मरणीय है। रवीद्रनाथ के उपन्यासो मे बौद्धिक (इटलेक्चुअल) अन्वेषा को ही महत्व मिला है—इसीलिए 'चार अध्याय' (1904) के अतिम दृश्य के अलावा नाटकीयता उनके लिए वर्जनीय है।

सन् 1913 मे शरत्चद्र की 'बडी दीदी' पुस्तकाकार प्रकाशित हुई, अवश्य बड़ी कहानी के रूप मे यह इसके पहले ही 'भारती' पत्रिका मे प्रकाशित हो चुकी थी। 1915 में प्रकाशित हुआ रवीद्रनाथ का 'चतुरग'। कहना नहीं होगा कि 'चतुरग' को 'बडी दीदी' जैसी लोकप्रियता नही मिली। परतु खास तौर से कहने की बात यह है कि शरत्चद्र ने जब अच्छी, समाप्ति-सुदर कहानियां लिखनी शुरू की, रवीद्रनाथ ने तब तक बगला उपन्यास को पूर्णवृत्त कहानी-कथन के बाहर पहुचा दिया। 'चतुरग' से ही उन्होने उपन्यास के फार्म को तोड़ना-फोड़ना शुरू किया और उनके इस फार्म के तोडने-फोड़ने से यही बात साबित हुई कि बडे लेखक टेकनिक की तोड-फोड महज मन की मौज के लिए नही, बल्कि जीवन की जटिलता की गहन गहराई मे प्रवेश करने के लिए करते हैं। याद रखना होगा, 'चतुरग' उपन्यास मे रवींद्रनाथ जब उपन्यास के फार्म की नयी रीति का प्रयोग कर रहे थे, उसी समय यूरोप में खास कर इगलैड मे उपन्यासो मे दूसरी तरह से फार्म की तोड़-जोड शुरू हुई।

शरत्चंद्र ने इन जटिलताओ के लिए मगजपच्ची नही की। उन्हे कहने की बात ज्यादा नही थी। बकिमचद्र ने नारी और पुरुष के देहाठिष्ठित भवितव्य का आलेख आका था। रवीद्रनाथ ने व्यक्तित्व के पीड़ामय आत्मविकास की बात कही। शरत्चद्र पुरुष खास कर नारी के स्नेह और प्रेम के स्वाधिकार की बात कहने आये। जब बगाल के पाठक जनसाधारण रवीद्रनाथ के उच्चकोटि के उपन्यासों के नायक और नायिका को पकड़ नही पा रहे थे, 'भारती' युग के लेखकों की कृत्रिम नागरिकता और शौकिया रोमाटिकता से जब साधारण मध्यवित्त जीवन

की दैनदिन वास्तवता उभर नही रही थी, ऐसा कि कुछ ही बाद के काफी डौडीपिटे 'कल्लोल' का विद्रोह भी जब विदेशी फैशन की नकल-सा लगा—तब अकेले शरत्चद्र ने ही हमारे धूलि-धूसर जीवन पर एक अनोखी रोमाटिक जोत जगायी। रक्षण शील बगाली मध्यवित्तो ने शरत्चद्र की रचना मे, जो जीवन वे जी रहे थे, उसके काव्यकरुण गौरव की दिशा पायी। मात्र 'गृहदाह' (1920) को छोडकर शरत्चद्र के सभी उपन्यासो के बारे मे यही बात कही जा सकती है। जो समाज, अर्थनीति का जो ढाचा टूट रहा था, उसके मूल के सबध मे शरत्चद्र को कोई जिज्ञासा नही थी। सिर्फ उसी टूटे-से समाज के बीच खडे होकर शरत्-चद्र डिकेस की तरह व्यक्तिगत करुणा और सुविचार के प्रार्थी हुए थे। परतु उनके हृदय के महत्व पर शुबहा नही। हा, केवल हृदयवान होने से ही बडा औपन्यासिक हुआ जा सकता है या नही, यह सदेह स्वाभाविक है।

बगला उपन्यास अपने तीसरे युग मे पहुचा वर्तमान शताब्दी के तीसरे दशक में। हम जिन्हे तीस के औपन्यासिक कहते है, इस युग मे उन्होने ही प्रमाणित किया कि बगला उपन्यास अब बंकिमचद्र—रवीद्रनाथ—शरत्चद्र जैसी एकक प्रतिभा की लीला-भूमि नही रहा। सख्या में खासे इन उपन्यासकारो ने नाना दिशा से बंगला उपन्यास को समृद्ध कर दिया। जन्म लिया आचलिक उपन्यास ने। फ़ायड का मनोविश्लेषण और मार्क्स की समाज-दृष्टि एक ही समय मे बगला उपन्यासो मे साथ रहे। स्वदेश के प्रति जिज्ञासा को तीव्रता मिली। शायद हो कि यह सब 'कल्लोल' (1920) की ऊची आशा के दिनो के इखरे-बिखरे डैनें फडफड़ाने के परिणामस्वरूप हुए। पर इसमे कोई सदेह नही कि सारे कुछ ने दाना बाधा उन्ही के हाथो, जो नाममात्र के 'कल्लोली' या कतई 'कल्लोली' नही थे। आच-लिक साहित्य का सूत्रपात्र गरचे शैलजानद के हाथो हुआ, फिर भी स्वीकारना ही पड़ेगा कि उसके यथार्थ रूप की रचना की ताराशकर बद्योपाध्याय ने। प्रेमेद्र मित्र के हाथो उपेक्षित मनुष्य का चित्र निखर उठने को जरूर हुआ, निखर उठने को हुआ जरूर युवनाश्व के 'पटलडागा की पाचाली' मे—तथापि इसका यथार्थ औपन्यासिक रूपायन हमने माणिक बद्योपाध्याय की रचना मे ही पाया। विभूति भूषण बद्योपाध्याय ने एक बिलकुल ही नया क्षितिज खोल दिया—'पथेर पाचाली' (1919) और 'आरण्यक' (1938) में। तीस के औपन्यासिकों के कुछ उपन्यास

शैलुडिक पूर्णता मे बगला कथा-साहित्य मे ध्रुपदी उपन्यास की मर्यादा पाने योग्य है। ताराशकर का 'गणदेवता' (1942), 'कवि' (1942), माणिक बद्योपाध्याय का 'पुतुल नाचेर इतिकथा' (1939), 'पद्मानदीर माझी' (1936) तथा विभूति भूषण बद्योपाध्याय के उपर्युक्त दो उपन्यास इस प्रसग मे उल्लेख-योग्य मे मात्र कई है। कितु इन उपन्यासो मे कितनी विपरीतता है, विषय और शैली मे कितना अतर ! जीवन विचित्र है, अतहीन है हमारे देश के जीवन का रूप, मनुष्य का कितना परिचय इस देश के प्रान मे बिखरा पडा है। तीस के औपन्यासिको ने श्रम से, जिज्ञासा से, अभिनिवेश से उसे निखारा है। इस श्रेणी के उपन्यास की जो असली विशिष्टता है—चरित्र का व्यक्ति रूप और टाईप रूप का समन्वय—इन औपन्यासिको ने उस समन्वय मे भी पारदर्शिता दिखाई है।

वनफूल, जिनका वास्तविक नाम बलाई चाद मुखोपाध्याय है, इसी खेवे के ही एक औपन्यासिक है, जिन्होने विशिष्टता अपने वक्तव्य के लिए उतनी नही हासिल की है, जितनी विषय-वैचित्र्य के लिए, टेकनिक की सचेतनता के लिए। लेकिन कुल मिलाकर लगता है, तीस के औपन्यासिको मे एकमात्र ताराशकर मे ही महत् औपन्यासिक का उपादान मिलता है। माणिक बद्योपाध्याय शुरू मे अध अदृष्ट के खिलौना थे नि सग, असहाय मनुष्य के आलेख्यकार। बाद मे उन्होने मार्क्स के सिद्धात के प्रकाश मे जीवन का विचार करना चाहा था। इससे यह साबित होता है कि वह गतिशील चेतना के अधिकारी थे। पर, यह रूपातर माणिक की कुछ छोटी कहानियो मे फलप्रसू होते हुए भी औपन्यासिक के नाते वह लाभवान हुए थे या नहीं, यह कहना कठिन है। विभूति भूषण प्रकृति की नित्य लीला और दीन-दरिद्र मनुष्यो के जीवन के नाना क्षणो मे अनत के प्रकाश को देखकर ही सुखी थे। लेकिन ताराशकर ने देखा भारतवर्ष के मनुष्य की नैतिक दृष्टि को, इसकी विचित्र जन-गोष्ठी को और सर्वोपरि इसके आधुनिक इतिहास के चलिष्णु रूप को। इस विषय मे ताराशकर की दृष्टि चूकि अविचल थी, इसलिए उनके प्रारभिक जीवन की मार्क्सवाद—प्रीति और परवर्तीकाल मे गाधीवाद की दीक्षा से उनकी कला कीर्ति के प्रधान अश की कोई हानि नही हुई। भारतीय जीवन, भारतीयता उनकी दृष्टिसीमा से कभी खोई नही—यही उनके महत्व का कारण है।

तीस के औपन्यासिक जब बदस्तूर प्रतिष्ठित हो चुके, उसी समय, सन् 1945 मे सतीनाथ भादुडी की 'जागरी'[1] प्रकाशित हुई। सतीनाथ का जन्म हुआ 1906 मे, मृत्यु 1965 मे। बिहार का अचल विशेष उनके उपन्यासो की पटभूमि है। 'ढोढाई चरित मानस'—प्रथम और द्वितीय (1949-51) और 'अचिन रागिनी' (1954) उनके अन्य दो उपन्यास हैं। हार्दिक भगिमा, अभिनव विषय-वस्तु और प्रसन्न-प्रोज्वल मानववादी दृष्टि इनकी रचना की विशिष्टता है। 'जागरी' से ही इस लेखक की यात्रा आरभ हुई। निकलते न निकलते 'जागरी' ने पाठको पर कब्जा कर लिया। आविर्भाव और विजयलाभ मे जरा भी जो देर नही हुई,उसके दो कारण है—एक तो कि अग्निगर्भ सन् बयालीस के आदोलन पर यही पहला उपन्यास लिखा गया, और दूसरा—इसकी विशिष्ट आगिकरीति। सिर्फ तीन साल पहले सन् बयालीस का गण-अभ्युत्थान हुआ। जन-मानस मे तो उस समय भी प्रत्यक्ष-साही प्रदीप्त था। जेल की चहारदीवारी के अधेरे अतराल मे कितने देशप्रेमियो ने भोर-भोर मे जाने गवायी। इस उपन्यास मे उस समय का चित्र विश्वस्त वास्तवता मे निखरा है। बिलू, पिता, मा, और नीलू एक भयावह भोर की प्रतीक्षा मे है, जिस भोर मे बिलू को फांसी होगी। इन चार व्यक्ति के चार अतर्गत एकोक्ति का परिणाम है यह उपन्यास। टेकनिक की बात बाद मे, पहले इस उपन्यास के विषय प्रसग की आलोचना कर ले।

सन् 1921 से 1942 तक की अवधि में सपूर्ण भारतवर्ष कम से कम चार बार गण-आदोलन के तरंगाघात से चचल हुआ। राजनीति इसके फलस्वरूप केवल अखबारों का ही विषय नहीं रह गयी, बल्कि आदमी के प्रत्यक्ष जीवन का अग हो गयी। मास्टर साहब के जैसा 'राष्ट्रीय परिवार' गढ़ उठा। बगाल के इतिहास मे इस तरह का और एक आलोडन आया था सन् 1905 के स्वदेशी युग में। उस आंदोलन ने भी बंगाली जीवन को पारिवारिक पट पर तथा बृहत्तर कार्य क्षेत्र मे स्पर्श किया था। परिणामस्वरूप बीसवी सदी के दूसरे दशक से ही, हम जिसे राजनीतिक उपन्यास कहते है, उसका आविर्भाव अनिवार्य हो उठा। 'घरे बाइरे' (1916) उपन्यास मे रवींद्रनाथ ने बंग-भंग की राजनीतिक उत्तेजना

[1]मूल उपन्यास का समपण भी अवलोकनीय है जिन अख्यातनामा राजनीतिक कार्यकर्ताओ की कर्मनिष्ठा और स्वार्थ त्याग का विवरण राष्ट्रीय इतिहास मे कभी नही लिखा जाएगा—उन्ही की स्मृति मे।'

के रंग से एक पटभूमि आकी। वह भी पात्र-पात्रियो की एकोक्ति के समाहार की बुनियाद पर गढा हुआ उपन्यास है। राजनीतिक वातावरण के बावजूद उपन्यास मे प्रधान बन गया है एक पारिवारिक सकट। बगला कथा-साहित्य का दूसरा मशहूर राजनीतिक उपन्यास 'पथरे दावी' (1926) लिखा शरत्‌चंद्र ने। सत्रासवादियो की जलती हुई उत्तेजना ने इस उपन्यास के अतर्गत ऐवरेज कहानियो के चारो ओर एक जाल डाल रक्खा था। इस कारण इस उपन्यास को सहज लोकप्रियता मिली। रवीद्रनाथ ने एक दूसरा राजनीतिक उपन्यास लिखा 1934 मे—उसका नाम है 'चार अध्याय'। 'घरे बाइरे' और 'चार अध्याय' इन दोनों उपन्यासो मे रवीद्रनाथ ने पार्टी या दल को व्यक्ति-स्वातत्र्य विरोधी प्रेशर ग्रुप की भूमिका मे देखा। व्यक्ति की स्वाधीनता के विकास मे पार्टी का नेतृत्व या हुक्मनामा प्रतिबधक है। यह रवीद्रनाथ ने दोनो बार दिखाया।

पुरानी धार मे बहती हुई हमारी पारिवारिक जीवन-धारा मे इसी बीच भारतवर्ष के गण-आदोलन ने कौन-से अभिघात की सृष्टि की थी, इसे सुयोग्य परिप्रेक्ष्य मे रूपायित किया ताराशकर ने अपने 'धात्री देवता' उपन्यास में (1939)। सत्रासवादी आदोलन किस प्रकार से धीरे-धीरे आप ही रूपातरित हो गया, किस प्रकार उसके कार्यकर्ता व्यक्तिगत सत्रास का रास्ता छोडकर गांधी जी द्वारा परिचालित गण-आदोलन में शामिल हुए—'धात्री देवता' उसी का एक बृहत् आलेख्य हैं। परतु मात्र इतना ही नही, 'धात्री देवता' एक राजनीतिक पारिवारिक उपन्यास है। आलोच्य 'जागरी' उपन्यास में हमे एक 'राष्ट्रीय-परिवार' के दर्शन मिलते है। 'धात्री देवता' से मिला एक 'राष्ट्रीय परिवार' का जन्मवृत्तांत। नायक शिवनाथ के साथ-साथ उसकी स्त्री, फूफी, यहां तक कि तुतली बोली वाला बच्चा भी वंदेमातरम् मत्र से दीक्षित हुआ। यही उस उपन्यास की अतिम बात है। उसी उपसंहार का घटनामय, मानसिक द्वद्व समाकीर्ण इतिहास ही 'धात्री देवता' उपन्यास का मूल रस है। मामूली सांसारिक गलतफहमी के फलस्वरूप एक टुटनग्रस्त परिवार किस प्रकार विखडित होने चला था, इतिहास के जाग्रतकाल-पुरुष ने सहसा उसे किस प्रकार फिर अच्छी तरह से गूथा, इतना ही नहीं, एक बृहत्तर चेतना के क्षेत्र में उसे नया जन्म दिया—यह ताराशंकर की तरह दूसरे किसी ने नही दिखाया।

सतीनाथ भादुडी के 'जागरी' ने बंगला के राजनैतिक उपन्यास में एक नया

अध्याय जोडा। 1942 मे ही राजनैतिक चेतना और दृष्टिकोण की भिन्नता विभिन्न पार्टियो मे धीरे-धीरे मूर्त होती रही। सी एस. पी. यानी काग्रेस सोशलिस्ट पार्टी तथा कम्युनिस्ट पार्टी ने—काग्रेस के बृहत् ऐक्यतान वादन मे अपने-अपने सुर को सुस्पष्ट करने की कोशिश की। अगस्त आदोलन के औचित्य पर कम्युनिस्ट पार्टी और काग्रेस मे बहुत बडा मतभेद था : आदोलन की पद्धति पर मतभेद था काग्रेस और सी एस पी. मे। 'जागरी' उपन्यास मे वर्णित मास्टर साहब का परिवार मानो भारतीय राजनीतिक जगत का एक छोटा प्रतिरूप हो। बिलू काग्रेस-सोशलिस्ट, माता-पिता गाधीव्रत काग्रेसी, नीलू कम्युनिस्ट। अगस्त के प्रचड आदोलन का अभिघात इस परिवार पर पडा—बृहत्तर अर्थ मे भारतवर्ष पर। 'जागरी' लेखक का पहला उपन्यास है—परतु और भी दो उपन्यासो मे लेखक ने राजनीतिक वातावरण का उपयोग किया है—'चित्रगुप्तेर फाइल' (1949) तथा 'ढोढाई चरित मानस' के दूसरे खड मे (1949) मेरी राय मे 'ढोढाई' लेखक की श्रेष्ठ रचना है। और, 'ढोढाई' के दूसरे पर्व मे उन्होने फिर सन् बयालीस की अग्निगर्भ पटभूमि का प्रयोग किया है। इससे यह बात समझ मे आती है कि अभिज्ञता के लिहाज से लेखक इस घटना से कितना आलोड़ित हुआ था। वह मानो एक युगातरकारी महान् अग्निकाड के आलोक मे ऊपर के सारे आवरण हटा कर उन मनुष्यो को देख लेना चाह रहे थे। राजनीतिक उपन्यास के आधार से उन्होने जो आद्येय दिया, वह है विचित्र मानव रस। 'जागरी' की और एक विशिष्टता इस बात मे है कि राजनीति यहा राजनीति नही है। आगिक की आलोचना से वह बात साफ होती है। साझ से भोर तक उद्वेगमय बारह घटे इस उपन्यास का आपात दृष्टि से प्राप्त घटना फल है। परतु अतर्गत एकोक्ति के कारण बाहर के इन बारह घटो पर स्मृतिलोक के लबे अतीत ने छाया डाली है। अतर्गत एकोक्ति के ही नाते स्मृतिचारण की स्वाधीनता मे समय के क्रम की रक्षा यहां आवश्यक नही थी। गोपाल हालदार के 'एकदा' (1939) उपन्यास मे हमने एक दिन की बात पढी है। वहा भी नायक की चेतना बहुतेरे अनुसंग—(असोसिएशन) के द्वारा बारह घटे की सीमा को पार कर गयी है। परतु 'जागरी' की आगिकरीति दूसरे कारण से और भी अनिवार्य हो उठी है। इसमे वर्णित वह पूरी रात मानो एक नाटक का अतिम दृश्य हो। सभासन्न यवनिका के नीचे चार पात्र-पात्री के पारस्परिक सभाष से ज्यादा जरूरी था उनकी लबी स्वगतोक्ति

को सुनना। उस निर्धारित भयकर मुहूर्त के पदक्षेप गिनते-गिनते चार जने के चार परस्पर ग्रथित जगत या चार विश्वानुभूति हमारे सामने मूर्त हुई है, परतु इस विशिष्ट टेकनिक के ही फलस्वरूप उसकी नाटकीय परिसमाप्ति अत तक पूर्ण तथा अनावृत्त रह सकी है। एक दूसरे कारण से यह टेकनिक अपरिहार्य थी। लेखक ने किसी प्रकार का राजनैतिक उद्देश्य लेकर इस उपन्यास को नही लिखा है। नीलू के चरित्र को यथार्थ भूमिका मे खडा करने के लिए भी यह टेकनिक जरूरी थी। प्रथासम्मत उपन्यास मे नीलू को इस प्रकार भीतर से समझना सभव नही होता। राजनैतिक कार्यकर्ता नही, मनुष्य ही 'जागरी' का विषय है।

—सरोज वंद्योपाध्याय

फांसी सेल

दो नबर वार्ड के पीपल की ऊपरवाली शाखा पर गोधूलि की फीकी जोत चिक-चिक कर रही है। बहुत सारी चिडिया एक बार इस डाल पर एक बार उस डाल पर जा रही है। पल भर का भी विश्राम नही। जरा ही देर मे तो चारो ओर अधेरे से ढक जायेगा। फिर सारी रात वही सन्नाटा,—इसलिए शायद अतिम घडी की यह चचलता है। इतना पर फडफड़ाना, इतना आनद-उत्सव। जितना आनद समय के पास से छीन लिया जा सके! सच ही क्या चिडियां इसीलिए साभ को इतनी चचल हुआ करती है? इस सेल मे आने से पहले, दो नबर वार्ड मे जब था, रोज साभ को लाक-अप से पहले बाहर की खुली हवा थोडी-सी पी लिया करता था। क्या जरूरत की खातिर? नही। जैसे अदर कमरे मे बैठे है। कोई जरूरत नही है बाहर आने की। मगर एक बार बाहर निकलना ही है। अधिकतर राजनीतिक कैदियो की यही मनोवृत्ति देखता था। वार्डर खीज जाया करते, आपस मे क्या-क्या बोला करते—उनका आशय कि ये स्वराजी लोग जान-कर खामखा उन्हे तग किया करते है। लेकिन कोई भी तग करने के लिए ऐसा नही करता था। असल मे, जो थोडा-सा उपभोग कर लिया जाय, उसे कोई छोड़े क्यो?

वे शायद कौए है—इतनी दूर से ठीक पहचाना नही जाता चिड़िया लेकिन रात मे डैने फडफडाती है—

एक बार बकरी कोल की सभा से लौटते हुए हमें सारी रात कामाख्याथान के

विशाल बरगद के नीचे बितानी पडी थी। कहते है, वहा की माटी पर पडे रहने से कोढ मे आराम हो जाता है। दूर-दूर से इसीलिए कितने लोग यहा आते है। बहुत से कोढी आसपास के पेडो के नीचे पडे थे। मै और नीलू था। साथ मे सहदेव भी था शायद। तमाम रात पछियो के डैनो की वह फडफडाहट, उफ्। हम तीनो पेड तले अगल-बगल लेटे थे। लगा पेड तले पनाह लेने की वजह से नीलू कुछ खीजा-सा है। मैने पूछा, 'ये सब डैने क्यो फडफडा रही है भला ?' नीलू ने कहा, 'चीटी-वीटी काट रही होगी।' नीलू को सोचने मे समय भी नही लगता। हर विषय मे उसका निश्चित मत है। उस मत मे सहज ही इधर-उधर भी नही होता। नीलू सदा ऐसा ही है।

साझ की लाली धुमैली होती जा रही है। पीपल की फुनगी पर सिदूरी आसमान की आभा पडी है। पेड के पत्ते अब ठीक हरे नही लग रहे। खैर, पत्तो की हरियाली गयी। वही उतनी-सी हरियाली ही तो यहा से दिखती थी। उसके सिवाय दिखता है एक टुकडा नीला आकाश—लोहे के सीखचो के अदर से—लोहे के तारो के टोस्टर मे एक स्लाइस पावरोटी जैसे, सेल के बाशिदे के लिए वैसा ही वास्तव,—सी क्लास कैदी के डाइट से तृप्ति कर। और दिखता है, जेल-गुमटी का ऊपर का हिस्सा, उसकी दीवार मे बड़े-बडे अगरेजी हरूफो मे लिखा है—'पूर्णिया सेट्रल जेल, बिहार' आसमान का वही टुकडा मेरा एकात अपना है, वह तो मेरी खास अपनी चीज है। जब तक दिखा, उस स्वच्छ नील रग को देख लिया है। इस तरह, मेरी तरह, आसमान के ठीक उस अशभर को किसी और ने पाया है क्या ? मेरा नीला आकाश पल-पल रूप बदल रहा है। सिदूरी रग बैगनी हो गया, देखते ही देखते धूसर हो रहा है, और अभी-अभी गाढे अंधेरे मे डूब जायेगा। ऐसे वैचित्र्यमय रस के उत्स को जेल के साहब ने एक सर्वहारा कैदी की निजी सपत्ति क्यो बनने दिया है, मै सोचकर ठीक नही कर पाता। शायद वे नही जानते—जान जाये तो शायद कल से ही राजमिस्त्री 'कमाड' के कैदियो को मेरे सामने की दीवार को और ऊंचा करने के काम मे लगा दिया जायेगा। हुक्म दिया जायेगा—'और ऊचा, और जरूरत पडे तो आसमान तक भिडा दो।' उस पेड की हरियाली, आसमान के उस टुकड़े के सिवा वहा से जो कुछ नजर आता है, वह सिर्फ लोहा, ईट और सीमेट—सीमेट, ईट और लोहा। वे आखो को लुभाते नही, महज नजर को बाधा देते है, उसे छिटका कर लौटा देते है। उस सब्ज़ और नीले के सिवाय

जिस किसी भी रंग को देखता हू, सब रूखा और कठोर लगता है—आखो को पीडा देता है। सेल की चूना पुती दीवारे, वे भी बडी निर्जीव, बेहद पाडुर। पता नही, कब से उनकी पुताई नही हुई ! दीवार मे तमाम तरह-तरह के दाग—थूकने के दाग ही ज्यादा—कैसा तो राख-सा रग, शायद मुझसे पहले के किसी बाशिंदे को सिपाही लोगो ने खैनी खिलाई थी। वह कब का सब कुछ छोड कर अजाने देश को जा चुका। छोड गया है दीवारो पर सिपाहियो के प्रति अहसान-मद होने की छाप।

कोई बात करने वाला नही। लिहाजा सेल के बाहर के जेल-जगत से नाता कान से। बोलने की गुजाइश मात्र वार्डर से है—वह भी अच्छा नही लगता। चारो तरफ दीवार। जिधर ताको, दीवारो से टकराकर निगाह लौट आती है, मगर सदा कान खडे किये रहता हूं, कहीं बाहर से कुछ सुनाई दे जाय । सोलह कदम लबा दस कदम चौडा कमरा। सामने की ओर लोहे के मोटे सीखचो का दरवाजा। दक्खिन की तरफ की दीवार में छत के करीब छोटा-सा रौशनदान। उसके नीचे, फर्श से सटा एक हाथ चौडा, डेढ हाथ लबा लोहे का मोटा पत्तर दीवार पर ठुका। उसमे कुछ सूराखे। इसकी क्या जरूरत है, नही जानता—शायद हवा आने के लिए ! या शायद इन्ही सूराखो से बाहर का वार्डर सुन पाता हो कि कैदी क्या बोल रहा है। सामने के सीखचो वाले दरवाजे के पास तो एक वार्डर रहता ही है—कैदी क्या कर रहा है, नही कर रहा है, यह तो वह साफ ही देख पाता है। फिर भी यह इतजाम क्यो है, नही कह सकता। कमरे मे असबाब कहने को अलकतरा पुते मिट्टी के दो बर्तन (जेल की भाषा मे 'टोकरी') एक कोने मे धरे है। उस कोने का फर्श चिकना सफेद है—वृत्त की चौथाई आकार का। सेल के बाहर रौशनदान वाली दीवार के पास से एक चौडा रास्ता है, पक्का। वह रास्ता वृत्ताकार मे जेल के सभी वार्डो को घेरे हुए है। इस रास्ते के उस पार जेल के अस्पताल का प्राचीर है। इस रास्ते से कितने ही लोगो की आमद-रफ्त है—कितने कैदी, वार्डर, डाक्टर, कपाउडर, ठेकेदार, अफसर, मिस्त्री—और भी कितने लोग। दिन मे भीड-भरे मुफास्सल शहर के रास्ते-सा लगता है। और यह विराट पूर्णिया सेंट्रल जेल शहर से कम किस बात मे है ? आम तौर से यहां प्रायः पच्चीस सौ कैदी रहते है। और अभी, उन्नीस सौ तैंतालीस के मई महीने मे साढे-चार हजार ! और ज्यादा क्यों नही हो रहा है, यही आश्चर्य है। खाना नसीब नही

होने से राह-बाट मे मरा पडा रहेगा—मगर अपने मुल्क का आदमी ऐसा कुछ नही करेगा कि उसे जेल मे जाना पडे। एक बार इनकिलाब जिदाबाद का नारा बुलद करने से या हलवाई की दूकान से मुट्ठी भर कुछ उठा लेने से अगर छे-एक महीने के लिए अन्न-पानी और सर छिपाने के लिए जगह का बदोबस्त हो जाय तो भूखे मरने की क्या पडी है ''साढे-चार हजार किसी शहर मे पाच हजार की आबादी होते ही वह म्युनिसिपैलिटी मे गिना जा सकता है। जेल भी गोया एक छोटा-मोटा शहर है। इस शहर का नाम 'लौहग्राद' हो तो बडा अच्छा हो। ध्वनि की झकार से सुनने मे ठीक लेनिनग्राद-सा लगे। लोहे के पत्तर के उन छेदो की ओर कान लगा कर बैठा रहता हू। आदमी के गले का स्वर इतना मीठा लगता है! जेल की पालिटिक्स, जेल के बाहर की पालिटिक्स—यहा बैठकर सब कुछ जाना जा सकता है। सुपरिटेडेट से जेलर बाबू की नही पटती, हेड-जमादार को जेलर बाबू 'आप' कहते है या 'तुम', जापानियो के युद्ध-कौशल की बात, कैदियो की तादाद बढ जाने से कितनो को रिहा कर दिया जायेगा (जेल की भाषा मे 'छटैया), बर्मा के जेल स्टाफ आपस मे एकजुट होकर बिहारी जेल-कर्मचारियो को धसाने की कोशिश कर रहे है—ये बाते, और भी कितनी बाते उड़कर कानो मे आती। उस दिन राजनीतिक कैदियो पर लाठी-चार्ज होने के बाद स्ट्रेचर कितनी बार अस्पताल आया-गया, इसका लेखा यही बैठकर लगाया गया था। लोहे की झन्-झन् आवाज से ही समझ जाता कि जो कैदी जा रहा है, उसे 'बार फेटर्स' की सजा (स्थानीय भाषा मे डडा बेडी) मिली है, उसने शायद किसी जेल कर्मचारी का हुक्म नही माना था।

उफ्, मच्छर! साझ होने के बाद खैर है भला? उस दिन सुपरिंटेडेंट ने आकर पूछा था, कुछ जरूरत है या नही। यानी जो मागोगे, सभव होगा तो दूगा। बचपन से ही सुनता आया था कि फासी के मुजरिम को ऐसा पूछा जाता है और ज्यादातर लोग अच्छा खाना-वाना मागते है। आखिर नये सुपरिटेडेट ने मुझसे भी ऐसी मिन्नत की उम्मीद की थी क्या? मुझे बड़ा लोभ हो जाता था कि एक मच्छरदानी की कहू। कुछ दिन आराम से जो ही सो लिया जा सके। लेकिन कहते वक्त मैं कह नही सका। आत्मसम्मान में कैसी तो चोट लगने लगी! कहा, 'शुक्रिया। मै बडे आराम से हू। किसी चीज की जरूरत नही।—' वार्डर ने बाद मे मुझे बताया था—उड़ीसा के किसी करद राज्य के दो 'सुराजी' बाबूओ को इसी

जेल मे फासी पडी थी——एक तो आपके इसी सेल मे था, दूसरा दो नबर मे। उन लोगो ने 'साहब' को मारा था——एक बारगी जान से। पाच साल की बात है। उन लोगो ने फासी के पहले दिन मुर्गी के काफी अडे भून कर खाये थे। उसके बाद रात मे 'इनकिलाब जिदाबाद' और जाने क्या-क्या नारे लगाते रहे। अतिम क्षण तक वे लोग नारे लगाते रहे। उस रात कोई कैदी सो नही पाया। जो चीज खाने की ख्वाहिश होती हो आपने भी माग क्यो नही ली।

वार्डर की बात का अविश्वास नही किया, कितु उसका उपदेश जी को नही जचा। ये वार्डर अशिक्षित है। मौका पाते ही चोरी करते है। कैदियो पर रौब गालिब करते है। कमजोर चित्त वाले कैदियो पर अमानुषिक अत्याचार करते है। मगर जरा सख्त किस्म के कैदियो से सम्हल कर चलते है। ये सरल स्वभाव के है——बातो का दाव पेच नही समझते——सौजन्य से कोई वास्ता नही। शिष्टाचार के नाते सुपरिंटेडेट आदि सभी मेरे सामने फासी या फांसी के सबध की किसी बात का जिक्र नही करते। पर ये वार्डर दो-चार बातो के बाद ही फासी की छेड बैठते है। शुरू-शुरू मे कई दिनो तक यह बात सुनते ही कलेजे मे छक से लगता था——खुद को जरा कमजोर-कमजोर सा लगता——कैसा तो अनमना-सा हो जाता था मैं——फांसी के सारे दृश्य मेरी निगाहो के सामने तिर आते थे। शायद हो कि मेरी फासी का हुक्म रद्द हो जाय, यह कहकर मन को दिलास देना पडता था। कुछ दिनो मे ही इस सब से अभ्यस्त हो गया। अब उस बात से मन मे कुछ भी नही होता। सेल के ठीक पश्चिम मे ही फासी की जगह है। वार्डर आ-आकर बताता, आज फासी की टिकठी मे काला रग लगाया गया, आज मेरे बजन के बालू के एक बोरे को बाध कर रस्सी की मजबूती की जाच की गयी। और भी जाने कितना क्या।

मेरे मन की गति भी गजब ! काले रंग की सुनते ही सोचा, ब्लैक जापान या अलकतरा ? वार्डर से पूछा, अलकतरा क्या ? रस्सी काहे की है ? सन की ? आप ही अपने मन पर व्यग्य करने को जी चाहता। अभी भी क्या यह जानने की मुझे ज्यादा जरूरत है कि रस्सी काहे की बनी हुई है ! अपने मन की यह अद्भुत गति मै सदा गौर करता रहा हू। प्रयोजन के बजाय बिना प्रयोजन के विषयो के प्रति ही मेरा आकर्षण ज्यादा है। इम्तहान के पहले सभी प्रश्न हल किया करते है—— और मेरे वे प्रश्न तैयार न भी हों, तो शायद हो कि मेरा मन उनसे सबधित किसी तुच्छ बात पर लगा है। ज्यामिति के जरूरी थ्योरम की अपेक्षा मेरा मन

अप्रयोजनीय एक्स्ट्रा पर ज्यादा लगा होता। इम्तहान के पहले दिन तक फुटनोट, भूमिका आदि ही देख रहा हू। साल के शुरू से ही ऐसा लगा किया कि जरूरी चीजे तो फिर पढनी ही पडेगी, अभी उनके आनुषगिको को पढ लिया जाय। और ऐसा हुआ कि आखिर तक असल की पढाई ही नही हुई।

काशी विद्यापीठ मे पढते समय की एक रात की बात याद आती है। मै और सकलदेव रात जगकर पढ रहा था। एक खूराक सुंघनी लेकर आधी रात को वह मुझे 'आज' की सपादकीय टिप्पणी पढकर सुनाने लगा। काशी विद्यापीठ मे पढ़ते समय उस बार, जब पुलिस ने मुझे राजनैतिक हत्याकाड के सदेह मे गिरफ्तार किया, तो मुझे अपने आप फासी की बात याद आती थी। आगे चल कर सबूत नही मिलने पर मुझे छोड दिया गया। वास्तव मे उसमे मेरा हाथ नही था। परतु फासी पडने का मुझे अजीब खौफ था। अब सचमुच ही फासी का हुक्म हो गया है, इसलिए शायद डर कम हो गया है। डर दूर से ही ज्यादा होता है। जो जेल मे नही आये है, वे जेल आने को ही कठिन समझते है। लेकिन आ जाने पर डर जाता रहता है।

ऊ! मच्छरो के मारे बेहद तकलीफ होती है। पता नही क्यो, हमारे गाधी आश्रम के मच्छर इनसे ज्यादा जोर से भनभनाते है, आकार मे भी बडे होते है, पर उनके काटने से जलन कम होती है। नीलू होता तो वह जरूर मेरा मखौल उड़ाते हुए कहता—'ये आश्रम के मच्छर है न—अहिंसक तरीके से लहू पीना सीखा है।' मा होठो की हसी दबाकर चेहरे पर खीज का भाव लाती हुई कहती—'खूब, अच्छा, हो चुका, अब आप जाइये तो।' मा के उस समय का मुखडा मै साफ देख पा रहा हू मानो। आखो के कोनो में दो-दो लकीरे पडी है।··· मा के मन मे सदा एक भय-सा देखा करता—नीलू शायद पिताजी को ठेस लगाते हुए कुछ कह बैठा! गो कि मैने उनकी यह कोशिश भी बराबर देखी कि वैसा कुछ कहने पर बात बाबूजी के कानो तक न पहुचे। नीलू सदा का साफगो है। उसके चलते वह कितनी बार झमेले मे पडा है। पर दूसरे लोग उसकी बात का कुछ सोच सकते हैं या उस पर नाराज हो सकते है, इस बात की वह सदा लापरवाही करता रहा है। महीन बाते उसके जी पर असर नही डालती। नीलू का मन और नजरिया स्थूल है। उसके लिए कलम और कूची नही, वह समझता है शारीरिक श्रम की बात और उसके हाथो सोहती है इस्पात की तलवार, परशुराम की कुल्हाड़ी जैसी, निष्करुण

और कर्त्तव्यनिष्ठ। नीलू ने एक बार कहा था कि मुझे कविता अच्छी नही लगती। मैने कहा था, 'मैं ऐसी कविता लिख दूगा, जो तुम्हे जरूर अच्छी लगेगी।' और मैने धनिक-श्रमिक आदि की एक लाठी मार कविता लिख दी थी। सानेट। नीलू को बहुत अच्छी लगी थी। कविता याद नही है, उसकी एक पक्ति भी नही। उसे बधवा कर नीलू ने आश्रम मे टाग रखा है—मा के कमरे मे।

याद आ रहा है, मा बरामदे मे बैठी है। सर हिलाते हुए नीलू की तरफ ताक कर, दातो की जड मे जीभ लगाकर उन्होने एक आवाज की—चिक। फिर बोली, 'मरने पर भी आदत नही जाती।' नीलू ने आखो से मेरी ओर इशारा किया। मतलब कि, 'भैया, अब!' हम दोनो ने जो सोचा था, ठीक जो सोचा था—मा ने सस्कृत की एक पक्ति कही—'अगार शत धौतेन मलिनश्च न. मुझते।' हम दोनो ही हस पडे। मां बेदाग 'मलिनश्च' कह गयी। हम दोनो की हसी से मा समझ गयी कि भूल हो गयी है। बोली—'खाक याद रहता है!' नीलू ने कहा—'तो फिर बोलने की जरूरत क्या?' मा की ये भूले हमे कठस्थ है। बेशक नीलू ने दिखाया है, नही तो मै तो शायद ख्याल भी नही करता। मा कहती है—'दया-दक्षिणात्य'। मैने एक दिन उनसे 'दया-दाक्षिण्य' कहने को कह भी दिया था। देखा है, बोलते वक्त मा को यह याद ही नही रहता। बता देने पर वह अप्रतिभ हो जाती है, लिहाजा मै उन की भूल बताता भी नही। नीलू मगर इस पहलू को ठीक नही समझता। औरो की कोई भी कमजोरी, चाल-चलन मे व्यग्य की खुराक उसे सहज ही दिखाई पड जाती है। पर, उसकी बातो से दूसरे को कैसी चोट लग सकती है, इसकी वह सोचता भी नही। बाबूजी से हम सदा दूर-दूर ही रहते आये है। काम-काज की बातो के अलावा दूसरी कोई बात भी खास नही होती। इसलिए बाबूजी तथा आश्रम के दूसरे लोगो के खा-पी चुकने के बाद मै और नीलू मा के साथ खाने बैठता। थोडा-सा दूध हुए बिना मा का खाना नही होता। मा की शायद एकमात्र यही विलासिता है। आश्रम मे तो लोग बहुत रहते है न। और समय-असमय अतिथियो का आना, यह भी लगभग रोजमर्रा की बात है। इसलिए बहुत बार दूध की कमी पड जाती। दूध थोडा है, मा ने मुझे और नीलू को दिया। मैंने हम दोनों के कटोरे से थोड़ा-थोड़ा डाल कर दूसरे कटोरे मे मा के लिए रक्खा। मैने देखा है, ऐसे मौके पर नीलू जरूर कह बैठता— 'दूध हुए बिना मा का खाना ही नही होता।' बात खास ऐसी कुछ नही। मगर मा का चेहरा उतर जाता, मानो रूई छिपी

दुर्बलता जाहिर हो गयी । नीलू को इतनी सारी बाते दिख जाती है पर यह बात नही दिखती ।

मा की तबीयत खराब होती, तो गोया ज्यादा तबीयत खराब है कहने से जरा खुश होती । इसलिए जान-सुनकर ही उनके कपला पर हाथ रखकर कहता, 'ओह, बदन तत्ते तवे-सा जल रहा है, ज्यादा बुखार है ।' नीलू अगर वहा रहे, तो हो-हो हसकर वह धर को कपा देगा ।

मुझे किसी चीज की जरूरत नही है, उस दिन सुपरिटेडेट से यह कहने के बाद मन मे खासी तृप्ति हुई थी—सिर्फ तृप्ति नही, गर्व भी । 'साहब' तो अकेले नही आते, साथ मे जेलर, डाक्टर, असिस्टेट जेलर, जमादार, कई अगरक्षक, वार्डर, मेट, सभी थे, और हा, जो सिक्ख कैदी खाकी राजछत्र लिए साहब के साथ-साथ दौडता चलता है, उसका जिक्र करना तो भूल ही गया । वास्तव मे प्रबल प्रतापी सुपरिटेडेट जेल-साम्राज्य का एकछत्र अधिपति है 'उस दिन उनके प्रश्न का जवाब देने के बाद मै किसी के चेहरे की ओर ताक नही सका । कैसे तो सब गडबड़ हो गया, गोकि अपनी बात का उन पर क्या असर हुआ, यह देखने की ख्वाहिश हो रही थी । अपने को नाटक के खासे नायक-सा लग रहा था । ' बचपन मे सतोष-दा की जबानी स्वदेशी युग की कहानी सुनकर कितनी बार आखे भर आयी थी अमर मृत की वह स्मृति मेरी आखो मे नाच गयी । 'अब तग मत करो, शांति से मरने दो ।' बदूक की गोली से मरते हुए शहीद की उस बात से मैने अपनी बात की तुलना की थी । वह कहानी सुनकर मेरी आखो मे आंसू आ जाते और मेरी इस बात ने क्या सुनने वालों के मन पर कोई प्रभाव नही छोडा ! शायद नही छोड़ा । ये लोग हर रोज यह देखा करते है । ये उम्र वाले है, दुनिया को समझते है—बालको जैसे भावुक नही है । लोग तारीफ करे, मेरी कहानी कहे, मैं मानो यही चाहता हू—यह मेरे मन की दुर्बलता है । कभी-कभी अपने ऊपर सदेह हो आता, शायद देश के भविष्य की अपेक्षा मैं अपने नाम के भविष्य के लिए ज्यादा जागरूक हू । सच ही क्या ! एक दिन के लिए मैने अपने को जीवन के स्थूल उपयोग मे गर्क नही किया । देश के लिए जिसे अच्छा समझा उस काम को करने मे जरा भी नही हिचका-झिझका । अपने व्यक्तिगत सुख या भविष्य के बारे मे नही सोचा । उसके बदले मैं अगर यह चाहू कि देशवासी मेरे सबंध में प्रशसा की एक बात कहें, तो मेरी यह आकाक्षा क्या अनुचित है ? जेल-डाक्टर ने अपने घर में

बेशक मेरी बात की चर्चा की होगी। असिस्टेंट जेलर ने, हो सकता है, उसी वक्त अपर डिवीजन कैदियो के वार्ड मे जाकर इसकी चर्चा की हो। बाबूजी भी तो उसी वार्ड मे है। उनके कानो तक भी यह बात जरूर पहुचेगी। वह निर्विकार आदमी है, बाहर से देखकर उनके मन की बात को भाप सकने का उपाय नही। अकेले मे बैठकर चरखा कात रहे है। आखो के कोने की दो बूद आसू से धागा धुधला हो आया। न, बाबूजी से इतनी व्याकुलता की उम्मीद नही करता। शायद ही कि जरा अनमने हो जाये, चरखा कातने की तन्मयता जरा देर के लिए कम हो जा सकती है—धागा दो-एक बार ज्यादा टूट सकता है। बस अपने मन मे सदेह होता है—आशका होती है कि जैसी आशा की थी, जेल स्टाफ के मन मे वैसा भाव नही जगा सका। बलपूर्वक नही बोल सका, आखे झुका ली। शायद हो कि उन्होने सोच लिया, मेरा मन सरल नही है। मेरा हाव-भाव गोया सरकार के खिलाफ मेरे रोष दिखाने जैसा लगा। वे लोग रात-दिन चोर, डाकू, खूनियो के बीच काम करते है। इससे उनके मन की भावुकता और बहुत सारी कोमल वृत्तिया सूखी जा रही है। राजनीतिक कैदियो को वे चोर-डाकू से कुछ अलग नही समझते। उनके व्यवहार मे जो थोडा बहुत फर्क है, वह या तो झमेला हो जाने के डर से है या स्वार्थ की खातिर। जो डाक्टर डिवीजन थ्री के राजबदियों को बीमार होने पर भला बुरा कहते है, 'पेचिश है, दवा दो' कहते ही कहते है, 'बट डोन्ट एक्सपेक्ट दही' यानी अगर दही की उम्मीद से जान कर यह बीमारी, बुलाई हो, तो निराश होना पडेगा—वही डाक्टर ऊची श्रेणी के राजनीतिक कैदियो के सामने कैसी भीगी बिल्ली बने रहते है। महज दो ही साल पहले की तो बात है, व्यक्तिगत सत्याग्रह के समय जेल के इन्हीं कर्मचारियो को काग्रेसी नेताओ के आस-पास काम या बिना काम के मडराते और खुशामद करते देखा है। उस समय भी उनका यह ख्याल था कि बिहार मे फिर काग्रेसी मंत्रिमडल बनेगा और आज ·

इन जेल-कर्मचारियो को उस दिन अपनी बात और व्यवहार से क्या मै प्रभावित कर सका ? उससे तो बल्कि नाटकीय ढग से मैने जोर गले से कहा होता—'हूं; जूते मारकर गैया दान ! तुम लोगो से मैं दया नही मागता' या ऐसा ही दूसरा कुछ कहा होता तो शायद वे ज्यादा प्रभावित होते। कुछ नाटकीय भाव जरूर दिखाता, पर जो चाहता हू, वही होता। दो नबर वार्ड में अक्तूबर के लाठी-चार्ज के बाद

माथा फटे हुए शुकदेव का भाषण याद आता है—पडे-पडे बिना सास लिए हुए थियेटर के मरते हुए के दृश्य की तरह—'तुम लोगो को शर्म नही आती'—इन शब्दो से शुरू। अभी भी कानो मे साफ गूज रहा है। पुरस्कार-वितरण के समय स्कूल मे एक बार मैने 'मेघनाथ वध' कविता की आवृति की थी। असिस्टेट हेड-मास्टर काली बाबू मुझे सिखा रहे थे—'यहा तक लेटे-लेटे केहुनी पर भार देकर कहना—' उसके बाद बिलकुल लेट जाना और आख बद करके एक सास मे धीरे-धीरे कहना—'तेरा यह कलक दुनिया मे कौन मेटेगा कलकी · !' शुकदेव का भाषण पारिपार्श्विक अवस्था से बिलकुल फिट नही बैठा। लेकिन मैने गौर किया था, उसकी वह विसदृश्यता कुछ ही लोगो की नजर मे आयी थी।

'बाबू, विजै भैल-वा ?' यानी खाना हो चुका ?

मेरा ध्यान टूट गया। देखा, सामने वार्डर साहब। शब्दो मे जरा हमदर्दी की गध थी मानो। देर हुई, बाहर रोशनी रख गया है। अब तक उसका ख्याल नही था। समझ मे नही आता कि रोशनी को सेल के अदर देने से उनका क्या नुकसान होगा। मिट्टी का तेल छिडक कर आत्महत्या करना बहुत आराम का नही है। फिर भी इन्हे हिम्मत नही होती। होगी भी नही। इनका हर नियम बहुत अनुभव से बना है। सिर्फ ऐसे ही एक आपाततुच्छ नियम के कारण ही पिछले साल जेल म्युटिनी कामयाब नही हो सकी। गेट के वार्डर को मारकर कैदियो ने चाबियों का गुच्छा पा लिया था। लेकिन चाबियो के उस बहुत बडे रिग मे दो सौ से भी ज्यादा चाबिया थी और उनमे से ज्यादा बेकार की ही थी। जेल का यह कायदा है, रिंग मे बहुत सारी बेकार चाबिया रखी जाती है। सो, कैदियो को चाबियो का झब्बा तो हाथ लग गया, पर वे यही नही ठीक कर पाये कि ताले मे कौन-सी कुजी लगेगी। कोशिश करते-करते पाच मिनट बीत गये। तब तक पगली (अलार्म) बजी—बदूक, सिपाही, फौज आ धमकी। उसके बाद ···

सिपाही जी के प्रश्न का उत्तर न देकर पूछा, 'क्या बज रहा है ?'

सिपाही जी ने कहा, 'दफा बदली का टैम हो गया।' यानी इसकी जगह पर रात की ड्यूटी वाले वार्डर आ गये। गुमटी पर (सेंट्रल टावर) कितने कैदी बद हुए, आज नये कैदियो का आमद क्या हुआ, कितना खर्च यानी। छूटे कितने—इन सबके जोड-घटाव के बाद कुल मिला कि नही, इसका लेखा-जोखा हो रहा था। देखा, सिपाही जी अभी तक अपना सवाल भूला नही है। फिर पूछा, 'भोजन नही किये ?'

मैने भात नही खाया है, यह उसने देख लिया है। मै बोला, 'नही, भूख नही लगी है।' वह बोला, 'दही है। थोडा-सा भोजन कर लिया जाय।' निम्न श्रेणी के राजबदियो को हफ्ते मे एक बार दही मिलता है—पीतल की थाली मे पतला महुआ (मक्खन निकाला हुआ) दही, उसमे भी जली-जली बू; —कांग्रेस मन्त्रिमडल का चलाया हुआ नियम—तीसरे दर्जे के राजनीतिक कैदियो के रोज के मजाक का विषय। लक्ष्य कांग्रेस के ऊचे अधिकारियो के प्रति—उन्होने सारे राजनीतिक कैदियो को एक ही श्रेणी क्यो नही बनाई ? यह ऊची और नीची श्रेणी के राजनीतिक कैदी का क्या मतलब ? उच्च श्रेणी के कैदियो को दस आने खूराकी। निम्न श्रेणी को साढे तीन आना—इनके बीचो-बीच राजनीतिक कैदियो की एक श्रेणी बनाते तो क्या होता ? निम्न श्रेणी के राजनीतिक कैदियो को अपने पैसे खर्च करने का अधिकार दिया जाता तो क्या होता ? बाहर से उनके लिए खाने को कोई चीज आती, उन्हे वह चीज मिल पाती तो उच्चाधिकारियो की कौन-सी पकी फसल पर मोय चल जाता। महीने मे दो बार चिट्ठी लिखने देते तो कौन-सा पुराण अशुद्ध हो जाता। अपने पैसे से बीडी-सिगरेट पीने की छूट दी गयी होती तो उनका क्या बिगड जाता ? ऐसी और भी कितनी शिकायते।

ऊची गुमटी पर से जलद मद्र स्वर की रागिनी गूजी—'बोलो रे एक नबर। बोलो रे दो नबर। बोलो रे ती-ी-न नबर ! बोलो रे चा-ा-र नबर ! बोलो रे ? ? पाच नबर। बोलो रे-ऐ छे-ऐ -न-अ-बर। बोलो रे नया गोल ! बोलो रे औरत किता आ-आ !'

सभी वार्ड से जवाब नही आया। शायद हो कि मेरे सेल तक वह आवाज नहीं पहुची। गुमटी के ऊपर का सिपाही भी मानो सभी वार्ड से जवाब की उम्मीद नहीं रखता। उसका काम मशीन जैसा है, ग्रामोफोन की तरह एक बार चीख जाना। हर वार्ड से जवाब आना चाहिए कि कहा कितने कैदी बद हुए। गुमटी के नीचे के कर्मचारियो ने इसका टोटल पहले ही कर लिया है—यह चिल्लाना एक नियम भर है। सभी वार्डर मेट या 'पहरा' इसे जानते है।[1] इसीलिए जवाब देने का बेकार श्रम करने को वे राजी नही होते। ठन्-ठन् करके घटा बजा। 'गिनती-मिलान' हो गया।[2] नौ बज गये। कल का गिनती-मिलान सुनने की नौबत नही आयेगी। गुमटी

---

[1]कानविक्ट ओवरसियर की दो श्रेणी।

[2]टोटल मिल जाना।

की ऊपर वाली बत्ती बेशक पाच सौ पावर की होगी। ब्लैक आऊट की वजह से उसके ऊपर काला ढक्कन। लेकिन ऐन उसके नीचे बास की चटाई का बना हुआ बहुत बडा एक छाता—वार्डन को धूप और बारिश से बचाने के लिए। ब्लैक आउट के लिए गुमटी पर काला रग-सा पोता गया है। पर उस छाते पर पडकर चारो ओर इतनी रोशनी फैल रही है कि लगातार ज्यादा देर तक ताका नही जाता। इस छाते ने ब्लैक आउट की सारी कोशिशो को बेकार कर दिया है। गुमटी और इस छाते को देखते ही काशी के अहिल्याबाई-घाट का स्मरण हो आता है। घाट की उस गुबद पर हम लोगो का रोज का साझ का अड्डा जमता था सिंधेश्वर शुकुल ने उस पर से एक दिन पान की पीक फेकी थी, उसके लिए जो हलचल मची कि पूछिये मत! गजब का साहस था सिधेश्वर मे। मैने देखा है कि उसे मरने का जरा भी डर नही। वह इस लापरवाही से फासी की बात करता कि सुनकर मुझे रश्क होता। मैने समझा था कि वे लोग मुझे अपनी जमात मे शामिल करना चाहते है, मगर मै उनकी इच्छा पूरी नही कर सका। अपने अदर जब टटोल कर देखता हू, तो कभी-कभी लगता है कि मुझ मे हिम्मत की कमी थी, इसीलिए मै इन सबकी मनोवाछा पूरी नही कर सका, इसलिए नही कि उनका कार्यक्रम मुझे पसद नही था, परतु मेरा वह भय आज कहा गया? सुना है, उम्र बढने के साथ लोगो का मौत का डर बढता है। मेरे लिए इस नियम का अतिक्रम हुआ क्या? अब सिधेश्वर से मुलाकात होती तो कितनी बाते होती। बहुत दिनो के बाद उससे हठात् रामगढ काग्रेस मे भेट। काग्रेस मिनिस्ट्री के समय बरेली जेल से उसकी रिहाई हुई—मेल डकैती के जुर्म मे उसे सजा हुई थी—लखनऊ के पास की उस जगह का नाम नही याद आ रहा, पिपराहा या क्या तो नाम था—

नया सिपाही कब आया, पता नही था। सुध तब आयी, जब उसने पूछा, 'बाबूजी, बीडी पीजियेगा?'

आज ये वार्डर तक मुझ से घनिष्ठ होना चाहते है, यदि कोई उपकार करते बने, यदि मुझे कुछ प्रसन्न कर सके। यह सहानुभूति स्वतः स्फूर्त है, इसमे कृत्रिमता नही। उसकी सहानुभूति के दान को नही लेने की वजह से उसे शायद दुख-सा हुआ। जरा किंतु-किंतु करके उसने अपनी ड्यूटी पूरी कर ली। ताले को एकबार जोर से झझोर कर उसने खटाग से आवाज की? उसके बाद हडहडा कर सीखचो के दरवाजे को हिलाया। यह काम उसे पहले ही करना चाहिए था, पहले के पहरूये

के रहते ही मतलब यह देखना था, दरवाजा ठीक से बद है या नही, हुडका ठीक-ठीक लगा है या नही। पहले के वार्डर से साठ-गाठ करके कैदी ताले को लटकाये रख सकता है, और—कैदी के भाग जाने से पहले वार्डर की कोई जिम्मेदारी नही होगी, क्योकि उसने बाद वाले वार्डर को समझाकर जिम्मा दे दिया। इसी के लिए इतनी चौकसी, यह इतजाम। परतु पहले का वार्डर चला गया है। घर लौटने वाला बैल—इतनी देर का धीरज नही रहता। कसूर भी क्या उसका, दिन मे लगातार आठ घटे ड्यूटी बजायी है।

सिपाहीजी कुछ मायूस हो गया है, यह सोचकर मैंने उससे बात की। पूछा, 'उधर के डिगरियो (सेल) का काम चुका आये क्या ?'

बोला, 'जी। दस, नौ, सात, तीन और एक नबर, इन पाच डिगरियो मे मुजरिम है। आज दस नबर से ही शुरू किया है। वार्ड का सिपाही तो जाने कहां बाहर बैठा गप्पे मार रहा है। मुझ पर और तीन नबर सेल के सिपाही पर ही गिनती का भार है।'

'कडेम्नड सेल्स' मे पाच कैदी है। जेल की भाषा मे इस वार्ड का नाम फासी सेल है। 'कडेम्नड सेल' सुनते ही मुझे लगता है, गोया ये सेल इजीनियरिंग विभाग द्वारा कडेम्नड है, ये कडेम्नड प्रिजनर के लिए है, इसलिए इनका यह नाम पडा है, पहले यह बात मन मे नही आती। नौ और दस नबर सेल मे बम केस के दो कैदी रहते है—अडरट्रायल (विचाराधीन), उन्हे इस सेल मे क्यों रखा है, पता नही। 'फासी सेल' के बीस सेलो के अलावा इस जेल मे और भी चालीस-पचास सेल है। फिर भी इन लोगो को यहा क्यो रखा है, कहना कठिन है। शायद हो कि पुलिस का ऐसा ही हुक्म हो सकता है, पुलिस इन लोगो से स्वीकारोक्ति की उम्मीद रखती हो। इसीलिए दूसरे राजनीतिक कैदियो से इन्हे मिलने-जुलने देने को वह तैयार नही। सात नंबर मे एक पागल रहता है। वह अट-शट बकता रहता है। वार्डर पर नजर पडते ही भद्दी-भद्दी गालिया देता है। नौ और दस नबर सेल के दरवाजे दिनभर खुले रहते है। किसी दिन दोपहर मे मेरे सेल के स्पेशल वार्डर को बीडी, चीनी आदि देकर बदले मे मुझ से दो-चार बातें कर लेते है। शाम को जब उनके दरवाजे बद हो जाते है, वे अपने-अपने सेल से उस पगले को चिढाते रहते है। उसका नाम लेकर पुकारने से ही वह गाली देना शुरू कर देता है। वार्डर बताते है, 'यह आदमी बना हुआ पागल है। ऐसा इन लोगो ने

बहुतेरा देखा है। सरकार इतनी बेवकूफ नही है। रिहाई पाना इतना आसान नही।·· ’तीन नबर मे एक खूनी मुजरिम है। भाई का खून किया है। बडी घिनौनी कहानी है वह। उसके पारिवारिक जीवन का कदर्य, कीचड सना विवरण उसकी स्त्री ने जज साहब के भरे इजलास मे दिया है। हाई कोर्ट मे अपील हुई थी, वह भी खारिज हो गयी। वह मुजरिम दिन-रात सीताराम-सीताराम करता है और भजन गाता है।

वार्डर ने मुझे जो मुजरिम कहा, यह मुझे पसद नही आया। लगा, उसे इससे शरीफ भाषा का व्यवहार करना चाहिए था। बचपन की शिक्षा-दीक्षा, सस्कार ने मुझ पर जो छाप छोडी है, उसे एकबारगी पोछ फेकना मुश्किल है। सच तो, वार्डर ने तो ठीक ही कहा। मुझे मुजरिम नही तो क्या कहे? आज तो जेल मे मै ही सबसे बडा मुजरिम हू। जिसे शीघ्र ही फासी लगने को होती है, वही एक नबर सेल मे रहता है। एक नबर सेल के बाद ही एक दरवाजा है। सिर्फ फासी पडने के वक्त ही इस दरवाजे को खोल कर मुजरिम को फासी-मच पर ले जाया जाता है। बाकी समय यह दरवाजा बद ही रहता है। ‘उस चरम मुहूर्त के पहले उस दरवाजे को एक बार देखने का जी चाहता है। उसके ताले मे क्या जग लगा है?· मुझसे मौत का व्यवधान महज यह दरवाजा है। फिर भी मुजरिम कहने से मेरा मन खिचखिच कर रहा है। बम वाले उन बाबुओ को भी तो सिपाही जी ने मुजरिम कहा, वह तो लेकिन मेरे कानो को कडवा नही लगा! हो सकता है, ‘बम केस का मुजरिम’ इन शब्दो के आदी है। मेरे कान। उन शब्दो के साथ देशसेवक के स्वदेश-प्रेम की बहुत स्मृतिया जुडी हुई है—कम से कम मेरे मन मे। लेकिन ‘फासी का मुजरिम’ सुनते ही मुझे साधारण खूनी-डकैत की याद आ जाती है। इन शब्दो के साथ उन्ही की तसवीर मेरे मन मे अमिट हो गयी है। लगा, मुजरिम शब्द के व्यवहार से सिपाही जी ने मुझे चोर-डकैत के साथ एक कर दिया। शायद इसलिए इस शब्द से मुझे नापसदगी और एतराज है। मन के भीतर वेदना की अनुभूति हुई—एक वार्डर की निगाह मे भी मै पूज्य देश सेवक नही! मैं उससे प्रशंसा की आशा रखता हू, बातो से न सही—कम से कम हाव-भाव मे, अपने त्याग के लिए। मैं प्राणो का बलिदान कर रहा हू, ये इसके लिए कृतज्ञ क्या होगे, कृतज्ञता के बदले सहानुभूति देना जानते है, शहीद के लिए सहानुभूति नही, जो बदनसीब महज कुछ ही घटे और इस लीलामय धरती का उपयोग करेगा, उसके प्रति करुणा ··

मौसी की याद आयी। मौसी को पश्चिम जाने वाली गाडी मे चढाने के लिए नैहाटी स्टेशन गया था। मौसी के सर के बाल छोटे-छोटे छटे, पहनावे मे गेरुआ, गले मे तुलसी की माला। अपनी घर-गिरस्ती से खास कोई वास्ता नही। मठ या आश्रम मे रहती है। नवद्वीप से वृदावन जा रही थी। साथ मे बहुत-बहुत सामान—मूग की बोरी, हरा नारियल, छैने की मिठाई का कनस्तर, धुला तिल। यह सब गुरुभाई-बहनो के लिए सौगात। इन्ही सामानो को गाडी पर चढा देने के लिए मेरा आना। मौसी गाडी पर चढ गयी। मैने वे सारी चीजे कुली के सर से उतार कर गाडी मे रख दी। मौसी ने पूछा, 'सभी सामान चढ गया न ?' मैने एक-दो करके गिनकर बताया, जो, कुल बाईस सामान। कि मौसी की आखो मे लमहे मे आसू आ गये। मै भी अप्रतिभ हो गया। लगा, अजान से मुझसे कोई अपराध हो गया है। आखिर मौसी ने ही मुझे साफ समझाया—रेशमी वस्त्र से ढके उनके स्वर्गीय गुरुदेव के तैलचित्र को मैने 'सामान' गिना। उस समय मौसी का यह मनोविज्ञान मुझे अजीब लगा था,—और आज, मुजरिम शब्द सुनने के बाद अपना मनोभाव देखकर मै चकित हो रहा हू। ··फासी के मुजरिम को मुजरिम न कहना ही आश्चर्य है।

'फासी का मच'—इस शब्द को भी मानो कितने शहीदो की स्मृति की सुवास घेरे हुए है। मगर उसी को 'टिकठी' कहो, खूनी मुजरिम की याद हो आयेगी। और, सबसे आश्चर्य की बात, मन की आखो देखता, एक लाश जिमनास्टक के होराइ-जेटल बार पर झूल रही है—अवश हुए दो पाव शून्य मे चक्कर खाते हुए लटक रहे है—धीरे-धीरे, एक ही गति से,—उत्तर, उत्तर-पूरब, पूरब, पूरब-दक्खिन, दक्खिन, दक्खिन-पच्छिम, दक्खिन, पूरब-दक्खिन, पूरब, उत्तर-पूरब, उत्तर ·· किसी अगरेजी उपन्यास का पढा एक दृश्य।

वार्डर ने बताया, उसने दस नबर सेल से ड्यूटी आरभ की है। यानी आज ग्यारह से बीस नबर सेल खाली है। जो कैदी जेल के नियम और शृखला को तोडते है, जेल अधिकारी आम तौर से उन्हे सेल की सजा देते हैं। वे लोग सेलो मे रहते हैं। सेल मे कुछ दिन अकेले रहना पडेगा, यही सजा है। कुछ दिन का एकातवास कौन-सी सजा है, मैं तो समझ नही सकता। वार्डर के शोर-शराबे से बीच-बीच मे कुछ दिन निर्जन में रहना, बुरा लगने की बात नही। उन सेलो का व्यवहार भी खूब होता है। आज ये सारे खाली कैसे हो गये ? ऐसा तो कभी नही

होता। हो सकता है, जान कर ही उन लोगो की जगह बदली गयी है,—शायद हो कि सुपरिंटेडेट ने उनकी सजा माफ कर देने का निदेश दिया हो। शायद वह यह चाहते हो कि आज रात 'कडम्ड सेल' मे जितने ही कम लोग रहे, उतना ही अच्छा। हो सकता है, आज यहा रहने से उनके मन पर कोई प्रतिक्रिया हो सकती है। इसलिए जिन्हे यहा से हटाया जा सकता था, उन्हे हटा दिया गया है। कर्ता की इच्छा से कर्म। तेरह नबर के उस कोढी कैदी को भी क्या जेनरल वार्ड मे ले जाया गया है? अलग-अलग सुपरिंटेडेट का अलग-अलग ख्याल। मेजर फिल्टपस को देखा, वह औरतो की तस्वीर वाली कोई किताब जेल के लिए पास नही करते थे। सुना है, वह मानसिक रोग के विशेषज्ञ थे। उनका ख्याल था, जो लोग कुछ दिनो से जेल मे है, नारीदेह की प्रतिकृति उनके मन पर तरह-तरह की प्रतिक्रिया ला सकती है। उस बार इसी बात पर हजारीबाग जेल मे रामखेलावन बाबू से उसकी कितनी चखचुख हो गयी! उनके बडे शौक की उस साल की 'रायल एकेडेमी' वाली पुस्तक उन्हे कैंची से दस-पद्रह पन्ना कटी हुई हालत मे मिली थी। उन तस्वीरो के पाने से उनके मन पर क्या प्रतिक्रिया होती, यह शायद हम नही देख पाते, लेकिन उनके नही पाने से जो तात्कालिक प्रतिक्रिया हुई थी, वह हमने भी देखी थी। और फिलपटस साहब ने भी देखी थी। नतीजा यह हुआ कि उन्हे चौदह दिन निर्जन सेल की सजा हुई।

बेहद गर्मी। सेल मे हवा आने-जाने की राह नही। वैशाख बीत गया, अभी शायद सेल के बाहर भी ऐसी ही गर्मी है। सीखचा पकड कर दरवाजे के पास फर्श पर बैठ गया, यदि बाहर की कुछ ठडक नसीब हो। कमरे की रूधी हवा मे सर कैसा तो भारी-भारी लगता। मैने देखा था, ऐसे मे सीखचो मे से नाक-मुह को जहां तक बाहर निकाला जा सके, बाहर करके बाहर की खुली हवा का सेवन करने से सर का वह भारी-भारी लगना घटता है। पहले यह पीडा और ज्यादा होती थी। इधर कुछ दिनो से नहाते वक्त वार्डर थोडा-सा सरसो का तेल दिया करता है। पता नही कहा से उसने मक्खन के एक पुराने डब्बे मे थोडा-सा तेल जुटाया है। फासी के मुजरिम के प्रति यह अनुकपा—शुरू मे नही लेने की सोची थी। लेकिन बिना कुछ बोले जब उसने हाथ मे उडेल दिया, तो एतराज नहीं किया। शायद माथे की पीडा की सोच, या बिना कुछ बोले जो सिपाही जी ने तेल डाल दिया, यह देखकर। वाक्-सयम से इन्हे कोई वास्ता नही। दिन मे आठ घटे की

ड्यूटी और रात मे दो घटे की। बडा एकरस है इनका जीवन । सो, ड्यूटी के समय बात करने से एकरसता का कुछ लगाव होता है। उसने एक शब्द भी नही कहा, और फिर लगाने के लिए सरसो का तेल दिया—इत्ते सरसो के तेल की ममता छोड दी ! आश्चर्य ! जो भी चीज मिलती है, ये जेल से चुराते है। कपडा धोने का साबुन, भुना चावल, मूगफली, आलू, नारियल की रस्सी, लोहे की काटी, लालटेन की ठेपी आदि कोई भी चीज इनके हाथ से बच नही पाती। ऊची श्रेणी के राजनीतिक कैदियो के चाय के प्याले से लेकर अगोछा तक, सभी चीजे रात मे चोरी हो जाती है, जब वार्डरो के सिवाय जेल के सभी लोग वार्डो मे तालाबद रहते है। चोरो के कमरो मे ताला बद रहता है, मगर चोरी बद नही होती। ऐसे वार्डर की इस उदारता ने मुझे विह्वल कर दिया था। और भी हैरान रह गया, उस दिन जब उस पगले कैदी से उसने मेरे कपडे फिचवा दिये। नहा कर सूखा इजेर पहना ही था कि एक प्रकार से जबर्दस्ती ही उसने मुझे सेल मे दाखिल कर दिया। आपत्ति करने तक का अवकाश नही दिया। उसके बाद अपने हाफपैंट के बेल्ट को जरा ढीला करके पीछे की ओर कमर के नीचे हाथ डालकर एक बीडी निकाली। वह बीडी पगले को दी और अपनी सलाई से उसे सुलगा दिया। समझ गया, यह उसका कपडा फीचने का कोई मेहनताना है। कुछ भी बोले बगैर अगर कोई काम कर देता है, तो इनकार करना बडा कठिन हो जाता है। लगा, सिपाही जी मेरे त्याग और देशभक्ति के बारे मे सचेतन है—ठीक दूसरे सिपाहियो जैसा नही है। मन बडा हलका लगने लगा। उसके बाद से आज कई दिनो से देख रहा हू, दिन मे उसी सिपाही की ड्यूटी रहती है।

··तेल नही लगाता है हमारी पार्टी का चद्रिमा। कहता है, तेल लगाने से ही मेरा दिमाग गर्म हो उठता है। नाटे कद का छोटा-सा आदमी, बडा ही सरल, मौन अथक कार्यकर्ता। किसी के किसी काम आने पर अपने को कृतार्थ समझता है। दो नंबर वार्ड मे दिन-रात चर्खी की तरह यहा-वहा घूमता रहता है। माथे मे रूखे घने बाल, तेल नही लगाता। 1932 मे मिलिकगंज कांग्रेस आश्रम में 'जब्ती उद्धार' के समय उसके कानो मे शायद साइकिल के पप से हवा भर दी गयी थी ! तभी से वह कानो से सुन नही पाता···नजर के सामने देख रहा हू···आज सुबह चद्रिमा ने दो नंबर वार्ड के भीतर शोक-सभा का आयोजन किया है। मौन शोक-सभा। सभापति है रामभजन बाबू। सभापति के साथ सभी एक मिनट

खडे हुए, फिर धीरे-धीरे बैठ गये। चद्रिमा खडा है। इधर-उधर बिखरे अपने रूखे बालो के बोझ को उसने कान के पास हटा दिया—बाल उसके सिह के केसर-से दिखाई दे रहे है। दोनो हाथो हथकडी डालकर कैदी को खडा करने से वह जिस ढग से खडा होता है, उसी ढग से खडे होकर वह शुरू हो गया—'मेरे गुलाम भाइयो! आज ' चारो ओर से दबी आवाज-सी उठी। सब चद्रिमा को रुकने के लिए कह रहे थे। अभी ही शायद जेल-अधिकारयो तक मीटिग की खबर पहुच जायेगी, अभी ही शायद लाठी चार्ज हो, 'हम लोगो मे ही कितने सी आई डी है', 'शोक-सभा मे कही भाषण होता है', 'बहरा है, वह कुछ नही सुनने का', ऐसे ही कितने मतव्य। चद्रिमा लेकिन मेरी बात कहता ही जा रहा है—मेरे त्याग की बात—मेरी देशभक्ति की बात, उससे मेरी मिताई की बात, अपर डिवीजन वार्ड के बाशिदा, मेरे पिता 'मास्टर साहब' के प्रति समवेदना की बात—औरत किता की देवीजी बिलू बाबू की मा जिसमे इस आघात को सहने की शक्ति पाये, इसकी कामना—इस राष्ट्रीय परिवार[1] ने भारत मे कैसा उज्ज्वल उदाहरण रक्खा है, उसकी बात—श्रोताओ के कर्त्तव्य की बात—बात से और भी बात गूथता चला जा रहा है। अधखुली आंखो के कोने मे आसू भर आये है। सबने पकडकर चद्रिमा को बिठाया। तै पाया कि मृतात्मा के प्रति श्रद्धाजलि अर्पित करने के लिए सब लोग दिन भर उपवास करेगे। चद्रिमा को उपवास से सदा आपत्ति रही है। उसकी पार्टी के लोग यह नही मानते कि राजनीति के क्षेत्र मे उपवास की कोई प्रयोजनीयता है। कुछ सदेहशील लोगो को चद्रिमा ने समझाया कि यह उपवास पाप के प्रायश्चित के लिए नही, दुश्मनो के हृदय-परिवर्तन के लिए उपवास नही, बिलू बाबू की प्रतिष्ठा को मद्दे-नजर रखते हुए देशप्रेमी के नाते हमे यह करना है।

उसके बाद दो नबर वार्ड के पीपल के नीचे काग्रेस सोशलिस्ट पार्टी के सदस्यो की एक बैठक हुई। गोरे सिह भाषण देने लगा—हर चीज को अब्जेक्टिवली देखना होगा। • प्रत्येक मार्क्सिस्ट का कर्त्तव्य है और भी कितना क्या। राष्ट्रीय सघर्ष मे पार्टी के दान पर वे गर्वित है, पर एक कामरेड की मौत से वे शोक से विह्वल नही है। इससे पार्टी का बहुत बड़ा नुकसान हुआ, वे ऐसा नही दिखाते।··· कितने लोग आयेंगे-जायेगे। कितने प्रकार के सामाजिक बधन और अटूट पारिवारिक

[1]जिस परिवार के लोग राजनैतिक कार्यकर्ता है।

श्रृंखला को तोड़कर वे राजनीति के क्षेत्र मे आये है सभी न सही बहुतेरे। अपने आदर्श के लिए जान देने मे उनमे से कोई कुठित नही। अपने प्राण को वे मूल्यवान नही समझते, उसी तरह दूसरो के प्राण के लिए भी उन्हे कम दर्द है। कामरेड भोला पीछे बैठा हस रहा है। राजनीतिक कैदियो मे मैने एक गजब की चीज देखी है। जिस राजनीतिक कैदी ने देश के लिए अपने स्वार्थ, अपने भविष्य का—सब की बलि दी है, जो देश के लिए सदा हसते हुए मौत को गले लगाने के लिए तैयार है, उसे भी जेल मे तुच्छ स्वार्थ के लिए जघन्य नीच मन का परिचय देते देखा है। कामरेड भोला फासी की सजा से रिहाई पर गया है, पर कई मुकदमो मे उसे कुल मिलाकर तेईस साल की सजा हुई है। बेहद मौजी आदमी, सदा हसमुख—फासी की भी सजा हुई होती तो उसके होठो के कोने मे जरूर हसी लगी होती,—जिस काम मे जितनी मुसीबत हो, उस काम मे उसे उतनी ही ज्यादा खुशी होती है। बालक जैसे सरल इस एकनिष्ठ देश-सेवक मे सोचने का माद्दा बहुत कम है, परतु, हुक्म की तामीला मे उसे जरा भी झिझक नही। इस कामरेड को भी दो नबर वार्ड मे रहते समय मैने दाल मे मिर्च के लिए कौलेश्वर प्रसाद से सर फुड़ौवल करते देखा है।

राजनीतिक कैदियो की ये कमजोरिया रोज जेल-कर्मचारियो की निगाहो मे आती। सो, देश के लोग राजनीतिक कैदियो को जिस सम्मान की दृष्टि से देखते है, जेल-कर्मचारी उन्हे उस दृष्टि से कैसे देख सकते है! शायद इसीलिए देश-वासियो की प्रशसा से मै इन लोगो की प्रशंसा के लिए ज्यादा लालायित हू। ·· जेलर एक दिन सुपरिटेंडंट को बता रहे थे कि नौ और दस नबर सेल के कैदी बडे भले है। 'दे नेवर ग्राउस ऐंड ग्राबल'। इनकी प्रशंसा का यही मापदड है। उस दिन सुपरिटेडेट ने जब मुझसे मेरी जरूरत की पूछी थी, तो जेलर बाबू एक नोट बुक निकालकर फाउटेन पेन से लिखने को तैयार थे कि मुझे क्या चाहिए। मैने भलेमानस को बहुत हताश किया। ·· सेल के बाहर, जहा पर सुराही रक्खी है, जेलर बाबू उस दिन ठीक वही पर खडे थे।

··कमरे के बाहर दरवाजे के सामने एक सुराही मे पानी रहता है। यह लेकिन मुझे आत्महत्या से बचाने के लिए बाहर नही रहती, सेल के सभी कैदियो को इससे पानी की आपूर्ति की जाती है, अवश्य नौ और दस नबर को छोड कर। जिसे प्यास लगती है, वह सिपाहीजी को पुकारता है या सेल की घटी बजाता है।

सिपाही जी अपनी इच्छा और अवकाश के मुताबिक उठकर उसे पानी देता है। आम तौर से जो जब पोनी मागता है, उसे उसी समय पानी नही मिलता। बहुतो का निहोरा-विनती जब एक साथ ही मुखर हो उठता है, तब सिपाहीजी उठकर सुराही से डालकर पानी देता है। एक नबर सेल की कद्र ज्यादा है, इसलिए सुराही मेरे दरवाजे के सामने रहती है। सुराही के नल को सीखचे के अदर करके ग्लास मे पानी डाल लिया। जहा तक बना, पानी को सीखचे से बाहर फेकने की कोशिश करते हुए आख-मुह मे पानी डाल लिया। आख-मुह से आग-सी निकल रही थी। सेल मे नाली नही है। दरवाजे के नीचे से ही पानी को बाहर निकलना चाहिए। आख-मुह धोते वक्त ज्यादा पानी अदर ही गिरा। कुल्ला करके पानी को बाहर फेका—दीवाल और फर्श के सधिस्थल के उस छोटे से पेड पर। कुल्ला करके इस पेड को मै रोज सीचा करता हू। जब-जब कुल्ला करता हू, और करके देखता हू कि पानी को कहा तक फेका जा सकता है। मोटा-मोटी इसकी धारणा हो गयी है। खडे होकर, बैठकर, मुह की अदा बदल कर कितनी ही तरह से अपने साथ होड लगाया करता हू—पहले के रेकार्ड को तोडने की कोशिश किया करता हू। दोपहर को, जब सीमेट का फर्श तत्ते तवे-सा तप जाता है, उस पर कुल्ला फेकता हू। उसके बाद एक-दो गिनता रहता हू—कितनी देर मे पानी सूखकर साफ होता है। काहे का पेड है, पता नही। ताबे के रग के पत्ते है। पत्ते देखने मे नीम के पत्ते से है। लालटेन चूकि पास ही है इसलिए पेड साफ दिखाई देता है। लत्तर है कोई, दीवाल को जकडकर पकडा है। लालटेन की रोशनी मे उसके छोटे-छोटे पीले फूल दिखाई नही देते। पेड की बचने की आकांक्षा कैसी! ईट और सीमेंट के बीच दरार है। उसी मे से वह जीवनी-शक्ति खीचे ले रहा है, मेरे नही रहने पर भी लेता रहेगा। मेरे कुल्ले के पानी की उसे परवाह नही। पौधे को देखने से लगता है कि उसकी डठल तोडते ही दूध जैसा गाढा सफेद रस निकलेगा। खेत पपडा जिसे हम खीरुई कहते है, उसका भी रस देखने मे ठीक ऐसा ही होता है ताई जी ने वही रस मेरे कठ के नीचे के एक फोडे पर लगा दिया था। फोडा फूट जाये, इसके लिए। उसके बाद दुर्गादी के घरौदे के लिए मिट्टी के एक पुराने दीये मे मैंने और नीलू ने जाने कितनी बार उस रस का सग्रह किया।

···दुर्गादी की छोटी बहन टेपी, अधमैली फ्राक पहने, माथे मे गुथी चोटी।

मैं और नीलू उसे आश्रम के पास गगा-दार्जिलिग रोड पर के रबर गाछ के नीचे ले गये थे—यह दिखाने के लिए कि रबर के रस को जमाकर रबर कैसे तैयार किया जाता है। मै एक पेड पर चढा। छूरी से एक डाल की थोडी-सी छाल मैने काट दी। टप-टप तरके दूध जैसा रस टपकने लगा। टेपी को पकडकर नीलू ने उसके नीचे खडा कर दिया। बोला 'खबरदार, ऊपर की तरफ मत ताकना! देख तेरे माथे पर इरेजर तैयार कर देता हू।' बाद मे टेपी की जो रुलाई छूटी, उफ् ओ! रबर के रस ने जम कर उसके बालो को कसकर जकड लिया। उस दिन मा से हम दोनो भाई किस बुरी तरह पिटे थे! गनीमत कि बाबूजी देहात गये हुए थे। इसके महीने भर बाद टेपी चल बसी। मुझे और नीलू को जो मानसिक दुश्चिता हुई, पूछिये मत! कितना अफसोस! आश्रम के शीशम के पेड के नीचे बैठकर हम दोनो ने यह सोच लिया था कि माथे पर रबर का रस देने से ही उसे डिपथेरिया का शिकार होना पडा। नीलू पहले ही यह पता कर आया था कि कार्तिक डाक्टर ने टेपी का गला चीरकर रबर का रस निकाला है। मा उस रोज दुर्गादी के यहा के सभी बच्चो को हमारे आश्रम के घर मे ले आयी थी। टेपी का भाई मोदा, इस साल वह वकील हुआ है, उस समय कितना छोटा था! वह मा के पास सोया था। रात मे घर जाने की जिद मे किस कदर रोया था!

दरवाजे के सामने बैठने की गुजाइश नही। पानी से भीग गया है। नीली धारीवाले इजार से पानी को पोछ दिया। अब इजार मैला हो जाने से कोई हर्ज नही। कल तो अब इसे पहनना नही है। नौ साल पहले भूकप के कारण यहा पर फर्श मे गड्ढा हो गया था। आज तक वह उसी हालत में रहकर पी डब्ल्यू डी की सक्रियता की गवाही दे रहा है। जो शख्स एक नंबर सेल मे रहता है, उसका भला इतना विचार! यह कमरा फासी-मच से सबसे नजदीक है, और जिस मुजरिम का फासी का दिन सबसे करीब हो, उसी का इस कमरे पर दावा होता है। जेल के साढे-चार हजार बाशिदो मे इस कमरे पर मेरा ही दावा सबसे ज्यादा है। पी डब्ल्यू डी. के लोगो ने सही सोचा है। गीले फर्श पर बैठने से वातग्रस्त होने मे जितने दिन लगेगे, इस कमरे के बाशिदो को उतने दिन जीने की नौबत नही आयेगी। और बिल्ली के भाग मे छीका टूटकर अगर उसका 'मर्सी पिटीशन' मजूर हो जाय, फिर तो इस मामूली व्याधि की बात सोचने लायक ही नही रह जाती। मगर आज भी ऐसा लग रहा है कि इस गीले फर्श पर बैठने से

तबीयत खराब हो सकती है। एक कहानी पढी थी। एक आदमी खुदकशी करने पर आमादा था। जहर की शीशी वह मुह के पास ले गया। यह देखकर हठात् उसके मित्र ने बाहर से उस पर पिस्तौल का निशाना ठीक करके कहा—'अबे फेंक दे ग्लास, नही तो गोली मार दूगा।' उसके हाथ से गिलास छूट गिरा। मन की इस गति को कौन समझ सकता है।

हो सकता है, भूकप के बाद मरम्मत करते समय दरवाजे के सामने का यह गड्ढा नजर नही आया। इजीनियर का वैसा कसूर नही । सहसा दिखाई नही देता। उसके आस-पास पानी गिरने से सब पानी वहा जमा हो जाता है—तब समझ मे आता है—वहा पर गड्ढा है। उस बार भूकप के समय क्या गजब हुआ! 1934 के भूकप की कह रहा हू।—सरकार ने पटना कैंप जेल से उत्तर बिहार के सभी राजनीतिक बदियो को छोड दिया—भूकप पीडित जनगण की सेवा के लिए। नीलू 1932 के अत मे ही छूट चुका था। बाबूजी, मा—दानो जेल मे । नीलू ताई जी के यहा रह कर पढता था। हम सब बी एन डब्लू. रेलगाडी से आ रहे थे। हर स्टेशन पर भूकप की ध्वसलीला के चिन्ह मौजूद थे । 'पथारा' या किस स्टेशन के पास तो एक दिन रुकना पडा था। पुल टूट गया था। नाव से पार होने का इतजाम हो रहा था। सरकार की ओर से तीन आने की खूराकी मिली थी। नदी के घाट पर दही वाले से चार पैसे का ठेका हुआ—जो जितना दही खा सके। नगेदर सिह ने प्राय चार-पाच सेर दही खाया—बिना मीठा डाले, लाल-लाल-सा महुआ दही। पल्ले मे पैसे नही थे। काढा गोला रोड स्टेशन से पूर्णिया तक पैदल ही जाना होगा। गैंजेस-दार्जिलिग रोड पर कितनी बडी-बड़ी दरारे! हरदा का पुल टूट गया था। हरदा बाजार के पास पहुच कर पाव ने जवाब दे दिया। दूबेजी काग्रेस कार्यकर्ता थे। उनकी दूकान पर पहुचते ही उनकी पत्नी दौडकर अदर चली गयी। जरा ही देर में मुह से 'परनाम' कहती हुई बाहर निकली। मैंने देखा, मिल वाली साडी बदल कर हरीकोर की खद्दर की साडी पहनकर आयी। इतनी उम्र हो जाने के बावजूद बदन का रग सुदर—ऋजु देह, सुग्गे की ठोर जैसी बाकी नाक—सर्वोपरि आख-मुह में एक आत्म मर्यादा के भाव ने वृद्धा के रूप को और भी श्रीमय कर रक्खा था। दूबेजी की पत्नी और दूबेजी ने जो खातिर की!—दूध मे चूड़ा भिगोकर दही के साथ उसे हसी-मजाक करते हुए हम सबने तृप्ति से खाया। मजाक के लक्ष्य थे दूबेजी। हर कोई उनकी भोजपुरी

बोली की नकल करके बोलने की कोशिश कर रहे थे। दूबेजी 'पहुच' को 'चहुपल' कहते। उस पर सबकी क्या हसी ! बूढे-बूढी ने भी हमारी उस हसी मे साथ दिया। आग के 'घूर' (अलाव) के पास बैठ कर काफी रात तक दूबेइन से गपशप हुई—मा के बारे मे, अब शादी करनी चाहिए—और भी क्या-क्या, याद नही आ रहा है। दूबेइन 'नमक सत्याग्रह' के समय नमक बनाकर जेल गयी थी। लेकिन पता नही क्यो, पुलिस ने दूबेजी को गिरफ्तार नही किया—शायद काफी उम्र हो जाने के नाते। तब से दूबेइन अपने को दूबे से बडी समझती है। दूबेजी ने मुझसे इन सब की नालिश की। पति-पत्नी, दोनो का बडा ही सरल मन। जो भी थोडी-सी जगह-जमीन उनके थी, सब काग्रेस को दे दी। रात मे लेटे थे, उन लोगो ने समझा, हम सो गये है। कही हमारी नीद मे वट्टा हो इसलिए हमारे कबल पर और एक-एक कबल सावधानी से रख गयी। वहा से रवाना होने के पहले प्राइमरी स्कूल की ओर एकात मे मुझे ले जाकर कहा—'हमारा एक अनुरोध रखना होगा। हमे कोई बाल-बच्चा नही। तुम्हे जाने कब से, जब तुम इत्ते-से थे, तब से देख रहा हू। मास्टर साहब का लडका, तो हमारे भी लडके ही हुए। हम गरीब ठहरे। तुम लोग बगाली हो बिलू बाबू। मगर हमारे एक काम का भार तुम्हे लेना ही पडेगा। मेरी जो कुछेक बीघे जमीन है, उसकी आमदनी मै काग्रेस के काम मे ही खर्च करता हू। मैं इसकी लिखापढी कर देना चाहता हू। हम लोगो के मर जाने के बाद तुम इस सपत्ति को महात्माजी के काम मे लगाना। हम अब जियेगे ही कितने दिन ?' मैने उन्हे वचन दिया था। दूबेइन अभी भी शायद रगीन कागज के रथ पर स्थापित रामजी की मूरत के सामने बैठी दीये की जोत मे तकली कात रही है।

हरदा बाजार से पूर्णिया पहुचा दूसरे दिन दोपहर को। 'गांधी आश्रम' को सरकार ने 'जबत' कर लिया था। फिर भी उसी ओर चला। दूर से ही देखा, जिला काग्रेस के दफ्तर के पास के शीशम का पेड पीताभ जर्द रग के विगनोलिया फूलो से भर गया है। मैने ही उस बार लता को पेडो पर चढा दिया था। पहले ध्वज स्तभ की पताका बडी दूर से दिखाई देती थी। अब वह नहीं है। किंतु तैरते हुए मेघो की पृष्ठभूमि मे विगनोलिया फूलो से लदा शीशम का वह पेड राष्ट्रीय पताका का काम कर रहा था, सफेद, जाफरानी, हरा—तीन रंग ! आश्रम के घर फूस के। हमारे घर का घेरा टूट गया था। ट्यूब वेल का ऊपर का हिस्सा गायब। एस.डी.ओ. साहब द्वारा सील किये दरवाजे का ताला

नदारद। चौकी और बडी आलमारी के अलावा घर मे और कोई भी चीज नही थी। छोटी-मोटी सारी चीजे, जिससे जो बना, वही ले गया। रसोईघर के दरवाजे के दोनो पल्ले भी कोई खोल ले गया। महात्माजी की तस्वीर चोरी हो गयी। सझली दीदी ने रूई का जो उल्लू बनाया था, फ्रेम मे बधा वह उल्लू नही दिखाई पडा। सहदेव की बहन सरस्वती ने छुटपन मे कार्पेट पर बुना था 'अनटचेबिलटि इज ए सिन'—सिन का एन जेड की तरह लिखा था, वह भी नही था। मेरी लिखी एक कविता को नीलू ने पेटबोर्ड पर चिपका कर टाग दिया था, वह साबित था। उसकी लिखावट अस्पष्ट हो गयी थी। और मेरी बनाई रवि बाबू की तस्वीर, पिजबोर्ड पर लगायी—देखा, उसे भी किसी ने लेने योग्य नही समझा। शायद हो कि चूकि वह फ्रेम मे बधी हुई नही थी, इसलिए छोड दी हो। फूलो के पौधे चोरी हो गये थे। सिर्फ गुलाबी और सफेद मिनका फूलो से अगना भर गया था। शायद इन पौधो को गाय-बकरी नही खाती। बीच-बीच मे रेडी के दो-एक पेड सर उठाये खडे थे—आभिजात्यहीन तुच्छ मिनका को ताच्छिल्य करने के लिए। रेशम के कीडो को पालने का घर बिलकुल गिर गया था। बैलगाडी के दोनो पहिये कौन तो खोलकर ले गया। तेल का घानीघर खडा था। लेकिन घर के अदर, देखने मे अरहर जैसे जाने तो किन पौधो मे भरा था। अदर जाने का उपाय नही। आश्रम की लाइब्रेरी की एक भी किताब नही बची थी। हॉल मे देखा, कूडो की ढेरी—वहा गाय बकरी बाधने के चिन्ह मौजूद थे। इस दुर्दिन मे भी पडोसी लोग काग्रेस के घर को नही भूले! मन उदास हो गया। आश्रम से निकलकर ताई जी के घर के फाटक मे दाखिल हुआ। यह पिताजी के अतरग मित्र का घर है। घर के ठीक सामने एक तबू था। तबू के दरवाजे पर एक सफेद बकरी ऊपर मुह किये मगन हो एक लता-पत्ता कढे टेबिल-क्लाथ को चबा रही थी। नोनीदी की लडकी बुढिया और उसकी साथिनें, बैहार से जो लबी दरार चली गयी है, उस पर आखे गडाये औधी लेटी थी। मुझे देखकर सब दौड़ी आयी। मैंने पूछा, 'वहा क्या कर रही थी?' वह बोली, 'छोटे मामा ने कहा है कि उस दरार से अमरीका दिखाई देता है।' बुढिया बाहर से चीखती हुई अंदर गयी—'नानी जी, देखो, कौन आया है।' ताई जी और सझलीदी रसोई मे खाने बैठी थी। 'कहा है सझली-दी' कहते हुए मैं जैसे ही अदर दाखिल हुआ कि खाना छोड़कर दोनों बाहर निकल आयी। ताईजी का दाया हाथ जूठा था। उन्होने बायें हाथ से मुझे अपने

करीब खीच लिया। देखा, नीलू घर मे ही था। आखे मलते हुए बाहर आया। 'ताई जी के खाने का बारह बजा दिया न, अब उनकी थाली मे बैठकर वह सब भकोसो।'—कहकर वह जोर से हस पडा। सझलीदी ने कहा—'देखा, देखा हमारा तो खाना खत्म ही हो आया था।' सझलीदी की आखो मे कपट क्रोध की निशानी। ताई जी ने नीलू पर डाट बताई—'तू उस टूटे कमरे मे सोया था! दब कर मरना है क्या? हा, तुझसे मै हार गयी। मै अब तुझे यहा नही रखूगी। मामा के यहा भेज दूगी। डकैत है डकैत। कल भी उसी टुटहे घर मे सोया था। उसके बाद कितनी ही बाते हुई, कितने किस्से! नीलू का कहा ही आखिर फला। मुझे ताई जी के पत्तल मे ही खाना पडा। ताई जी के घर को हमने भी अपने घर के सिवाय दूसरा नही सोचा। ताई जी का घर हमारा सदा से 'वह घर' रहा है।

ताई जी की याद आती है। सामने के दो बडे-बडे दात मुह से बाहर निकल आये हैं। दोनो भौहो के बीच कपाल पर गोदना। सर मे कच्चे-पक्के बाल। छोटा-सा मुह। मुह में हसी ही लगी रहती है। और उनके हसते ही नजर आता, सामने की नीचे वाली पात के दो दात टूट गये है। पहनावे मे मटका का थान। उनके आख-मुह मे, बात-चीत मे मातृत्व का ऐसा एक भाव, जो साधारणतया दिखाई नही पडता। राफाएल की मातृमूर्ति बडी गभीर है, कैसा तो सिमटा-सिमटा सा भाव सर्वांग मे सावलील छद और स्वच्छद गति का अभाव—अस्पताल की नर्स-मेट्रनो जैसी मानो नकली गभीरता से भरी, पर ताई जी गोया देशी पटुता द्वारा अकित यशोमती की तस्वीर हो, चमक-दमक नही, पर अतर मे असर डालती है। मेरी मा का जो भाव मेरे और नीलू के प्रति है, ताई जी का वह भाव मुहल्ले के सभी बच्ची-बच्चो के लिए है। यहा सबके लिए दरवाजा खुला है, पर मुझे इसका गर्व है कि मेरा स्थान उनमे सबसे ऊचा है। नीलू वगैरह तो ताई जी को जब-तब यह कह कर चिढाता है कि वह मेरे लिए पक्षपात करती है—सबको न देकर मेरे लिए छिपाकर खाने की चीज रख देती है। मै जब जेल में था, ताई जी एक बार बहुत बीमार पडी थी। उस समय शायद उन्होने अपनी सारी सपत्ति मुझे दे जाने की ख्वाहिश जाहिर की थी। उस समय देखा गया, सपत्ति के नाम पर तकिये की एक पुरानी खोली मे छब्बीस रुपये तथा एक मटका घी—थोडा-थोडा करके जमा किया हुआ। नीलू खूब रस लेकर ये बाते करता और जब-तब ताई जी को परेशान किया करता है।

ताई जी के भाई की पोती की शादी मे एक बार उन्हे लेकर उनके गाव गया था। पबना जिले का छोटा-सा गाव। जमना नदी के किनारे। ताई जी के साथ उनका गांव घूमने निकला। उनके कविराज-दा का खडहर, गाव के बाबू का टूटा मदिर, भैरव मुइया, जिसके नाम से सूखे पेड मे फूल लगता था, बाघ-बकरी एक घाट पानी पीते थे—उनका पुराना घर—और भी कितने ही स्थान देखे। छुटपन से ही ताई जी के मुह से इन स्थानो के बारे मे इतना सुना था कि कुछ भी नया नही लग रहा था। उसके बाद ईजमा 'दीघी' के बाध पर से जा रहा था कि ताई जी ने दिखाया, 'यहा पर नवद्वीप डाक्टर साइकिल से गिर पडा था। उस समय इस जिले मे केवल एक ही साइकिल थी। टोले की हम सभी साइकिल देखने के लिए यहा आकर खडी हुयी कि बेचारा हडबडा कर तालाब के पानी मे गिर पडा। साइकिल-वाइकिल लिए-दिये' 'मैने कहा— ताईजी तुमने तो कहा था 'फेरीमेंट', (असल मे फेरी फड) के रास्ते पर।' 'अरे, इस बाध पर से एक ही फेरीमेट का रास्ता हैं। और सुन, तुझ से एक बात कहू। तू जो मुझे ताई जी कहता है, यह मुझे जरा भी अच्छा नही लगता। मुझे मा नही कह सकता ! मै कैसा तो हक्का-बक्का हो गया। उनके चेहरे की ओर ताक कर देखा—आग्रहान्वित भाव से, जिज्ञासु नेत्रो से मेरी ओर देख रही है मेरे जवाब की प्रतिक्षा मे। गाढे स्नेह भरे मातृत्व की झलक से मुखडा उनका दमक उठा था। यह सवाल इतना अप्रत्याशित था कि मेरे मुह से जवाब आने मे खासा कुछ समय लगा। सोच-विचार कर कहा— 'जो ताई जी, वही मा। दोनो ही तो एक है।' मैने देखा, मेरे इस जवाब से वह अजीब अप्रतिभ हो गयी है। अपराधी की नाई बोली—'तेरे मा है। तुझ से यह अनुरोध करके मुझ से अन्याय बन पडा।' उनकी निगाह तालाब के उस पार थी, मगर किसी खास चीज पर टिकी नही। ··

उसी दिन से औरो की गैर मौजूदगी मे ताई जी को मा कहकर पुकारा करता। जानते यह सभी हैं, पर छुटपन से ताई जी कहने का आदी हो गया था। कि सबके सामने मा कहने मे सकोच होता। नवद्वीप डाक्टर के साइकिल से गिरने की जगह दिखाते समय ताई जी को मेरी मां होने की इच्छा क्यो हो आयी, यह मैं आज भी समझ नही पाया।···

इसके कुछ दिनो के बाद की बात। जो खतरा था, वही हुआ। ताई जी को मा कहना मेरी मा को पसद नही। मैं और नीलू रसोई में खाने को बैठे थे। मा

परस रही थी। परस लेने के बाद वह हम लोगो के साथ ही खाने बैठेगी। एकाएक मैं बोल उठा––'जानती हो मा, ताई जी पिसे तिल के साथ इतना उमदा भिगी का भोल बनाती है ?' 'तो वही खाया करो तुम। यहा खाने की क्या पडी है ?' कहा क्या और जवाब क्या मिला ? मा यो मिठबोली है। उनकी बात की इस आकस्मिक भास ने मुझे अवाक कर दिया था। नीलू अचानक बोल उठा––'मैने आज मा से कह दिया है न कि तुम ताई जी को मा कहते हो, मा उसी से बिगड उठी है। देखा नही, तुम बोली ?' सच ही तो, नाराज होने से मा हमे तू नही कहती। यह कबख्त नीलू भी ऐसा बेवकूफ है। मा से छिपाकर वह मुझे यह बता सकता था। देखा, मा की दोनो आखो मे आसू आ रहे है, उसे छिपाने के लिए वह रसोई मे चली गयी। मुझे लगने लगा, मुझसे बहुत बडा अपराध हो गया है।

मा जिस वार्ड मे है, उसका नाम है 'औरतकिता'। आज वह सो नही सकेगी। वह शायद मच्छरदानी गिरा कर जप करने बैठी है। देखा है, मन खराब होने से ही मा जप करने बैठती है। पिछले साल की शुरुआत के दिनो नीलू जब देवली मे बीमार पडा था, तब की कह रहा हू। एकाएक खबर आयी, अजमेर अस्पताल मे नीलू के एपेडिसाइटिस का आपरेशन हुआ है। उसी दिन तमाम रात मा पूजा-घर मे रही। रात के प्राय ग्यारह बजे केवल एकबार मेरे कमरे मे आयी। आईने के पास और ताखे पर शिशियो के पास कुछ खोजने लगी। मुझे लगा, मा नीलू की बीमारी के बारे मे मुझ से कुछ बात करना चाहती है। मगर हिम्मत नही पड रही है, कही मै बीमारी की गभीरता या प्राणो की आशका की कुछ कह बैठू, इसलिए। शायद हो कि जप से उनके मन को पूरा बल नही मिला। मा ने सोचा, मेरी नजर किताब पर गडी है, मैं उन्हे देख नही रहा हू। देखा, उन्होने बडी भक्ति से दीवाल पर टगी गाधीजी की तसवीर को प्रणाम किया। अलगनी मे टगी-सवरी अपनी साडियो को फिर से सहेजने लगी। इतने में मैंने कहा––'एपेंडिसाइटिस का आपरेशन बडा मामूली है। सभी का अच्छा हो जाता है। विलायत मे तो आजकल अच्छे-खासे तदुरुस्त लोग यह आपरेशन करा लेते है।' मा ने ऐसा भाव दिखाया, गोया इस बात की उन्हे कोई चिता या उत्सुकता नही है। 'देवली से अजमेर कितनी दूर है रे ?' तमाम रात फिर जप मे ही कटी।

गुमटी के ऊपर से एक वार्डर लगातार चीखता जा रहा है—'बोलो रे नया-गोल, बोलो रे जुमलिन (जूविनाइल वार्ड) ।' रात वैसी ज्यादा नही हुई। लेकिन इसी बीच ज्यादातर वार्ड के ही 'पहरे' जवाब देही उतार फेकने के ख्याल से जवाब देने लगे। वार्डर गीत के सुर की तरह कह रहा है—'बोलो रे ।' 'बोलो रे पाच नबर' बोलने मे मुझे सोलह गिनने मे जितना समय लग जाता है उतना समय लगा। एक दिन एक वार्डर ने मुझे समझाया कि गीत की तरह सुर मे बोलने से तकलीफ कम होती है और आवाज फटने की सभावना कम रहती है। हर वार्ड मे चार बडे-बडे हॉल है, दो ऊपर, दो नीचे। जेल की भाषा मे इन हॉलो का नाम है खटाल। पाच नबर वार्ड के पहले हॉल से जवाब आया—टूटी, फटे बास की-सी आवाज मे—'पाच नबर, पहला खटाल, जमा एक सौ सत्तावन, मुजरिम, ताला, बत्ती ठीक है, गले की आवाज से ही समझ मे आता है, इस आदमी के पूरे चेहरे पर काटो सी कच्ची-पक्की दाढी-मूछ है। पक्का कर्त्तव्यनिष्ठ है, माथे पर नीली टोपी यानी वह 'पहरा' है। सरकार बहादुर की तरफ से महीने मे चार आना तनखा के हिसाब से उसके नाम जमा होता है। उसके बदले वह रात जागकर दो घटा पहरा देता है। सरकार का नमक खाता है, काम मे कोताही क्यो करे? पाच नबर के बाकी तीन खटालों से जो जवाब आया, वह इतना साफ नही। उन लोगो ने पूरी बात कही भी नही। सिर्फ 'हो-ओ-ओ-हे' जैसा सुनाई पडा। सुनसान रात मे गाव का चौकीदार जैसी हाक लगाता है। गीत के सुर की तरह बोलने की कोशिश नही, किसी तरह गले का भार उतार देना। ये बेशक सादी टोपीवाले 'मेट' है, यानी 'पहरा' मे पुराने कैदी है। माहवार आठ आना पाता जरूर है, लेकिन इन लोगो ने जेल का बहुत कुछ देखा-सुना है। इन्हें पता है कि इस काम को भली तरह करने पर उनका मार्का (रिमिशन) मुनहसर नही। और जानता है कि हेड जमादार को कैसे सतुष्ट रक्खा जाता है। एक मेट निहायत जो-सो नही होता। उसके मातहत इतने कैदी है। इन सबको शासन मे रखने के लिए जेल के कर्मचारियो के प्रति, जेल के नियम-कानून के प्रति एक बेपरवा-लापरवा भाव दिखाना चाहिए।

'बोलो रे नया गोल' (सेग्रिगेशन वार्ड)। जब तक वह 'बोलो रे' बोल रहा था, मै कान खड़े करके सुन रहा था कि पाच नबर के बाद छे नबर बोलेगा या नया गोल। इसीसे समझ मे आयेगा कि वार्डर नया है या पुराना। छे नबर का

एक नाम और है——'दामली किता'। जिन्हे आजीवन कारावास की सजा हुई है, वही इस वार्ड मे रहते है। इस वार्ड के कैदी दूसरे वार्ड के कैदियो का 'कद्दूचोर' कहकर मजाक उडाते है और उन्हे हिकारत की निगाह से देखते है। मतलब कि वे लोग कुछ चुराकर जेल मे आये है! इन दामूलियो से सभी वार्डर जरा परहेज से चलते है। और, पुराने वार्डरो से इनका एक सौदा तै है। वे गुमटी पर होते है तो ये सारी रात चैन से सो सकते है। मेट-पहरा की चीख और गिनती से इन्हे छुटकारा मिलता है। और ये बेचारे तमाम दिन जेल के कारखाने मे काम करते है। गहरी नीद का थोडा-सा मौका न मिले तो ये जिदगी भर यह हड्डीतोड मेहनत कैसे करेगे? नया वार्डर होता तो बेशक 'बोलो रे छे नबर' कहकर हाक लगाता। दो नबर से छे नबर वार्ड की तरफ ताकने से लगता है, जैसे किसी बडे जक्शन के प्लेटफारम पर खडे है। यह वार्ड एक राजा बहादुर का दान है। मानना होगा कि दान का पात्र, विषय-वस्तु और उद्देश्य चुनने की प्रतिभा राजा बहादुर की अनन्य साधारण थी। और कह नही सकता कि इस दान से राजा बहादुर की कोई आकाक्षा पूरी हुई है या नही, लेकिन जो अभागे सारी जिदगी इस जेल मे बिताएगे, वे बेशक उन्हे हार्दिक धन्यवाद देते है। ये लाइफर (दामूली) यो आदमी भले होते है। पक्के चोर का लीचडपना या नीचता इनमे नही होती। इन्होने जेल को ही अपना घर-द्वार बना लिया है। किसी ने वार्ड के आगन मे तुलसी का बिरवा रोपा है, किसी ने थोडी-सी जगह लीप-पोत कर बैठने का एक स्थान बना लिया है। बहुतो की अपनी-अपनी पुदीना और मिर्च की खेती है। इन पौधो पर उन्हे माया कितनी है! स्नेह, प्यार, सतान-वात्सल्य की स्वाभाविक प्रेरणा, सब कुछ इन्ही पौधो पर उडेल देते है।

हजारीबाग जेल के उस फिरगी विलियम्स साहब की छूटने के दिन की वह रुलाई! चौदह साल उसने जेल मे बिताये। उसका लगाया अमरूद का पेड़ कितना बडा हो गया। उसी का लगाया गुलाबजामुन का पेड फूलो से पावडर पफ जैसा भर गया है। पीपल के पेड के नीचे बैठने के लिए उसने एक वेदी बनवा ली थी। उसके चलते सुपरिटेडेट और पी डब्ल्यू डी के इजीनियर मे कैसी चख-चुख हो गयी——वह उन सब चीजो की ओर ताकता और जोर से रो पडता। एक बड़ी उम्र के आदमी को मैने इस तरह से खूब रोते कम ही देखा है। घर जाने और सगे सबधियों को देखने की खुशी की अपेक्षा इन पेड़-पौधो और जेल के

बधुबाधवो को छोडकर जाने का उसे कही ज्यादा दुख हुआ था। ·

एक ही ढग से बडी देर तक बैठे रहने से दाया पैर अवश-सा हो आया। कमरे मे कई बार चहलकदमी की, पाव की झिनाझनी मिटाने के लिए दरवाजे के सीखचे को पकड कर जब भी आडे-आडे बैठता, देखता, अपने अजानते दाये भार देकर ही बैठा हू। और, दाये हाथ से सीखचो को पकडे हुए हू। भूल से भी कभी बाया कधा सीखचे से लगाकर बायी ओर भार देकर नही बैठता।

· तब हम कितने छोटे थे! स्कूल नही जाते थे। बोर्डिंग के पास हेडमास्टर का क्वार्टर था। पिताजी स्कूल गये थे। मा बैठी सुपारी काट रही थी। मुझमे और नीलू मे विवाद हो रहा था। नीलू कह रहा था, मा की दायी गोद मेरी है, चाहो तो बायी गोद ले सकते हो। पता नही क्यो, बायी गोद लेने मे मुझे अपमान-सा लग रहा था। हम दोनो ही मा की दायी गोद पर हाथ रख कर अपना-अपना हक कायम रखने की कोशिश कर रहे थे। इसी छीना-झपटी मे एकाएक नीलू का पाव लगकर कटी सुपारी रखने वाला बेत का बर्तन उलट गया। मा ने चटाचट मेरी पीठ पर दो चपते जड दी––'बुड्ढे लडके, शर्म नही आती। जितना बडा होता जाता है, गुण बढते है!' मैने कहा––'मैने सुपारी गिराई है!'

'फिर जवाब! छोटा भाई दायी गोद माग रहा है, तो इन्हे भी दायी गोद चाहिए! दायी गोद नीलू की है। जरा ही देर मे तो सरोते से मेरा हाथ कट गया होता।'

क्रोध, लज्जा, अपमान से मेरी आखो मे आंसू आ गये। मै जरा दूर खिसक कर चुप बैठा रहा। नीलू कुछ देर मे उठकर चला गया,––शायद दावेदार नही रहने की वजह से लडने की साध उसकी पूरी हो गयी। बडी देर से मै यह गौर कर रहा था कि आडी नजर से मा यह देख रही है कि मै क्या कर रहा हू। सुपारी काटना हो गया तो बेतवाली डलिया को दराज पर रखकर वह मेरे पास आकर बोली––'तू इतना बुद्धू क्यो है? गोद तो बायी ही अच्छी है। देखा नहीं है, सितुहे से दूध पिलाते वक्त दाये हाथ से पिलाते है और बच्चा बायी गोद में लेटा रहता है। तू तो दायी गोद मे भी सोया है। अब से बायी गोद तेरी हुई। उठ देख, वह शैतान कहा गया।' यह युक्ति उस समय लाजवाब लगी। · ·

दाये पाव की अवशता जाती रही। मै अदर चहलकदमी कर रहा हूं देखकर वार्डर मेरे नजदीक आया––गोया यह जानना चाहता हो, मै क्या सोच रहा हू,

दोपहर रात को अचानक कमरे मे पावचारी क्यो करने लगा हू। शायद यह सोच रहा हो कि बाबू का मन ठीक नही है। और आज के दिन तो मन ठीक रहने की बात भी नही। सीखचो के बाहर से वार्डर देख रहा है। लगा, चिडियाखाने का दर्शक पिजडे के भीतर किसी जगली जानवर को देख रहा है।

चिडियाखाने की बात याद आयी। मेरे दोस्त नीरेश की छोटी दादी तीरथ के लिए काशी गयी। दूर के रिश्ते की छोटी दादी। किसी बूढे जमीदार की दूसरी स्त्री। विवाह के कुछ ही दिनो के बाद विधवा हो गयी। उनके साथ काशी नाथ आये थे उनके पिता और मा। नाम तो छोटी दादी, मगर उम्र इतनी कम देखकर अवाक रह गया था। मै और नीरेश ने बहुत ही उत्साह के साथ उन्हे काशी के दर्शनीय स्थान दिखाये थे। राजा का चिडियाखाना गया। बाघ के पिजडे के सामने खडा था। दोनो पाव आगे बढ़ाकर बाघ ने एक विकट चीत्कार किया। उसके मुह का भाव जम्हाई लेने जैसा लगा। नीरेश की छोटी दादी ने 'बाप्रे' कहकर मुझे जकड लिया था—शायद डर के मारे। महज कुछ सैकडो की बात। वाक्या शायद उनके मा-बाप और नीरेग की नजर से नही गुजरा। गुजरा भी हो तो कम से कम अशोभन नही लगा। लेकिन उस तुच्छ घडी को उपलक्ष बना कर मन ही मन सपनो का कितना जाल बुन लिया। नीरेश ने जैसा कहा, छोटी दादी की मा को मौसी कहा। काशी मे नीरेश के साथ उनके डेरे पर गया—एकबारगी रसोई मे, जहा वह खाना पका रही थी, बातचीत विशेष नही कर पाती। हरदम यह डर कि शहर के पढे-लिखे लडके से क्या बोलते क्या बोल बैठू। मेरे रसोई मे जाते ही बोली—'मेरे टूटे घर मे चाद की चादनी।' क्या सोचकर उन्होने यह कहा, नही जानता। ठीक समझ नही सका। उसके बाद छोलनी हाथ मे लिए सकपकाई-सी खडी रही—चेहरे पर एक अर्थहीन हसी की अदा। बाद के कई दिन हम लोग उन्ही के पीछे व्यस्त रहे। छोटी दादी जी के पिताजी के लिए कितनी दूकानो की खाक छानकर चार तरह की चार टार्चे खरीदी। बाजार मे निकलते ही उन्हे कोई न कोई वैसी ही चीज खरीदने का ख्याल हो आता। भले आदमी की बातचीत ग्राम्य और अमार्जित। बेटी के अभिभावक; जामाता के नही रहने से जायदाद की देखभाल वही करते थे। इकलौती बेटी के वैधव्य से खास दुखी-से नही लगते, बल्कि अपनी गरीबी के कारण पिछले दिनो के अनपूरे शौको को पूरा करने का मौका पाकर आत्मनिर्भरता जैसे कुछ बढ़ती गयी हो। डरते सिर्फ बेटी

से ही थे। काशी मे छोटी दादी जी की मा बीमार पडी। बीमारी मे उन्हे धुन चढी कि मेरे सिवा और किसी के हाथ की दवा नही पीयेगी। रोज विश्वनाथ जी के मदिर के पडे के यहा से डाव ले जाया करता——रोगिनी के लिए। घर मे कदम रखते ही छोटी दादीजी कहती——'लो' सन्यासी जी आ गये, अब मा की जान मे जान आयी।' उस समय मेरे मन मे कैसे तो एक कृच्छ्रसाधन की सनक सवार हुई थी। मै बाबरी बाल रक्खे हुए था। मूछ-दाढी उगी थी, पर बनाना शुरू नही किया था। छोटी दादी जी ने इसीलिए मुझे सन्यासी जी कहा। उनकी बात याद आते ही वह सामने आ जाती है——पहनावे मे नीलाबरी साडी, कलाई मे बबई बाकी चूडी, गले मे मोटा-सा चेन-हार——शायद मा ने ममता से अपनी इकलौती बेटी को विधवा का वेश नही लेने दिया। रग काला और उस पर चिरी कोर की नीलाबरी बिलकुल नही फबती। निरे साधारण ग्राम्य गृहस्थघर की लडकी थी छोटी दादीजी। उल्लेख करने योग्य रूप-गुण उनमे नही था। लेकिन मुझे आकृष्ट किया था उनके रूप की स्निग्धता ने, बिलकुल अपना बना लेने वाले उनके व्यवहार और बातचीत की आतरिकता ने। वे लोग जब घर लौटने लगे, तो मै और नीरेश उन्हे स्टेशन छोडने गये थे। जाते-जाते अचानक याद आ जाने से नीरेश और छोटी दादीजी के पिताजी पान वाले से काशी की बढिया जरदा खरी-दने गये थे। मै प्लेटफारम पर खडा था——मेरे दोनो हाथ डिब्बे की खिडकी पर। छोटी दादीजी मेरे हाथ पर हाथ रक्खे खिडकी के सामने बैठी थी। उनकी दोनो आखे डबडबा आयी थी, मैं उनकी ओर ताक नही पा रहा था। उन्होने मुझसे धीरे से पूछा——'सन्यासी, मेरे यहा एक बार आना।' मैने उन्हे वचन दिया था। काफी दिनों तक यह इच्छा भी थी कि दिये वचन को रक्खूगा। छोटी दादी जी के चले जाने के बाद कुछ दिनो तक सब सूना-सूना लगता था——किसी बात मे जी नही लगता——घूम फिर कर एक मुखडा सदा आखो के आगे तिर आता। चिट्ठी की आशा मे डाकघर तक जा धमकता था।

फिर अपने अनजानते वह नीलाबरी साडी, वह बबई बाकी चूडी धीरे-धीरे कब तो स्मृति-पट से पूछ गयी। चार-पाच साल पहले पुरानी चिट्ठिया जला फेकते समय नीले रग के कागज पर लिखी चिट्ठी की दो पक्तिया पढकर उनका अमार्जित भाव बडा कैसा तो लगा था।—— 'सन्यासी जी, अपने ब्याह के भोज में मुझे फांकी मत देना। भोज के लिए मैं पेट 'खखोर' कर बैठी हू।' यह 'पेट

खखोरना' शब्द सुरुचि की बडी दीनता का परिचायक है। चिट्ठी मे इस ढग की बात लिखी जा सकती है, यह सोचकर ही मन अवज्ञा और ताच्छिल्य से भर गया।

खट् खट् खट्। पक्के आगन पर भारी मिलिटरी बूटो की आवाज। तीन नये सिपाही आये। पहले के वार्डर से चार्ज लेकर देखा कि ताला ठीक है या नही। किसी भी सेल के सामने खडे होकर ज्यादा शोरगुल नही किया। समझाया कि सेल का कोई कैदी सोया नही है। सोया होता तो वार्डर पुकार कर जरूर जगाता। जब ड्यूटी बदलती है, तो नया वार्डर हर सेल के कैदी को पुकार कर देखता है कि जिदा है या नही। यदि कोई सेल के दरवाजे के पास बैठा रहता है, या खासकर या दूसरे किसी उपाय से जता देता है कि वह तदुरुस्त और जिदा है, तो उसे नही पुकारता। कही सो गये, तो खैर नही। सेल का कैदी, उसे लगातार दो घटा से ज्यादा सोने की जरूरत क्या है, पूछने से कहता है— 'यही रूल है बाबू। अगर कोई बेहोश हो गया हो, या बीमार होने से जबान बद हो गयी हो, तो बिना पुकारे हम जान कैसे सकते है, 'डागदर' को खबर कैसे देंगे;' सच पूछिये तो इससे सेल के कैदियो को विशेष असुविधा नही होती। मच्छर, खटमल, चींटी, रात-दिन की कर्महीनता, दुश्चिता आदि नाना कारणो से सेल के बाशिदो को स्वाभाविक कर्मजीवन की गहरी नीद नसीब नही।

दस नबर सेल से गीत की कड़ी सुनाई पड़ रही है—

'शहीदो की टोली निकली '

'टोली' शब्द सुनते ही पटना कैप जेल के 1932 साल के 'सेवादल' ट्रेनिंग की याद आ जाती है। मै और नीलू, दोनो ने सेवादल ट्रेनिंग लेने का निश्चय किया। पहले दिन कवायद खत्म होते ही नीलू ने मुझसे पूछा—'यह टोली क्या है रे?' मैने उसे समझा दिया कि कई सिपाहियो से एक टोली बनती है। सिपाही के मानी 'प्राइवेट' और 'टोली नायक' माने एन. सी. ओ.। नीलू ने असहिष्णु होकर कहा, 'यह सब तो आज तेदुलकर ने भली तरह समझा दिया है। मगर मैं पूछ रहा हू, इस टोली शब्द को इन लोगो ने पसद क्यो किया? कोई दूसरा शब्द नही मिला?' 'टोली' कह कर, उफ क्या हसी। उसी दिन तीसरे पहर तेदुलकर जब 'कदम खोल (स्टैड-एट-ईज) और 'सावधान, (अटैशन) का माने समझा रहा था, नीलू ड्रिल करते हुए ही हसी से लोट-सा पड़ा था। तेदुलकर तो आग-बबूला हो गया। उसने हुबली मे हरदीकर के कैप मे ट्रेनिग ली थी, बंबई मे शिवरि

चलाया था, प्रादेशिक काग्रेस कमेटी के सभापति के विशेष अनुरोध पर महाराष्ट्र छोडकर सेवादल का काम करने आया था। सेवादल ट्रेनिग का उसे काफी अनुभव था, पर ड्रिल के समय ऐसी अनुशासनहीनता उसने इससे पहले कभी नही देखी थी। वह हिंदी अच्छी नही बोल सकता था। गुस्से के मारे आख-मुह सुर्ख हो उठा। 'तुमको डडा मिलेगा।'—कहकर हाथ की लाठी से नीलू को एक ठोकर दी।—नीलू ने उसके हाथ की लाठी छीन ली और चीख उठा, 'डडा मिलेगा?' यह सब महाराष्ट्र में करना। यहा यह सब नही चलेगा। राष्ट्रभाषा बोलना नही आता। पूना को पुणे बोलता है। हिंदी में बोलने का शऊर है!' नीलू ने तेदुलकर का हाथ थाम लिया। चारो तरफ से सब दौडे। जाकर छुडा दिया। बात की बात मे यह खबर जेल मे तमाम फैल गयी। कैप-जेल मे उस समय लगभग साढे चार हजार कैदी थे। जिस वार्ड मे भी जाओ, जगह-जगह लोग जुटकर यही चर्चा कर रहे थे। जेल के हर कोने मे, आकाश-वातास मे यही गूज। जेल का केंद्र, जिसका नाम हम लोगो ने रक्खा था चौक—वहा खासे बडे कई दल जमा हो गये थे। वार्डर तक राजनीतिक कैदियो से मिलकर एक हो गये थे। जेल की राजनीति मे उन्हें कुछ कम उत्साह नही। एक ने भाषण देकर असली परिस्थिति सबको समझा दी—विहार के यश को आच आयेगी। तेदुलकर बाहर का आदमी है। उसके प्रति यही मेहमाननवाजी हुई? और फिर राष्ट्रभाषा की खिल्ली उडाना। और, पास के श्रोताओ को विश्वास का पात्र समझ कर मानो कोई गोपनीय बात कह रहे हो, यह भाव दिखाते हुए गले को जरा धीमा करके बोले, 'बगाली है न।' फिर होठो के कोने मे हसी की लकीर खीचकर उनसे यह जाहिर करना चाहा—'तुम लोग तो सब जानते ही हो। तुम्हे भला सब समझाकर कहने की जरूरत है?' शर्म और बेइज्जती से मेरा सर झुक गया। ये लोग नीलू के मन के भाव को नही जानते। उसके इस व्यवहार का एक मनगढत अर्थ लगा लिया है। यह अर्थ उनके खूब मन लायक हुआ है। साझ के बाद वार्ड मे नीलू से भेट हुई—भोजन के समय चक्का डूबने से पहले ही खाना हो जाता। उस समय चूकि भूख नही लगती, इसलिए हम लोग रोटी लेकर वार्ड मे रख लेते। रात जरा ज्यादा होने पर खाते थे। नीलू ने खुद बात उठाकर मेरा सकोच तोड दिया। तीसरे पहर की घटना से मै शर्मिंदा हुआ था। नीलू मगर जरा भी अप्रतिभ नही हुआ।··· वह कहता गया—'ड्रिल के इन आदेशो को अंगरेजी मे ही रक्खा जाता

तो क्या हर्ज था ? 'क्विक मार्च', 'स्टैंड एट ईज' कहने से भारत का आजादी हासिल करना दुर्घट हो जाता क्या ? हिंदी जानते नही जनाब, मगर हिंदी बोलना है। मैनर्स नही जानते। कबख्त। 'उसकी खातिर कैसी ?' किसी विषय मे अयाचित उपदेश नीलू को मैने कभी नही दिया। अभी भी शायद मै कुछ नही बोलता बशर्ते कि उसने खुद बात नही उठाई होती। सक्षेप से मैने उसे समझा दिया कि दूसरे बदियो ने उसकी बात का कैसा कदर्प किया है। नीलू बिगड उठा। कहने लगा—'ये लोग स्वराज लेगे !' उसके बाद अनर्गल कितना क्या कहने लगा। जरा देर बाद देखा, सारा गुस्सा किसी अजाने साथी पर जा पडा, जिसने उसका गुड चुराकर खाया था। रविवार को जो राजनीतिक कैदी 'रविबार' करते, उन्हे भात के बदले रोटी-गुड या छे पैसे का फल मिलता। नीलू गुड लिया करता था। इतवार को मेरे भात मे हम दोनो खाया करते। और इस असुविधा को अपनाकर हम हफ्ता भर थोड़ा-थोडा गुड खाया करते थे। वही गुड चुरा लिया था। लिहाजा नीलू के मन का तीखा हो जाना कोई अचरज नही। मगर मुझे नीलू का चिल्ला कर सभी राजनीतिक कैदियो पर कटूक्ति करना बुरा लगा। खास करके जबकि आबहवा अनुकूल न हो। सारी दुनिया नीलू के खिलाफ हो जाय—नीलू अपनी राह से कभी हट नही सकता। एक बार वह कोई निश्चय कर ले तो उसे कोई डिगा नही सकता। मै हर वक्त डरता रहता, नीलू कुछ कर न बैठे। जेल के राजबदियो को समय काटने की खुराक चाहिए। जेल के बाहर रहने पर जो असीम प्रेरणा उन्हे सदा चलाया करती है, उसी की पूर्ति के लिए जेल मे उन्हे नाना प्रकार का जुट, दलबदी और राजनीति करनी पडती है। परतु नित्य नया प्रोग्राम हुए बगैर जी कैसे लगे ? इसीलिए नीलू वाली बात उस बार ज्यादा आगे नही बढी। दूसरे ही दिन सवेरे जलपान के समय किसने तो बात उठाई—'रोज भीगा चना जलपान मे देता है। इसके बदले अगर चूडा मिले तो बहुत अच्छा हो।' बस फिर क्या था ! बात की बात मे नारा तैयार हो गया—'चना के बदले चूड़ा लेगे।' जेल के सभी एक स्वर मे चिल्लाने लगे। उसके साथ ही थाली और ग्लास बजाना शुरू किया। कोई सीटी बजाने लगा, तो कोई सीखचो मे अपनी थाली को हडहडा कर खीचने लगा, जिससे एक अजीब आवाज होने लगी। बहुतेरे लोग तो खिडकी पर चढ़ गये। दो जने खिडकी से टिन की छत पर चढ़ गये। जैसे अकस्मात जादू की छड़ी के स्पर्श से सबके सब एक ही

साथ उन्माद हो उठे। जिन्हे मे बहुत ही धीर और गभीर समझता था, देखा, उत्साह की अतिशयता से वे भी अपने को सयत नही रख पा रहे है। कई पागल की नाई 'कबल-कबल' की चीख मचाते हुए वार्ड के एक छोर से दूसरे छोर तक दौड रहे थे। उनके इस कहने से बहुतो को एक नया प्रोग्राम मिल गया। कई लोगो ने देखते ही देखते ढेरो कबल बाहर ला रक्खे। कबलो को टुकडे-टुकडे करने की कोशिश होने लगी। एक आदमी ने रसोई (जेल की स्थानीय भाषा मे मठहा) से एक जलता अगारा लाकर कई कबलो के ढेर पर डाल दिया। उससे कुछ-कुछ धुआ और एक अजीब तीखी बू निकलने लगी। दो जने दौडे गये। लोहे के जिस बर्तन मे भिगोया चना रक्खा था, उसे उलटा कर गिरा दिया। नजदीक का वार्डर पगली घटी (अलार्म) बजाने लगा। लगातार बजाता ही गया। उसे सुनकर तमाम जेल मे जहा जो वार्डर थे, सभी सीटी बजाने लगे। जैसे फुटबाल के रेफरियो से इजिन ड्राइवरो की सीटी की होड हो रही हो। अनगिनत सीटियो की तेज और तीखी आवाज ने जेल की आबहवा को एक नया रूप दे दिया। गुमटी से लगातार घटा बजता जा रहा था—टन् टन् टन्। जेल-गेट मे वैसा ही एक घटा बज रहा था। किताब मे पढा हुआ हूबहू जहाज डूबने का दृश्य! और इधर एक जोरो का शोर—'कबल जलते रहे', 'थालिया बजती रहें', 'नौकरशाही नाश हो'—और भी क्या-क्या, जो साफ समझ मे नही आ रहा था। जेल के कर्मचारी, जो जहा भी जिस हालत मे थे, उसी हालत मे हडबडा कर दौडे आने लगे। गुमटी पर एक साइन बोर्ड लगा दिया गया था—'वार्ड न. 17-18-19।' गेट की ओर से लाठी ले-लेकर वार्डर लोग गुमटी की ओर आने लगे। बहुतो के वर्दी नही, खाली बदन, नगे पाव। जेल के डाक्टर हरेन बाबू बनियान पहने ही आ गये। गुमटी से एक वार्डर एक सांस मे चिल्लाने लगा—सत्रह, अठारह, उन्नीस नबर। और सुनकर सब उन्ही वार्डो की ओर भागने लगे। कि एक गुजन-ध्वनि सी हुई—'मिलिटरी आ रही है।' हाथ मे बदूक लिए मिलिटरी की एक टोली जेल के गेट से अदर आयी। उनके हाव-भाव मे कोई त्रस्तता नही थी। क्विक मार्च करते हुए वे गुमटी के करीब आये, उसके बाद तीनो वार्ड के कामन गेट के सामने आकर खडे हुए। वार्ड के कोने मे. ढेर-सा बेल रक्खा था। पहले दिन वार्ड के बेल का पेड काटा गया था। सब लोग उस पर चढ़कर 'गाधी जी की जय' बोला करते थे, काग्रेस का झंडा फहराते थे। जेल के बाहर बहुत

दूर से दिखाई देता था। इसीलिए इस पेड को काट डालने का हुक्म हुआ था। चार वार्डरो ने आकर पहले ही बेल के उस ढेर को घेर लिया, ताकि लाठी-चार्ज के समय कैदी लोग वार्डरो के खिलाफ उसका उपयोग न कर सके। मिलिटरी वालो ने वार्ड को घेर लिया। फिर कई वार्डर, उनके साथ कई 'मेट' (कानविक्ट ओवरसियर) और कई जेल-कर्मचारी वार्ड मे घुसे। और, उसके बाद ही शुरू हो गया लाठी-चार्ज, जेल की भाषा मे हलका लाठी-चार्ज। इसमे दोषी और निर्दोष का कोई ख्याल नही, जो निर्विरोधी और शातिप्रिय होते है, ज्यादातर वही अधिक मार खाते है। मारते वक्त सिपाही लोग मुह से कैसी तो एक आवाज कर रहे थे। 'उधर', 'उधर कई ठो भागे', 'इस बदमाश को मारो।' वार्डर लोग चिल्ला रहे थे। मेटो के उत्साह का अत नही था। जिधर अफसर लोग खडे थे, उधर के कैदियो की हरगिज खैर नही थी—क्योकि वार्डर लोग उच्चाधिकारियो को अपनी निपुणता दिखाने को उतावले। कुछ लोग गिर पडे—सर पर चोट लगने से वे बैठ पडे थे। दरभगे का एक निरीह राजनीतिक कैदी बैठा जप कर रहा था। उसे भी छुटकारा नही मिला। वे सब हमारी ओर आने लगे। घबराहट-सी होने लगी। पिटूगा, यह जानता हू, प्रतिरोध नही कर पऊगा, यह भी जानता हू। सोचने लगा, नसीब मे कैसी मार बदी है, मेरे माथे को निशाना बनाकर एक लाठी छूटी। अपने अनजानते कब मैंने दोनो हाथो से सर को ढक लिया था, नही जनता। जाना तब, जब हाथ मे चोट लगी। लाठी के ऊपर लोहे का एक कडा लगा था, उससे हाथ कट गया। और भी दो-तीन लाठिया इसी तरफ आ रही थी। मै बैठ गया। नीलू ने मुझे जकड लिया। बोला, 'फिर सर को ढाको, ढक लो'। नीलू पर लाठी के कई वार लगे, मुझ पर एक। नीलू के माथे से लहू बहने लगा। वार्डर लोग दूसरी तरफ चले गये। वे लोग एक जगह पर ज्यादा समय नही बरबाद कर सकते 'पूरे वार्ड मे कैसा तो एक थम-थम करता-सा भाव। कोई-कोई लेट पडे थे। जो खुशनसीब घायल नही हुए, उनमे से कोई घायल के लिए पानी ला रहा था, कोई बेहोश साथी के आख-मुह मे पानी के छीटे देने लगा, कोई अखबार या गमछे से निस्पद पडे मित्र को हवा करने लगा। जिन्हे अपेक्षाकृत कम चोट लगी थी, वे आप ही अपनी प्राथमिक चिकित्सा करने लगे। जेल अस्पताल के भरोसे रहने से आज शायद कुछ हो ही नही। जिन्हे चोट बिलकुल लगी ही नही, वे घायलों के जेनरल इंसपेक्शन में निकले थे—भयकर आधी के

बाद लोग जैसे गाव के नुकसान का अदाजा लगाने के लिए निकलते है। इसके बाद दवा-दारू लेकर आये जेल के डाक्टर और कपाउडर—उनके साथ कैदी कुछ स्ट्रेचर लेकर आये—ज्यादा घायल हुओ को अस्पताल ले जाने के लिये।

'बोलो रे अस्पताल।' अस्पताल पहरा का गला यहा से साफ सुनाई पडता है। वह बिना कुछ बोले अपने भोडे गले से चीत्कार कर उठा।—शायद ऊघ रहा था,—सहसा जागकर अपने कर्त्तव्य के प्रति सजग हो गया। इस चीख-पुकार से शायद अस्पताल के किसी रोगी को नीद नही आ रही थी। एक तो सेवा-सुश्रूषा करने वाला नही, जिस पर इस तरह रोज-रोज उनीदे रहकर रात बिताना। इसके पहले के सुपरिंटेडेट ने यह नियम कर दिया था कि अस्पताल के 'पहरा' को रात मे गुमटी की पुकार का जवाब देने की जरूरत नही है। मेडिकल ग्राउड पर सुपरिटेडेट कैदियो को तरह-तरह की सुख-सुविधा दे सकते है। इस विराट प्रेषण यत्र के भीतर, इस मेडिकल ग्राउड्स के छिद्र-पथ से ही कुछ हवा-प्रकाश प्रवेश कर सकता है। हमदर्द कर्मचारीगण इसी के बहाने कैदियो को कुछ सुख-सुविधा देते है। नये सुपरिंटेडेट ने आकर पहरा की हॉक के उसी पुराने नियम को फिर से चालू कर दिया है। हमदर्दी और सेवा के लालायित रोगी कैदी रोगशय्या पर पडे-पडे क्या अपने स्त्री-पुत्र-परिजन के बारे मे नही सोच रहे है? बीमार होने से ही जेल मे घर की याद ज्यादा आती है। साधारण कैदी लोगो को जेल से बाहर रहते समय शायद दोनो जून भोजन ही नही मयस्सर होता था। जेल मे और कुछ नहीं चाहे कम से कम दोनो बेला दो मुट्ठी अन्न के लिए अनिश्चयता नही होती। मगर उससे क्या, बीमार होने से वे अपने को बिलकुल असहाय समझते हैं। ये बीमार कैदीगण हजारो चिंताओ के बावजूद आज क्या मेरे बारे में एक बार सोचे बिना रह सकेगे? सहानुभूति से न सही, आतक से भी वे आज मेरी फांसी की बात जरूर सोच रहे होगे—ठीक मेरे बारे मे नही, एक अचीन्हे फासी के मुजरिम के बारे मे, जो एक नबर सेल मे है।

अस्पताल के दुमजिले पर एक खुले बरामदे मे टी. बी. के रोगी रहते है। उस जगह से फांसी का मंच साफ दिखाई देता है। आज मंच के चारो ओर रोशनी से झलमल है, सतरी लोग मच के चारो ओर पहरा दे रहे हैं। क्या पता, कोई अगर रुपया-पैसा खर्च करके वार्डरो के जरिये मंच के कल-कब्जे को बेकाम कर दे। टी. बी के वे रोगी यह दीवाली देख रहे है और शायद हो कि उनके प्राण सूख रहे

हो। जीने की आकाक्षा होते हुए भी वे तिल-तिल मर रहे है। फिर भी फासी के मुजरिम के बनिस्बत अपने को वे भाग्यवान समझते है। उनका दीर्घनिश्वास और अनमागी करुणा माथे पर लेकर मुझे जाना पडेगा। मेरी फासी तो फिर भी जेल के अदर सामयिक हलचल और विषाद लायेगी। मगर इनकी मौत को तो कोई जान नही पायेगा। इनके निकट आत्मियो के पास एक सर्विस पोस्टकार्ड पहुचेगा—और, अस्पताल की मृत्यु-सख्या में एक की वृद्धि होगी। उसकी मौत की रात मे जेल के डाक्टर शायद रजाई से बाहर नही निकलेगे। अस्पताल वार्ड का पहरा केवल रात को हॉक लगाते समय 'जमा' की सख्या मे हठात एक गिनती कम करके चिल्लाता रहेगा। और रात के सन्नाटे को तोडते हुए गुमटी के वार्डर को मजाक से खबर देगा—'एक मुलजिम एकदम रिहा।'

रेलगाडी की सीटी सुनाई पड़ रही है। बारह कब बज गये। ट्रेन छूटी। स्टेशन काफी दूर है, मगर लगता है, प्लेटफार्म का शोरगुल कानो मे आ रहा है।

यात्रियो की धकापेल। 'कुली! कुली! इधर!' रौतारा स्टैशन के स्टेशन मास्टर की वह चीख—'घंटी! घटी!' सिगनलर घटी बजाता है।

रेलगाडी की सीटी जेल की सीमित दुनिया से उन्मुक्त उदार पृथ्वी का सयोग-सूत्र हैं। प्राण को ऐसा उदास, इतना उतावला करने वाली बासुरी की धुन की कल्पना कोई वैष्णव कवि भी कभी नही कर सका। 'कानो से होकर मर्म मे पैठ गयी।'—आज यह मात्र छदोबद्ध शब्दविन्यास ही नही। किस अज्ञात इथर का कपन मन की रुधी तत्री को इतना तरगित करता है? चटकता के भोर का भोपू मजदूर टोले मे सामयिक आलोडन जरूर जगाता है, पर रेल की सीटी कैदियो के दिल मे तेज धडकन जगाती है, प्राणो मे जगाती है कितनी सीधी मीठी स्मृतिया, रूप देती है कितनी कायाहीन विनती और वासना को! रेलगाड़ी के चलने की आवाज सुनाई पड रही है—दूर, कितनी दूर चली जा रही है—अधेरे मे दोनों ओर का कुछ दिखाई नही देता—केवल विशाल सीमाहीनता का अनुभव किया जा सकता है—किसी प्रचार की बाधा नही।

सिपाहीजी बैठा ऊघ रहा है। अत्यत चीन्ही हुई वह बिल्ली धीरे-धीरे मेरी ओर आ रही है। अचानक वह ठिठक गयी—मै दरवाजे पर बैठा हूं, शायद इस-लिए आने की हिम्मत नही हो रही है। थाली चाटने के लिए दिन और रात मे जरूर आती है। हफ्ते मे एक दिन थोड़ा-बहुत दही मिलता है, और दिन किसलिए

आती है ? जेल मे रहकर थोडा-बहुत निरामिस खाना भी सीखा है। आश्रम मे सहदेव का जो कुत्ता था, देखता था, वह भी निरामिस खाना ही पसद करता था। अब वह कुत्ता कहा है ? शायद सहदेव का बडा भाई उसे घर ले गया है। लालटेन की रोशनी मे बिल्ली का रग साफ दिखाई पड रहा है। बाघ जैसी पीली, काली और भूरी धारी। देखने मे खासी है यह बिल्ली। उस दिन जेलर साहब ने मजाक से कहा, 'क्यो, बिल्ली से मिताई की है ? नाम क्या रक्खा है ?' मैने कहा, 'नही-नही, यो ही आई है।' 'तो इसका नाम रखिये। तो जो।' उसके बाद अपनी रसिकता पर आप ही हो-हो करके हस पडे। जेलर साहब के दात मोती जैसे मफेद है—टूथपेस्ट के विज्ञापन के दात जैसे।

मै उठकर एक ओर खडा हो गया, बिल्ली को रास्ता देने के लिए। वह एक बार बोली। अभी भी मुझ पर विश्वास नही कर पा रही है। थाली से थोडी-सी तरकारी उठा ली—निनुआ की तरकारी। बिल्ली निनुआ खाती है ? बिल्ली को निशाना बनाकर एक टुकडा मारा। म्याऊ, करके वह भाग गयी। निनुआ का वह टुकड़ा लेकिन सीखचे मे लग गया, बाहर नही गया।

मै और नीलू आश्रम मे मा के कमरे मे चौकी पर बैठकर नारगी खा रहे थे। दोनो मे इसकी होड लगी थी कि नीबू के छिलके को खिड़की के सीखचे से बाहर फेकना होगा, छिलका सीखचे मे न लगे। हाय राम ! सब लेकिन सीखचे मे लग जाता। खिडकी मे लोहे की छड़े ही कितनी है और जगह ही कितनी ले रक्खी है उन्होने, पर छिलको को ज्यादातर उन्ही में लगना था।

…घूम-फिर कर आखिर नीलू की ही बात बार-बार क्यों याद आती है ? चूकि भूलना चाहता हूं, इसीलिए तो नही ? जानते हुए जो बात मन ही मन आज कितने दिनो से कह रहा हू, उसे क्या मेरा अज्ञात मन किसी भी प्रकार से नही ले पा रहा है ? सच ही, मै जानता हू कि मेरे खिलाफ गवाही देकर नीलू ने अपना फर्ज ही अदा किया है। किसी आत्मसम्मानशील, सत्यनिष्ठ राजनैतिक कार्यकर्ता के लिए इसके सिवा दूसरा चारा नही था। यह लेकिन युक्ति की बात हुई। सोई चेतना शायद सोचती है कि यह युक्ति अदालत मे चल सकती है, कितबो मैं छपे हरूफो में देखने मे यह अच्छी है, पर अन्यत्र इसका स्थान नही। नही तो घूम-फिर कर नीलू की ही बात क्यों याद आये ? अपनी पार्टी के प्रति एकनिष्ठता दिखाने के लिए सहोदर भाई की फासी के पथ को सुगम कर देना

हृदय की सतता का ही सबूत है या कि रोगी मन का परिचय ? शायद नीलू के इस व्यवहार का मेरे भीतर का असली मै हरगिज समर्थन नही कर पा रहा हू, इसीलिए ऊपर का मै पुरानी याद के मधु से उस दाह की जलन को स्निग्ध कर रहा हू ।

फिर आकर दरवाजे पर बैठ गया, इस बार बायी ओर झुक कर। बाये हाथ से सीखचे को पकडे दाये झुक कर, दाये हाथ से सीखचा थाम कर जैसा स्वाभाविक और आराम देह लगता है, बाये भार देकर बैठने से वैसा नही लगता। ठीक जहा जगह नीची है, वही बैठा। बहुत बडे-बूढे हाथी की गरदन पर ठीक महावत के पीछे बैठा हू, ऐसा लगता है। ऐसी भी उद्भट कल्पनाए दिमाग मे आती है । उद्भट लेकिन कैसे हुई ?

काढागोला के धनी गृहस्थ धनपत यादव के गाव पर गया था। पुलिस का ख्याल था, उसके जमात है डकैतो की, उस पर बी. एल केस चलेगा। काग्रेस मिनिस्ट्री का समय था, वह। वह हमे मीटिंग करने के लिए अपने गाव ले गया था। उद्देश्य था इसका दरोगा को डराना—दरोगा जिसमे यह सोचे कि वह काग्रेस का आदमी है। बडी जोरदार मीटिग हुई। खान-पान के बाद उसने कहा, 'चलिये, शिकार का प्रबध किया है। बबूल और केवडे के जगल मे हाथी पर सवार जा रहा था। मैं महावत के ठीक पीछे था—बूढा हाथी, गर्दन के पास खासा गड्ढा-सा हो गया था। उस पर बडे आराम से पद्मासन मे बैठा था । सामने बहुत बडा एक पीपल का पेड। अचानक हाथी को पीपल का पत्ता खाने का ख्याल हो आया। सूड उठाकर उसने एक छोटी-सी डाल को तोडने की चेष्टा की। पल मे क्या हो गया, समझ नही पाया। मुझे लगा, मुझे चक्की मे डाल कर चूर-चूर करने की कोशिश की जा रही है। जिस गड्ढे पर बैठा था, हाथी के माथा उठाने से वह सिकुड गया और उसने मेरे शरीर के निचले हिस्से को कसकर दबाया। मै पीडा से चीख उठा। महावत ने समझा। उसने हाथी की सूड को नवा दिया। मै उतर पडा। पाव की तरफ का अग अवश-सा हो गया था।

मेरे सेल का वार्डर दीवार के सहारे सो रहा है। पगडी को खोलकर नीचे रख दिया है। तीन नबर सेल का वार्डर भी शायद सो रहा है। और बाहर इस वार्ड के वार्डर के पैरो की आवाज सुनाई पड रही है। सभी सेल शात है। सभी शायद सो रहे है। आज वह पगला भी सो गया क्या ? बम वाले बाबू लोग शायद बत्ती

जलाकर पढ रहे है । झीगुरो की झनकार सुनाई पड रही है। लेकिन इनका सहगान आश्रम के झीगुरो जैसा जीवत नही है। बचपन मे जाडो की रात मे नीद टूट जाने पर झीगुरो की झी-झी जिस रहस्य के रगमहल का द्वार खोल देती थी, यह झनकार वैसा प्राणमय नही है। नीलू कहा करता था, वह एक प्रकार के चीटो की आवाज है। उससे कौन तर्क करे ? जेल की आबहवा से झीगुर की बोली का मानो मेल नही बैठता। रुटीन, गिनती, शृखला, प्राचीर, नियमानुवर्तिता मे इस विलास का स्थान कहा ? किंतु दीवार और सीखचो से सब कुछ को रोका जा सकता है क्या ?

हुड-हुड करके नये दल के वार्डर आ गये। मानो एक बज गया। जरूर ये तीन होगे—एक मेरे सेल का, एक तीन नबर सेल का और एक इस वार्ड का। एक मेरे सेल के अगना मे आया। उसने धीरे से उस सोये हुये वार्डर की पगडी उठाली और बाहर रख आया। उसके बाद आवाज दी, 'ऐ हैदर, आज क्या यही सोओगे?' हडबडा कर वह उठ बैठा, जेलर साहब तो नही आ गये ! 'कौन, किसुनचद, नया दफा आ गया अरे भई, दिल्लगी मत करो। पगडी कहा रख दी, बताओ।' नये सिपाही ने कहा, 'मुझे क्या मालूम ? वाह रे वाह ! मैं तो बस आ ही रहा हूं।' हैदर ने पहले तो यकीन नही किया, फिर डर के मारे उसका चेहरा उतर गया। नौकरी में नया-नया हुआ है। नौकरी में घुसते ही उसने यह सुना है, जेलर साहब राउड मे आने पर सिपाही को सोते देख उस समय तो कुछ नही कहते, सिर्फ उसकी पगडी हटाकर रख देते हैं। बाद मे जुर्माना करते है। अभी-अभी तो पिछले हफ्ते ही किसुन वार्डर की तकदीर मे यही घटा। उसने, कपडा-गुदाम के इचार्ज कैदी बिरिजविलास को डेढ रुपया घूस देकर एक पगडी जुटाई थी। दूसरे दिन पैरेड के समय उस पगडी को देखकर जेलर साहब ने पूछा, 'यह पगडी कहा मिली ?' पहले तो हरेकिसुन साफ इनकार गया। मगर जेलर साहब के जिरह से सारी बातें कह दी। हुआ यह कि यह अकेला ही नही गया, बीच मे बिरिजविलास को भी लिये-दिये साफ। मुह की अदा के साथ एक चुटकी बजाकर किसुनचंद ने कहानी खत्म की। हैदर समझ गया। वह खुशामद करके अपनी पगडी वापस लेना चाहने लगा। घरमुदे और दो वार्डर भी मेरे सेल के सामने आ खडे हुए। हैदर को पगडी वापस मिल गयी। सबने मिलकर निबटारा कर दिया—कल दोपहर मे हैदर की ड्यूटी अपर डिवीजन के राजनीतिक कैदियो के वार्ड में रहेगी, वह वहा से

जुटाकर एक ग्लास दूध किसुनचद को पिलायेगा। हसते हुए सब बाहर चले गये।

इनके इस कर्मक्लात जीवन मे भी सुख है,—निश्चित वेतन, स्त्री-पुत्र, परिवार ··दौरे से लौटा था। सरस्वती की माग मे सिदूर, हाथ मे शख की चूडी—दरवाजे पर खडी, हसती हुई। सलज्ज उत्कठा के साथ बोली, 'बैठो, सुस्ताकर जरा ठडे हो लो। इतने मे मै चाय बनाकर लाती हू।' मैने जवाब नही दिया, हसते हुए उसके पीछे-पीछे जाकर रसोई मे पीढ़ा डालकर बैठ गया। ओदी लकडी को फूक कर सुलगाने की चेष्टा से लाल और पसीने-पसीने हुआ मुखमडल लापरवाह बिखरे बालो से ढक गया था।—हो सकता था

लेकिन मेरा जीवन कृच्छ साधन के आदर्शो का गढा, और अगर मेरे मन की वासना और ही किस्म की होती, तो भी क्या उपाय था। पुरा-पडोसियो के मुह से सदा सुनता आया—'बिलू जैसा लडका मिलना मुश्किल है। और अपनी इस तारीफ को बरकरार रखने की आकाक्षा ने मुझे निवृत्ति की राह से कभी गिरने नही दिया। मन की कितनी दुर्निवार वासनाओ को कोड़े मारकर सयत रखा। मगर अपनी भावधारा का सब्लिमेशन होकर क्या मै किसी ऊंचे स्तर पर पहुचा? नही। वैसा होता, तो आज मन मे यह सशय क्यो जगता ? कितनी ही तरह की भोग की आकाक्षा मन के कोने मे क्यो झाकती ? कुछ भी करके नही जा सका। इतिहास में अपना नाम नही रख जा सका। फुटबाल मैच के टिकट खरीदने वालो की तरह केवल देशसेवको की आकी-बाकी लबी लाइन मे अपनी जगह बना लेने का सुयोग भर ही पाया। मेरी बात मेरे पडोसी भी शायद अगले सप्ताह भूल जायेंगे—अभी ही याद है या नही, क्या पता ! आखिर इतने दिनो तक किया क्या? मै अतिमानव तो नही हू, बहुत ही मामूली लहू-मास का आदमी—आदमी के सारे ही दोष सारी ही दुर्बलताए मुझमे है। कीट्स पचास साल की उम्र तक जिदा थे, शेली तीस साल। पिट् तेईस की उम्र मे इग्लैड के प्रधानमत्री हुए थे। और मैं तैतीस साल की उम्र मे कुत्ते-बिल्ली की तरह मरूगा। कोई जानेगा नही, कोई सुनेगा नही, कोई दो बूद गर्म आसू नही बहायेगा। जो भी करने की कोशिश की, वह बिलकुल बेकार गयी। इस नाकाम कोशिश की कोई कीमत नही। कवि जितने ही छद क्यो न गूथे कि इस धरती मे कुछ भी बेकार नही होता—जो नदी मरुभूमि मे गुम जाती है वह भी सार्थक है—ये सारी बाते बेमानी है। जिस कवि को

नाकामयाबी का अनुभव नही है, यह वैसो का ही भाव-विलास है।

शायद हो कि यह एकबारगी निरर्थक नही। मेरे जैसे दो-चार जीवनो का क्या मूल्य है? जो देखा—जनशक्ति का प्रवृत—स्वरूप पिछले अगस्त मे जो देखा—युग-युग मे सचित जगदल पत्थर के नीचे जिस सोई शक्ति का पता मिला, वह सचेतन होने पर क्या जो कर सकती है, उसका पूर्व स्वाद लोगो को समझाने मे मेरा दान कम नही है। राजनैतिक कार्यकर्ता की राह बडी बीहड बडी बधुर है। तख्त या तख्ता (सिहासन या फासी मच)। उम्मीद फासी की डोरी की रखो, हो सकता है, गौरव का राजमुकुट मिले। अपार कष्ट का जीवन। दिन-दिन तिल-तिल करके अपनी जीवन-शक्ति, उत्साह का क्षय होते देखोगे। अपने मन की तृप्ति के अलावा और कुछ की आशा करने से निराशा होगी। पूजीभूत ताच्छिल्य और उदासीनता के भार से जीवन दुर्वह हो उठेगा। एक कदम बढना चाहो, कितने सौ हजार लोगो के स्वार्थ पर आच आयेगी, और सब तुम्हारे दुश्मन बन जायेगे। किसी एक का सम्मान सदा कर सकते हो, परतु कदम-कदम पर यह अनुभव करोगे कि तुम दस आदमी की उपेक्षा और उपहास के पात्र हो। ऐसे जीवन से जेल आना राहत की सास लेकर जी जाना है—मौत की सजा भी शाप मे वरदान हैं। कितने लोग तो लडाई मे काम आ रहे है—बेकसूर। क्यो, वे यह नही समझते। कितने लोग भूखे मर रहे है, बिना इलाज के मर रहे है। गुनाह यह कि जन्म पर उसका कोई अधिकार नही था, उसी का अमोघ निर्देश। रास्ते में गाडी से दबकर मरने की तरह, खेतो मे साप के काटे मरने की तरह, राजनीतिक क्षेत्र मे मृत्युदड महज एक आकस्मिक घटना है। इससे ज्यादा कुछ नही। अपने दल से बाहर दुनिया से सघर्ष। कितनी प्रतिक्रियाशील शक्तियो से सघर्ष। इसके लिए तो हर राजनैतिक कार्यकर्ता तैयार ही रहता है। लेकिन अदर ··? अदर का सघर्ष तो और भी भयकर है, दल के अदर उपदलो का सघर्ष, व्यक्ति-व्यक्ति के सघर्ष, स्वार्थ-स्वार्थ का सघर्ष, जाति-जाति का सघर्ष, प्रदेश-प्रदेश का सघर्ष,—जी ऊब जाता है। यह सब कुछ राजनीति के खेल के नियम में है, निठुर और निर्मम नियम, यहा कमजोर का स्थान नही। सभी आगे बढ रहे है, पीछे के लोग गिरे या मरे, पलटकर ताकने की जरूरत नही ·।

'मच्छर खूब काट रहे है, क्या बाबूजी?' वार्डर ने पूछा।

'हा, क्यो?'

'थोडा मिट्टी का तेल बदन मे क्यो नही लगा लेते ? सरसो का तेल तो अभी मिलेगा नही, नही तो कोशिश कर देखता।'

'अच्छा दो।'

सोचा, सरसो का तेल न मिलना ही अच्छा है। उस रोज सरसो का तेल लगा कर सोया था। नीद टूटी तो देखा, तमाम शरीर मे बेशुमार चीटिया लगी है। छोटी-छोटी लाल चीटिया शायद तेल खाना पसद करती है। वार्डर ने लालटेन की कागज की ठेपी को खोला और उसी को थोडा-सा फाडकर लबा-सा बनाया और उसी को लालटेन मे बोर कर मेरी हथेली पर दो-एक बूद करके किरासन का तेल दिया। मैने उसे सारे शरीर पर अच्छी तरह से लगाया। कैसा ठडा-सा लगा—ओडी कोलोन जैसा डिगबोई मे क्या मच्छर नही है ?

मेजर गोमेस ने लेकिन पटना कैप जेल मे किया था। किरासन तेल से उसने कोई इमलसन तैयार किया था। उतने बडे जेल मे एक भी मच्छर नही था। साहब खामाख्याली था तो क्या हुआ, था काम का आदमी। पगला जैसा, काला लबा, कहता था, 'मै इडियन हू।' एक दिन गया के एक राजबदी से उसने कहा था, 'जावान, तुम भी साले हो, मै भी साला हू। मै सब सालो से माफी मागता हू।' सबको वह जवान कहता था

'हेइया जवान, हेइया। कवैया गाव के सैकडो लोग बडे-बडे गाछ के तने को लुढका लाकर रास्ते पर ढेर लगा रहे थे। हसते-खेलते ही धमदाहा-पूर्णिया रोड पर पेडो के तने का एक बैरीकेड बन गया। अदम्य उत्साह ने असभव को सभव कर दिया। जिन गरीब किसानो को जिदगी मे कभी खुलकर हसने का मौका नही मिला, उन्हे आज हुआ क्या है; हर एक को कुछ न कुछ कहने को था। इन कई दिनो मे सबके पास कहने को कुछ न कुछ बात जमा हुई थी। कमी थी श्रोता की। वीर-गाव थाने मे गोली चली है, सैतालीस आदमी मारे गये, घायलो की तो गिनती ही नही। दरोगा साहब की पत्नी ने उनसे कहा है, अगर तुम नौकरी से इस्तीफा नही देते तो मैं अब तुम्हारी रसोई नही करने की। ग्राम पचायत ने हरखू हजाम को जुरमाना किया है, उसने नायब बाबू की हजामत बनाई थी—हरखू ने सबके सामने अपना कसूर कबूल किया है—उसने कहा, 'नायब बाबू को गाधी टोपी पहने देखा। मैंने समझा कि उन्होने गाधीजी मे नाम लिखाया है—मुझे जो चाहे, सजा दो ? सिर्फ ऊगली मत काट लेना।' दामी और पल्टन कोसी नदी के बीच मे स्टीमर पर

है ? नदी से बाहर कही जमीन पर रात बिताने का साहस नही है। ऐसी और भी कितनी ही बाते

पेड के तनो का ढेर काफी ऊचा हो गया। मिलिटरी की लारी अब नही आ सकेगी। अब तक यह याद नही आया, रहुआ के पास रास्ते के किनारे बरगद के बडे-बडे पेड है। 'चलो-ओ, चलो-ओ।' कुल्हाडी, कुदाली, दाव, कटारी, जिसे जो मिला, वही हाथ मे उठा लिया। क्विक मार्च नही, खूब तेज दौड ! थक जाने पर भी थमने का उपाय नही। हरेश्वर के हाथ मे काग्रेस का छोटा-सा एक झडा। उसने कुछ ही महीने पहले काग्रेस सेवादल की ट्रेनिग ली थी——जिला काग्रेस कमेटी ने गाव वालो के लिए एक ट्रेनिग कैंप खोला था, उसी मे। इस समय गाव मे उसकी कद्र कितनी है। कुछ दिनो से वह नये सीखे हुए युयुत्सू के दाव-पेच गाव मे दिखा रहा था, लाठी के पैतरे, साइकिल की सवारी। उसने गाना शुरू किया—'नौजवान निकले——।' हाफते हुए बूढे-बच्चे-जवान उसे दुहराने की कोशिश कर रहे थे।

रहुआ। रहुआ गाव के लोग भी आ जुटे। दो घटो में रहुआ का अध्याय समाप्त। फिर कही—— 'चलो——ओ, चलो ओ।' कृत्यानद स्टेशन की तरफ। रास्ते को बद करने की कोई उत्तेजना नही। थाना जलाने के बाद ये काम निरे पनछे लग रहे थे। अबकी करैया और रहुआ के मिले-जुले लोग, जैसे भूत सवार हो, नशे में मस्त। मुझे वे साइकिल से नही उतरने देगे। सब मिलकर साइकिल को ठेलते हुए ले जाएगे। भला उतने लोगो मे साइकिल पर बैठकर जाया जा सकता है ! मगर कौन किसकी सुनता है !' 'गाधी जी की जय !' सामने कीचड 'कुछ परवा नही !' 'भारत माता की जय !' उसी ओर साइकिल चलेगी। 'बंबई से आई ताजा खबर !' कितनी नयी खबरे। रहुआ का एक छात्र जेब से एक लिथो किया हुआ कागज निकाल कर आवृत्ति के ढग से पढने लगा। कागज पर बड़े-बडे अक्षरो मे लिखा था——'देश की पुकार।' 'जिन्ना साहब गिरफ्तार हो गये।' 'विजय लक्ष्मी पडित पर गोली चलायी गयी।' 'मुगरे जिले मे स्वराज हो गया।' और भी बहुत-सी चचल कर देने वाली खबरें। आज उनमे संभव-असभव के विचार की क्षमता नही थी। हो भी कैसे, पिछले कई दिनो मे उन्होने कितनी ही असभव चीजो को सभव होते देखा है। किसी भी बात को झूठ सोचने का उन्हे भरोसा नहीं होता जिस दिन सदर कलक्टरी पर कब्जा किया जायेगा, उस

दिन रहुआ-करैया के सम्मिलित जत्थे का नेतृत्व कौन करेगा, इसके लिए काफी चखचुख हो गयी, —करैया का हरेश्वर या रहुआ का तिलकधारी सिंह, हरेश्वर ने सेवादल की ट्रेनिंग ली है, तो क्या हुआ, अभी ठीक से मूछे भी नही आयी है। करैया के लोग कहते है—वह तो 'बतरु' (नन्हा) है। और तिलकधारी ? वह तो बत्तीस मे हो आया है—यानी 1932 मे जेल हो आया। शायद मुझे पच बदे।

रहुआ गाव के भीतर रास्ते मे खडी थी एक बुढिया और कुछ अधनगे बच्चे-बच्चिया। सुना, बादर बहरगमिया की मा है। जात की मोची। इनके गाव के अदर रहने का रिवाज नही है। इसलिए इन्हे 'बहरगमिया' कहते है। एक लडके के हाथ मे गेदे की माला थी। बादर की मा और सारे बच्चे एक ही साथ बोल उठे 'परनाम'। शायद पहले से सिखाया गया था। बुढिया ने सकुचाते हुए कहा, 'आपकी कोई खातिरदारी तो नही कर सकी। और करती भी क्या ? आपका मजूर कराया रहट है, इसलिए दिन सुख से कट रहे है। दो साल से कुछ-कुछ बालू जम रहा है।' देखा, बुढिया खूब बोलना पसद करती है। याद आ गया—'अर्थ क्वेक रिलीफ' का कुआ। काग्रेस वालटियर विरची ने मकसूदन सिंह से पाच रुपया घूस लेकर 'कामत'[1] पर कुआ बनवा देने का वायदा किया। मै जाच मे गया तो कुए को बादर बहरगमिया के झोपडे के सामने धमदाहा-पूर्णिया रोड के किनारे बनवा दिया।

कहा, 'एक लोटा पानी पिलाओ भाई, एकदम ठडा देखू, तुम्हारे कुए का पानी कैसा है।'

इस अनसोचे अनुरोध पर क्या करे, बुढिया जैसे सोच नही पा रही थी। चेहरे पर सम्मान से ज्यादा भय का चिन्ह ही झलक रहा था। भीड मे उसके गाव के जो लोग थे, वह प्रश्नभरी निगाह से उनकी ओर ताकने लगी। इस कुए का पानी मास्टर साहब का लडका पियेगा ? इस कुए का पानी तो गाव का और कोई नही पीता। ऐ ? वह पानी ला देगी ! उसके सर पर आसमान टूट गिरा। तिलकधारी सिंह ने उसे हिम्मत देते हुए कहा, 'लोटा मलकर पानी ले आ, बिलू बाबू कह रहे है।' लोटे मे पानी आया। घूघट वाली बादर की स्त्री ने साथ मे सखुए के पत्ते मे मोडकर, धूल भरा, बहुत दिनो का रक्खा थोडा-सा गुड दिया। शरमाते बच्ची-बच्चो की मौखिक आपत्ति को टालकर उनकी हथेली पर जरा-

[1]जमीदार जिसमे खुद की खेती कराते है, वह जमीन।

जरा गुड दिया। खुद भी गुड के साथ पानी पिया। बादर की मा एकटक मेरी ओर ताक रही थी। आखो की दृष्टि, खाते वक्त मा हाथ मे पखा लिए बैठती तो जैसी लगती, ठीक वैसा ही। मुझे खिलाते समय सबकी आखो मे एक ही भाव फूट उठता है—मा, ताई, सझलीदी, सहदेव की मा, दूबेजी की स्त्री, सरस्वती—सबकी। ध्वनि उठी, 'बोलो, गाधी जी की जय'। हरेश्वर ने कहा, 'बादर की मा, मुझे भी पानी पिलाओ।' डोल मे पानी आया। सब छीना-झपटी करके बहरगामिया का छुआ पानी पीने लगे। गाव के सामने, समाज की निगाहो के सामने यह दुनिया के बाहर की हरकत करने की हिम्मत इन्होने आज पायी कहा से, सबके आख-मुह मे बहादुरी दिखाने का भाव झलक उठा। 'गाधीजी की जय', 'ज : महात्मा जी की जय।' निरतर उठती जयध्वनि मे भी सब अपने अपने मन की उदारता दिखाने को यत्नशील थे। यहा खडे होने का और क्या समय था? 'नौजवान निकले ।' बुढिया की आखो का कोना मानो जरा चिकचिक कर रहा था—कृतज्ञता की अधिकता से। ग्रामवासी की उदारता का यही उसका दिया मूल्य! महात्मा जी उसके 'गोसाई' (गृहदेवता) से ज्यादा जाग्रत देवता है। वह यही सोच रही थी। भूकप के बाद महात्मा जी इसी रास्ते से तो हवागाडी पर धमदाहा की ओर गये थे। हवागाडी पर उतने लोगो के बीच वह महात्मा गाधी को पहचान भी नही सकी। सिर्फ मास्टर साहब को पहचान सकी थी। बादर कहता था, 'महात्मा जी के बदन से जोत निकल रही थी।' गाधीजी के प्रति उसने प्रणाम किया

जनता जा रही थी। आगे जा रही थी। पीछे मुड़कर क्यो ताके? कितनी बादर की मा कितनी जगहो मे इस तरह प्रणाम कर रही थी। उन्हे देखने का समय कहा? उनके हाथों मे काम कितना है अभी? सर पर कितनी भारी जिम्मेदारी? 'जय विलू बाबू की जय।' एक ने कहा, 'बबई से आयी आवाज?' एक दल ने पूछा, 'क्या आवाज?' सुर मे सुर मिलाकर कहा, 'इनकलाब जिदाबाद।' करैया के उच्च प्राइमरी स्कूल का गुरुजी जयध्वनि करते समय नाचने लगा, जैसे नगरसकीर्तन हो रहा हो। उसका गला बैठ गया था। दमे के मरीज के खासते वक्त जैसी आवाज होती है, जय जय करते समय महज वैसे ही एक आवाज हो रही थी। मगर न तो था उसके उत्साह का अत, न ही थी अपने छात्रो के सामने आत्मसम्मान बचाने की कोशिश। एक आदमी घोड़े पर चढ़ा कृत्यानद नगर की

ओर से आ रहा था। हम लोगो को देखकर उतर पडा। उसने मुझे खबर दी, आपके भाई साहब तो कृत्यानद नगर आये है—हरखचद मारवाड़ी के गोले मे ! किरासन तेल की कीमत की जाच मे। उसने मुझसे तो और कुछ नही कहा, पर अगल-बगल के लोगो को फुसफुसा कर क्या तो कहने लगा। जनता जैसे बात जाहिर नही करना चाहती हो। समझ गया, नीलू—पीपुल्स प्राइस कट्रोल कमिटी का सेक्रेटरी—किरासन तेल का स्टाक या और कुछ की पडताल मे आया है। और, उसने कृत्यानद नगर के लोगो को रेल की पटरी उखाडने, रास्ता बद करने और टेलिग्राफ कातार काटने के खिलाफ कुछ कहा है। जनप्रवाह बढ रहा था। हमारे आदिम पुरुष पेट की खातिर, हताश मन से अनिश्चित लक्ष्य की ओर जिस प्रकार निकल पडे थे, वह वैसा नही था। यह नयी दुनिया की आशा मे उद्भ्रात जनता का निश्चित लक्ष्य की ओर चलना था। केवल होमोसैप्लेन्स कहने से करैया के इस मास्टर का पूरा परिचय नही होता और केवल बाइलॉजिकल नेसीसिटी कहने से उसके अनत उत्साह की पूरी व्याख्या नही होती। · रेल लाइन। वह वहा कृत्यानद नगर गाव दिखाई दे रहा है। आधे घटे के अदर लगभग चौथाई मील रेल की पटरी बिलकुल गायब हो गयी। रेल या लकडी के स्लीपरो को कधे पर उठाकर लोग मकई के खेतो या रेल लाइन के किनारे पानी मे फेंक रहे है। कृत्यानद नगर के दो सज्जन इन लोगो को ऐसा खतरनाक काम करने से रोकने के लिए आये हुए थे। लोगो ने हसी उडाकर, टिटकारी मार कर उन्हे रुखसत कर दिया। एक आदमी कास के गुच्छे से दो बालियो जैसा तैयार कर रहा था। कई लोग दौड गये। उन दोनो भले आदमियो को पकडा। हरिश्चदर ने उनके हाथो मे दो बालिया डाल दी। कहा, चूडी पहनकर भनसाघर (रसोई) मे जाकर बैठो। एक दूसरा आदमी बोल उठा, 'ऐ है, कैसी नाजुक कलाई है !' लो, दो चूडिया और, अपने नीलू बाबू को पहना देना और कह देना, कलक्टर साहब के पैसो से इस इलाके मे 'फुटानी' छाटने न आए। करैया और रहुआ के लोगो को मालूम है कि खुफियो से क्या बर्ताव किया जाता है। याद न हो तो उन्हे याद दिला देना कि निलहे विलसन साहब का क्या हाल हुआ था।' जनता के सयम का बाध टूट गया था। अब लोगो को मेरे सामने नीलू के बारे मे कुछ कहने मे हिचक नही। रेललाइन की कठपुलिया मे आग जल उठी। इतनी मोटी लकडी मे इतनी जल्दी कैसे आग लगा दी ? मैने तो देखा है, मा तो चूल्हा सुलगाने मे ही परेशान हो

जाती है। लाल गजीवाला रहुआ का वह छोकरा पादरी साहब की नकल कर रहा था। कल उन लोगो ने साहब के मकान का घेराव किया था। पादरी साहब ने कैसी आवाज मे 'गाधीजी की जय' कही, यह सुनकर सब हसते-हसते लोटपोट। अचानक रेल गाडी की आवाज सुनाई दी। सच ही तो, इजन दिखाई दे रहा है। आ ही पहुचा। मिलिटरी से भरी गाडी। साथ मे रहते है रेल के इजीनियर। भागो! भागो! जिधर सीक समाई—खाई-खदक, गड्ढे, खेतो की मेड होकर। पल भर मे सारी जनता छत्रभग हो गयी। टामीगन की कर्कश आवाज कानो मे लगी। मै कृत्यानद नगर की तरफ एक भुट्टे के खेत मे घुस गया। जानकर ही कृत्यानद नगर नही गया। जब गाववालो की सहानुभूति नही है, तो क्यो जाऊ। जल्दी मे साइकिल रेल की लाइन पर ही छोड आया। भुट्टे का खेत—पादरी साहब की दाढी ठीक भुट्टे के सन जैसी। पौधे भुट्टो से भरे। खेत की सोधी गध की मिठास मे बारूद की बू नही पहुची।

मुकदमा चलते समय सरकारी वकील ने मजाक करते हुए भुट्टे के खेत का ब्यौरा देते-देते कहा, गोरो ने भुट्टे के खेत देखकर कहा था कि मकई इडियन कॉर्न नही, नाजी कार्न है। जज साहब गभीरता छोडकर हसने लगे। पेशकार हसने लगा। मेरे वकील हरेन बाबू से भी हसे बिना नही रहा गया। पेरू और चिली के सूर्य मदिर मे नकली भुट्टे के पौधे रहते थे। पौधे की डठले और पत्ते चादी के, भुट्टे के दाने सोने के।

पलके तद्रा के मारे झुकी जा रही है। जरा हाथ पाव सीधा कर लिया जाय। आ.। बैठे-बैठे हाथ-पाव, बदन मे दर्द हो गया था। जम्हाई आ रही है। आज भी नीद नही आयेगी क्या? कितने लोगो के बारे मे सुनाता आया हू—फासी के एक दिन पहले उसके सारे बाल सफेद हो गये। मेरे भी तो नही पक गये? कोई आईना होता तो ·। कामरेड चनरबल्ली फासी से पहले पागल हो गया था और मुझे नीद आ रही है। गजब!

मेरे पास अगर बहुत रुपये रहे होते, तो आज मै विल कर जाता। बहुत-बहुत करोड रुपये। उससे मार्क्सवाद के प्रचार का काम होता। भारत के गाव-गाव मे रूस के बालक और किशोर सघ जैसे सगठन हो सकते। मगर रुपये कहा से आए? लाटरी का टिकट खरीदे बिना अगर लाटरी से रुपये मिलने की सहूलियत हो तो! रुपया पाने की सिर्फ तभी आशा थी। और राष्ट्र यदि हम लोगो के हाथ

मे होता तो काम करके दिखा देता दस साल के अदर देश का क्या किया जा सकता है। काग्रेस कार्यकर्ता लोग जब जेल से बाहर जाएगे तो मेरे नाम से जरूर कोई प्रतिष्ठान स्थापित करेगे। 'बिलू बाबू की सडक', 'बिलू आश्रम', नही, शायद मेरे अच्छे नाम का ही व्यवहार करेगे। पूर्ण-आश्रम। मगर मेरा नाम पूर्ण है, यह तो कोई जानता ही नही। सब तो बिलू बाबू को जानते है। उसके बाद भी कितना क्या हो सकता है। हो सकता है, पूर्णिया का नाम ही 'पूर्णनगर' हो जाय—स्तालिन ग्राद या गोर्की शहर की तरह। बाजार मे, बालमुकुद साव की धर्मशाला के मोड पर मेरी सगमर्मर की मूर्ति रहेगी—भापण देने की मुद्रा मे। हर साल उस दिन दल के दल लोग उसके नीचे जमा होगे—मेरी स्मृति मे श्रद्धाजलि देने के लिए! बद आखो की पलको पर एक हरी-सी शिखा देख रहा हू—जैसी मोर पख की आख होती है, लेकिन हिलती हुई, कपमाना शिखा लाल हो गयी, पीली, हरी, नीली, काली वह शिखा है या नही· अधेरा··

अपने रसोईघर के बरामदे पर ताई हसुआ से आम काटने बैठी है। एक टोकरी मे गुलाबखास आम। सामने बडा कटोरा। आमो के डठल काट-काट कर उस कटोरे के पानी मे रख रही है। मै और सरस्वती उनके सामने पीढे पर बैठे। ताई ने, कहा, 'एक ही थाली मे देती हू, दोनो जने खाओ।' आम काटकर ताई ने थाली मे दिया। सरस्वती ने ताई से कहा, 'ये कटे आम क्या इनके मुह मे रुचेगे, इन्हे समूचा-समूचा आम दीजिये।' ताई ने मजाक करते हुए सरस्वती से कहा, 'हाय राम, इसी बीच इतना!' इतना कहकर उन्होने मेरे हाथ मे एक समूचा आम दिया—सोने जैसा पीला रग, मुह के पास सिदूरिया लाल। मैने आम के नीचे की तरफ छेद कर लिया। दबा-दबा कर आम को नम कर लिया। उसके बाद चूस-चूस कर खाने लगा। मा सोने के कमरे के बरामदे पर थी रसोई मे आने को जी चाह रहा है, पर आ नही पा रही है, आगन में बहुत बडा साप, चिकना काला रग, फन फैलाये तना खडा। मा चीख रही थी, 'नीलू इसे मार, तुरत मार डाल।' पिताजी थे, कहा, 'ऊ हू, मारो मत। ताली बजाओ, भाग जायगा।' मगर नीलू बाबूजी का कहना सुने! वह एक विशाल लाठी लिए साप को मारने आ पहुचा। साप भाग चला। अधेरे कुए मे घुस गया। साप नहीं रहा। वहां कुए के डोल की डोरी हो गया। नीलू ने गुस्से के मारे डोल पर ही एक लाठी जमाई। झन्न की आवाज हुई।

जाने किस चीज की आवाज से तद्रा टूट गयी। दर के पास बूटो की आवाज। ऐ, तो क्या मुझे ले जाने के लिए आ गया ? अब दरवाजा खोलकर अदर आया शायद। सारे बदन से पसीना छूट रहा है। निश्चल और स्पदनहीन होकर पडा हुआ हू। न, दरवाजा नही खोला। तो, शायद नया वार्डर आया—राहत की सास ली। हा वही है। कितनी देर सोया ? ये भोरवाले वार्डर है क्या ? अभी तो चिडियो की चहक नही सुनाई पड रही है। पूछू क्या वार्डर से कि कितने बजे ? उहू। जरूरत क्या है ? समय होगा, तो खुद ही जान जाऊगा। पूछने से मुझे कमजोर दिलवाला समझेगा। एक मामूली वार्डर के सामने जिदगी की इस अतिम घडी मे छोटा नही बन सकता। वह पगला भी तो रात रहते ही चिल्लाना शुरू करता है। यानी सुबह होने मे अभी देर है। इस दुनिया से अब दो घटे का नाता! बाहर जब मौका था, तो जीवन का उपभोग नही किया। लबे तैंतीस साल किस तरह काटे, याद नही आता। निरर्थक जीवन की अतहीन विस्मृति की तह-तह मे एकाध स्मृति के ककाल जमा है। उसका परिचय मेरे सिवाय और कोई नही जानता। जीने को जी चाहता है, इच्छा होती है बाकी दो घटे के स्वप्न-विलास मे ससार को निचोडकर, भोग की जो भी चीजे है, समेट लू। यदि इस अतिम क्षण मे फासी रद्द करने का हुक्म आ पहुचे! ऐसा भी तो होता है। कितनो के साथ ऐसा हुआ है। जल्लाद ने खड्ग उठाया है। दूर से नक्षत्रवेग से घुडसवार आ रहे है। ऐ जल्लाद, वध मत करो। कितनी कहानिया पढ़ी है। पीथियस और डैमन।

अभी अगर सन् 1934 जैसा भूकप आये, जेल की दीवारे यदि टूट-टूट कर गिर जायं, फिर भी तो मेरे बचने का उपाय नही। जो फासी देगा, वह अगर हठात् बीमार पड जाय ? वैसे में दूसरा आदमी मिलने मे विलब नही होगा। कही हाई-कोर्ट से या प्रादेशिक एडवाइजर के यहा से मेरी फासी रोक देने की चिट्ठी आयी हो और दैवात् भाग्यक्रम से यदि वह खोली नही गयी हो ? अचरज क्या है ? कई साल पहले पजाब मे तो ऐसा हुआ। चिट्ठी बडे साहब की जेब मे ही रह गयी थी। उस आदमी की फासी हो जाने पर ख्याल आया। जीने की आकाक्षा मुझे कहा लिए जा रही है ? मैने तो किसी अनिर्दिष्ट शक्ति के अमोघ निर्देश पर कभी विश्वास नही किया। सचमुच ही क्या यह मृत्युमय है ? भय जरूर ही है। अभी-अभी जरा देर पहले वार्डर के पैरो की आहट से मन मे जो भाव हुआ था, वह भय

के सिवाय और क्या है ? उत्कठा की चरम अनुभूति से ही निराशा आती है। मेरे मन पर उसी निराशा की प्रतिक्रिया चल रही है ।

सन की मोटी डोरी। छुटपन मे उसी डोरी को हम 'लोक लाइन' कहते थे। उसमे एक फदा। फदे के शुरू मे पीतल का एक गोलक (नॉब)। डोरी मे आदि से अत तक खूब अच्छी तरह चर्बी लगाया हुआ । नीचे अधेरा गढा-देखने मे ठीक कुआ जैसा। कितना गहरा गड्ढा—शायद ज्यादा नही। काठ के तख्ते को खीच लेने पर जिसमे पाव दोनो झूलते हुए धड के, जमीन से न छू जाय, इसीलिए उस गढे की जरूरत है। लिहाजा, कुआ ज्यादा गहरा नही होगा। ज्यादा खोदने से तो पानी निकल आयेगा। चार-पाच हाथ से अधिक नही होगा। लेकिन गढा जितना गहरा होगा, और डोरी जितनी बडी होगी, नीचे गिरने समय शरीर को उतना ही ज्यादा झटका लगेगा, और वही झटका ही तो असली चीज है। नही तो गरदन के पास की हड्डी टूटेगी कैसे ? फासी का मतलब तो सिर्फ दम घोट कर मारना नही। फिर तो गला घोट कर मार डालने मे ही हो जाता—इतने औजार और साज-सरजाम की क्या जरूरत थी ? कम समय मे, कम परिश्रम से मौत की सजा देने के लिए ही फासी का चलन हुआ। पीतल के उस गोलक ने गरदन की हड्डी पर जोर से आघात किया, कुट्ट से जरा-सी आवाज हुई। फिर ? फिर सब शात। न, एक बारगी शात कैसे होगा ? मनुष्य मे जीने की इतनी आकाक्षा ! उस जीवन-विलासी इच्छा-शक्ति की ताडना से असहाय शिथिल देह क्या कुछ नही करेगी ? और इच्छा-शक्ति अगर नही हो, फिर भी तो रिफ्लेक्स ऐक्शन जनित आक्षेप है। बलिदान के बाद बकरे का धड तडपता रहता है।—उसके बाद फासी के मुजरिम का शरीर शून्य मे झूल जाता है, अधकार मे इधर-उधर डोलता है। डोरी को ढीला कर दिया गया। मृतदेह का पाव माटी से छू गया। डाक्टर पैर की नस काटेगा क्या ? किस्सा सुना था, कौन तो जी उठा था। इसीलिए इतनी सावधानी। फिजूल की बाते है सब। डाक्टर का वह सब काम ही नही। केवल सरकारी नियम के मुताबिक फासी के समय डाक्टर को मौजूद रहना होता है। उसे सिर्फ कहना होगा कि हा, मुजरिम सचमुच ही मर गया, कानून के लहजे मे, जब तक मर नही जाता, तब तक झुलाये रखना फासी की सजा है न, इसीलिए। उसके बाद दिल्ली के शाह की बावडी के छोटे सस्करण की नाई, सीढियो के जो धाप है, उनसे वह आदमी नीचे उतरेगा। वह निहायत ही ऐसा-वैसा नही। एक

क्षण के शारीरिक परिश्रम से कितने आदमी पाच रुपया कमा सकते है ? और फिर 'रेमिशन' तो है ही। बदस्तूर पीस वर्क (ठेका) मजूरी। शवदेह को, नही-नही, अब शवदेह नही, लाश को ऊपर लाया गया। वीभत्स चेहरा। आखे छिटक कर बाहर निकली आ रही है। कबल से ढक दी गयी। तख्ते को खीच लेने के बाद कैसी भयानक यत्रणा होगी ! आखो मे आसू आ रहा है। छि, कितनी देर के लिए यत्रणा ! शायद हो कि उतने समय मे महसूस करने की भी शक्ति नही रहेगी। शायद हो कि दूसरी चिंताओ से मन इतना अभिभूत रहेगा कि यत्रणा की याद भी नही रहेगी। बुरी तरह मे घायल हुआ आदमी भी लडाई के मैदान मे नशे मे हो जैसे, अपना काम करता जाता है। उसे क्या अपने दर्द की सोचने का अवकाश रहता है ? जब जीवन की ही आशा नही, तो एक पल की यत्रणा की सोचना बेकार है। सुना है, मरने के पहले क्षण पूरा जीवन सिनेमा की तसवीर की तरह आखो के सामने तिर आता है। मुझे यकीन नही आता। ' जिस मुल्क मे मौत की सजा नही है, यदि मुझे उस मुल्क मे सजा हुई होती, तो ? तो आजीवन कारावास की सजा शायद हो कि मुझे इस वैचित्र्यमयी धरती से विच्छिन्न करके रखता परतु जेल मे भी तो एक खंड जगत है, जेल में भी तो जाडा, गरमी, बरसात का परिवर्तन अनुभव किया जाता है। आकाश, वातास, चाद-सूरज, सितारे, वहा भी तो माधुर्य लुटाने में कंजूसी नही करते। वैशाख को आधी का पागलपन, पहली बारिश के बाद भीगी मिट्टी की गध, रात की वर्षा की मादकता भरी रिमझिम, कितनी स्मृतियो से भरी शरत की सुनहले तार मे मुडी धूप, सर्दियो की रहस्य भरी कुहेलिका——इनकी जेल की ऊची दीवारो के अदर भी निरकुश गति है। फिर लोगों का मुह देखना-चोर-डकैत ही हो, है तो आखिर आदमी ही। उनके बीच जिदा रहना क्या एक डोरी से झूल कर मरने की अपेक्षा कही अच्छा नही है ? अमरीका में कैसा है। बिजली की कुर्सी पर बैठा और पलभर में सब शेष। पीडा का नाम नही। लेकिन मरने के पहले की यत्रणा तो यहा जैसी है, वहां भी वैसी ही है। उनका मारण-यंत्र ही केवल जरा मार्जित है। यही तो फर्क है। लेकिन जिस देश मे बदूक की गोली से मारा जाता है, तलवार से काटा जाता है, गिलोटिन किया जाता है, उनसे तो हमारे यहा की यह व्यवस्था अच्छी है। खड्ग से गरदन काटने की सोचते ही मन सिहर उठता है। अच्छा फासी के मुजरिम को मार्फिया की सूई देकर या क्लोरो-फार्म सुघाकर तब मौत की सजा दी जाय, तो

सरकार का क्या नुकसान है ? उससे वह आदमी शारीरिक पीडा या मानसिक दुश्चिता से तो बच जायेगा ! उस आदमी को समाज से हटा देना अगर राष्ट्र का लक्ष्य होता, तब तो बेहोश करने के बाद ही फासी देने की व्यवस्था होती। सबसे अच्छा पोटासिअम साएनाइड है—तुरत सब समाप्त।

नीलू कालेज की लेबोरेटरी से थोडा-सा ले आया था। उस चीज पर कितनी चर्चा हुई, कितनी कल्पना। रबर के छोटे-से कैपसुल मे भरकर मुह मे रखना सबसे अच्छा है। यही तै पाया। गिरफ्तार होने से भी कोई परवा नही। जब जी चाहे, दात से कैपसुल मे एक छेद कर दो। उस समय जो सोचा था, जो तै किया था, यदि वैसा करके रक्खा होता तो आज ऐसी मानसिक दुश्चिता की नौबत नही आती। लेकिन तब तो यह सोचा नही था कि मुझे सचमुच ही इस चीज की जरूरत होगी। यदि होती, तो जैसे ही भोर रात मे बूटो की आहट होती, बस कैपसुल को चबा डालता। दरवाजा खोलकर वे सब काठ के मारे-से रह जाते। जल्लाद कैदी को निराशा होती। सुपरिटेडेट सोचते, यह फिर कौन-सी झझट आयी,—अब हजारो किस्म की विभागीय लिखा पढी का झमेला झेलना होगा। सब सोचेगे, मारे डर के हृदय की गति बद हो गयी। न, पोस्टमार्टम तो जरूर होगा, और तब पोटासियम साएनाइड की बात जाहिर हो जायेगी।

मगर पोटासियम साएनाइड खाना भी उतना आसान नही। उस बार तो मुझसे खाते नही बना। डिसपेप्शिया से परेशान था। तीसरे पहर रोज ही फुटबाल का मैच देखने जाया करता था। एक दिन देखा, जितेनदा एस डी ओ साहब को पुकार रहा है, 'कम अप'। दोनो मोटर पर खडे होकर मैच देखने लगे। एक दूसरे के कधे पर हाथ रखकर खडे थे। सहसा मेरा मन जाने कैसी हताशा से भर गया। अपनी दुर्बलता, अपनी तुच्छता, अपने ओज के अभाव की बात रह-रह कर मन मे चुभने लगी। लगने लगा, जितेन जैसी सप्रतिमता मुझमे क्यो नही आयी ? जितेनदा से रश्क नही हुआ। एस डी ओ साहब से मिताई के लिए भी मैं लालायित नही था, फिर भी क्यो तो मन अवसाद मे भर गया। क्षण ही मे जीवन से वीतराग आ गया। बार-बार जी मे यही आने लगा, जिदा रहकर क्या होगा; जिस गिरी हुई हालत मे मुझे जिदा रहना पडेगा, उससे मौत कही अच्छी है। सब ठीक हो गया—उसी रात पोटासियम साएनाइड खाऊगा। इसी प्रकार कितनी रात तक जगकर जिला काग्रेस के दफ्तर की बडी घडी की घटी सुनता रहा। जब

खाने की घडी आ गयी, तो मन मे आया, आज छोडो। 'लेडीज आफ्टरनून' बिस्कुट खाने की बडी इच्छा हो रही है। कल इस इच्छा को पूरी कर लेने के बाद मरने की सोची जायेगी। दूसरे दिन मन की हालत दूसरी हो गयी थी। उसके बाद जब भी सोचा, सारी घटना हास्य-कहानी जैसी लगी। पर, आज साएनाइड रहा होता, तो जरूर खाता। यह स्वेच्छा से आत्महत्या करना तो नही, दूसरी एक आसन्न विपदा से बचने का उपाय भर है। साएनाइड की शीशी को नीबू के बिरवे के नीचे गाड दिया था। जाने जी मे क्या आया था, शीशी को मिट्टी मे गाडने से पहले उसे बादामी रग के एक मोजे मे लपेट दिया था। अभी भी जरूर वहा गडी पडी होगी।

नीबू की निचली कुछ डाले सदा माटी मे दबाई हुई होती थी, कलम लगाने के लिए। जिले के जितने काग्रेसी कार्यकर्ता काम के सिलसिले मे आते, उनमे से बहुतेरे इस पेड की कलम ले जाते। नीलू को खाने मे रोज ही नीबू चाहिए। दाल मे दो-चार बूद नीबू का रस डाले बिना उसे अच्छा नही लगता। आश्रम मे मछली नही पकाई जाती। इसलिए बडी मछली आते ही ताई जी के यहा से हमे खाने का बुलावा आता। वहा भी नीलू की जेब मे नीबू जरूर जाता, क्या पता, वहा न मिले। उस घर का छोटा बच्चा तक यह जानता है—कोई नीलू चाचा की जेब टटोलता, कोई दौड कर नानी को खबर देता कि नीलू मामा के पाकेट मे नीबू है। ताई जी रसोई से निकलकर बाहर खडी हुई है। "क्यो रे, ये 'माछपाईतुरी',[1] आ गये तुम लोग ?"—बहुत दिन पहले की बात है। ताई जी के बरामदे पर कतार से पीढे डाले गये थे। सामने भात की थाली। मै, नीलू, जितेनदा, घेटा—सभी खाने बैठेगे। 'अरे, माछपातुरी है!' कहता हुआ नीलू दौडता हुआ पीढे पर जैसे ही बैठने लगा कि पीढे से फिसलकर गिर पडा। भात की थाली छिटक कर दूर चली गयी। सब तहस-नहस! तभी से ताई जी नीलू को 'माछपातुरी' कहती है। इस बात में उपहास का जो इशारा था, वह अब नही है, बनावट रह गयी है। फिर ताई जी कहती, 'बारिदर के बेटे, पाकेट मे नीबू लाया है ? ला काट दू।'

वही नीलू, वही रत्ती भर का हाफपैंट वाला कप्तान नीलू, वही 'माछपातुरी' नीलू, वही नीलू, जो भैया कहते गदगद हो जाता था—उसने मेरे साथ यह सलूक किया! उससे तो ऐसे व्यवहार की कभी उम्मीद नही थी मुझे। उसके मन का ऐसा घिनौना परिवर्तन हुआ है! छि, यह क्या ? मैं यह क्या सोच रहा हू ?

[1]मछली का एक खास व्यजन।

पांव के जिस जख्म पर चोट लगने के डर से हाथ नही रखता, जिस जख्म को भीड मे बडी सावधानी से छिपाकर बचाता आया, घर आकर टेबिल पर पाव उठाकर आराम से बैठने के समय क्या उसमे चोट लग गयी ? मन के गहरे जख्म को अब शायद विस्मृति के मलहम और युक्ति के प्रलेप से ढक कर नही रक्खा जा सकता। नही, मै ही यदि नीलू को ठीक न समझू, तो बाहर के लोग कैसे समझेगे ! उस जमाने मे बहुत जगहो मे गाव मे उपद्रव करने से स्पार को पकड कर गाव की चौमुहानी पर फासी देने की व्यवस्था थी। लोग सिर्फ अपने नुकसान की ओर से सोचा करते थे, और उसी दृष्टिकोण से बुरा करने वाले से बदला लेते थे। परतु मुझे नीलू की दृष्टि से ही सारी घटनाओ को देखना होगा। उस दिन नीलू जब भेट करने आया था, वह इसी कबल पर तो बैठा था। मेरी ओर जी खोलकर आजादी के साथ ताक नही पा रहा था। उसके आख-मुह मे अपराधी का सकुचित भाव था। क्यो ? कही चूक जरूर है। नही तो उसकी कुठा का क्या कारण है ? विवेक का दशन या केवल अनुताप ? नीलू मुझसे कुछ कहना चाह रहा था। क्या कहना चाहा रहा था, वह भी जानता हू। पर, मैंने उस बात को उठाने का मौका नही दिया, देता तो शायद मेरे भी सयम का बाध टूट जाता। नीलू मिलने आया है अपने बड़े भाई से, उसकी प्रतिद्वद्वी राजनीतिक पार्टी के स्थानीय नेता बिलू बाबू से नही। गनीमत कि उस दिन उसके सामने मेरे मानसिक द्वंद्व का आभास नही झलका। मुझमे एक खासियत है कि जरा ही मे आखो मे पानी आ जाता है। मुझे इसी का डर था। जो भी हो, किसी तरह से भले ही भले इटरव्यू कट गया। उसके जाने से पहले मै टूट नही पडा। उसकी ओर से आवेगमयता थी। जाते समय अपने दोनो हाथो से उसने मेरा दाया हाथ दबाया था—क्षण भर के लिए। हलका-हलका कापते हुए हाथो के हिमशीतल स्पर्श का मै अभी भी अनुभव करता हू। उसे मा से मिलने को कहा था। मिला कि नही, कौन जाने। डर मा से ही है। मा के एक लडका तो रह ही गया। आखे बद करके मा को याद करने की कोशिश की।

मा भात के साथ जलपाई का अचार खा रही थी। सामने के बाल सफेद-काले मिले-जुले। काले ही ज्यादा। माग के कुछ बाल उड़ जाने से माग चौडी हो गयी। उस पर सिंदूर की चौडी लकीर। उसके पीछे खद्दर की साडी की लाल कोर दिखाई पड़ रही थी। कान, गला बिलकुल निराभरण। अर्धनिमीलित आखो के

कोने मे कुछ बलिरेखा, एक-एक कुछ मोटी, बाकी बाल जैसी बारीक। नाक के नीचे से दो चर्म रेखा ओठ के दो कोनो तक पहुच गयी है। धप-धप गोरे रग पर रेखाए खासी गहरी लगती है। मा ने दोनो होठो को नोकदार बनाया, जीभ चाटने लगी, गले की नली का कपन ऊपर से ही समझ मे आ रहा था। जीभ से उन्होने 'टक्' की आवाज निकाली। दोनो होठ खोलने से नजर आया, नीचे की पात मे एक दात नही है। उसके बीच से लारभरी जीभ दिखाई दे रही है। 'तुम लोग उठो न, उठो।' हम लोग लेकिन बैठे रहे।

ताई जी के भी नीचे के कई दात नही है। होगे कहा से ? चौबीसो घटे दात के नीचे, होठ मे चूने के साथ मला हुआ जर्दा पडा रहता है। लोग पान के साथ जर्दा खाते है। नियमित रूप से इतना, सिर्फ जर्दा खाते और किसी को नही देखा। ताई जी अभी क्या कर रही है ? आज रात क्या उन्हे नीद आयेगी ? क्या जाड़ा और क्या गरमी, रात के तीन ही बजे उठकर बिस्तर पर बैठकर माला जपती है। नीद से जगते ही लालटेन की बत्ती उसका कर उसे खिडकी पर रक्खा। उसकी रोशनी दीवार पर टगी राधाकृष्ण की तस्वीर पर पडी। उसके बाद चश्मा लगाकर उसी ओर देखती हुई बैठ जाती है। गुरुदेव का शायद ऐसा ही निर्देश है। गोल मुखडा—मा ने एक दिन कहा था, डब्बे के कटोरे जैसा। चेहरे पर चेचक के कई दाग। कपाल पर गोदने का एक बिदु। गले मे कठी। जप करते-करते रह-रह कर पास की खिड़की से जर्दा का थूक फेकती है। उसी मौके से आसमान की ओर ताक लेती है, भोर होने मे कितनी देर है। अब बाहर के 'इनारे' मे बाल्टी डालने की आवाज होने लगी। टोले का मोदी रामदेव साब रोज भोर होते न होते इनारे से पानी भरने आता है। ताई जी की यही घडी है। 'बेली, अरी ऐ बेली, आज क्या उठेगी नही ?' सझली दी हडबडाकर बिस्तर से उठ बैठती।

बचपन मे नीलू को सबेरे ठेलठूल कर जगाने से वह पहले कहता, 'अच्छा नही होगा भैया, कहे देता हू।' और करवट बदल कर फिर सो जाता। फिर ठेलने से कहता, 'फिर'। फिर कहता, 'फिर भी ?' उसके बाद कहता, 'इसके बाद भी ?' इस बार गले का जोर कुछ ज्यादा होता। उसके बाद अपने तई बुद-बुदाता हुआ उठ बैठता। मा कहती, 'सबेरे उठते ही साप-का मतर झाडना शुरू हो गया।' नीलू का चेहरा याद करने की कोशिश कर रहा हू। हरगिज याद नही आ रहा है। जब तब नीलू का मुखडा आखो मे तैर जाता है, पर अभी याद

करना चाहता हूं—अतिम घडी मे जरा तृप्ति के लिए। लेकिन अभी क्या याद आयेगा ? याद करना चाहता हू नीलू की शकल और मानस-पट पर उभर आता है गनौरी महतो का चेहरा। घुटा सर, चिपटी नाक, बुलडाग जैसा मुह, एक कान के ऊपर छेद करके सोने का रिंग डाला हुआ।

बदन सिर-सिर कर रहा है। भोर-भोर की हवा खासी ठडी है। बस, अभी दो घटे तक सेल ठडा लगेगा। पगले की चीख-पुकार शुरू हो गयी। तीन नबर ने कब भजन शुरू कर दिया, पहले ध्यान नही दिया।

पीपल पर के कौए काव-काव करके चुप हो गये। शायद यह समझा कि अभी सबेरा नही हुआ है। समय की गणना मे भूल हो गयी, कुछ पहले ही बोल उठे। मेरी मीयाद ही कितनी है! अभी मेरे लिए लमहे की कीमत ही कितनी है! सिनेमा की तस्वीर होती, तो शायद दिखाता—बालू की एक घडी, डमरू जैसी। ऊपर के कटोरे का बालू प्राय खत्म हो आया है, पर टप्-टप् करके बालू के कण अविराम झर रहे है। पल भर का विराम नही! या दिखाता, दीये का तेल समाप्त हो आया। शायद हो कि घडी का काटा चल रहा है। मेरी घडी भी अपने ढग से, उसी बधे नियम से चल रही है। ठडी हवा, पागल की चीख, तीन नबर का भजन,—रह गया सिर्फ आसमान का जरा साफ होना। शुकतारे को पहचान रहा हू। और सबसे रूढ वास्तव, मेरा वार्डर साहब सेल के अगने मे चौबच्चे पर बैठकर ऊघ रहा है!

अभी बिलू है, और कुछ देर के बाद नही रहेगा। रक्त-मास का बना, सुख-दुख से भरा बिलू नाम का कुछ नही। मै सरकारी साख्यिकी की एक सख्या भर हू। असख्य सख्याओ मे एक की कमी-बेशी से क्या आता-जाता है! 'वैज्ञानिक पैरेलेक्स या इस्ट्रूमेटल एरर' (दृष्टिविभ्रम या यत्रजनित भूल) के लिए तो सैकडे कुछ सख्या छोड ही देते है। व्यवसाय मे 'उचत' नाम की भी तो एक चीज होती है। मै शायद उसी मे आऊ। शायद हो कि भारत सरकार के हिसाब के समय, मै—पूर्णिया जेल का 1109 नबर का फासी का मुजरिम,—फासी की तादाद सैकडे एक दशमलव भग्नाश बढा दू। सरकारी रिपोर्ट में छपाई की इतनी-सी स्याही का खर्च! मेरे जीवन का यही मूल्य है—राष्ट्रीय इतिहास मे बिलू बाबू का दान।

बैलगाडी में जैसी एक चरर-मरर की आवाज होती है, वैसी ही एक आवाज

हुई। सभवत वार्ड का दरवाजा खोलने की आवाज। तो क्या ? हाँ, वही। जो सोचा, वही। सेल के सीमेंट वाले अगना मे एक साथ अनगिनत जूतो का शब्द हो रहा है ! कितने लोग आ रहे है ! सुना था, सैनिको की एक टोली की पैरो की आवाज की प्रतिध्वनि से एक पुल टूट सकता है। सच तो, किस जोर की आवाज होती है ! उस पद-शब्द के साथ-साथ कलेजे मे धडकन हो रही है। कलेजे की धडकन की आवाज साफ सुन रहा हू । राम मोहन ढाकी किसी नवमी पूजा की रात मे भी शब्दो के स्पदन को इस कदर तरगायित नही कर सका है। सारा शरीर काप रहा है। निश्वास जोर-जोर से छूट रहा है। आखो के सामने किस चीज का एक परदा पड गया है। माथे के भीतर कैसा तो ठडा और खाली लग रहा है। एक बार, मेरे दाये हाथ की उगली साइकिल के स्पोक मे पडकर कट गयी थी। लहू बद ही नही हो रहा था। उस समय लहू देखकर सर मे ऐसा ही झिम-झिम कर उठा था। कपाल और नाक के नीचे बूद-बूद पसीना झलक आया। पता नही क्यो, खडे होने की ख्वाहिश हुई। सीखचे को पकडकर खडे होने की कोशिश की। हाथ-पाव बेतरह काप रहे थे। खडा नही हो सका। पावो मे जैसे लकवा मार गया हो। उस बार टाइफाइड के बाद पहली बार खाट से उतरते समय ऐसा लगा था। वार्डर ने खडे होकर अपनी पगडी ठीक कर ली। पगला चिल्ला रहा है। तीन नबर ने भजन गाना बंद नही किया। जूतो की आवाज करीब आ रही है,—और, और करीब। पेट के अदर जैसे खाली हो गया है; लगता है, पेट के अदर बर्फ जैसा ठडा है। एक बार कारनिवाल मे चरखी घूमते समय, चक्का जब ऊपर से नीचे होता था, पेट के अदर ऐसा ही अनुभव किया था। जीभ सूखकर रेती जैसी खुरदुरी हो गयी है और जैसे गले मे घुसती जा रही है।

सरस्वती ! मा ! ताई जी ! नीलू ! नीलू, तूने यह क्या किया ? लोहे के एक होराइजेटल बार मे मेरी मृत देह झूल रही है। पाव दोनो शून्य मे डोल रहे है, उत्तर, उत्तर-पूर्व, पूर्व, पूर्व-दक्षिण, दक्षिण।

अरे ! बूटो की आवाज अब मेरी तरफ बढ नही रही है। मेरा वार्डर उझक-कर वार्ड के अगने की ओर देख रहा है। एकाएक तीन नबर का भजन गाना बद हो गया। उद्वेग से हठात् मेरी श्रवणशक्ति भी लुप्त हो गयी क्या ? नही। गूगे के बोलने की जैसी आवाज मेरे कानो मे आयी। बड़ी ही करुण, कातर, असहाय आर्तनाद !

कौन ? किसलिए ?

अब ! अब—सिर्फ अनगिनत जूतो की ही आवाज नही, गौरीशकर का शिखर टूट कर गिर रहा है—वैशाख की आधी का उग्र अल्हडपन—फिर चीख—घटाओ से घिरे आकाश का छाती चीर देनेवाला आर्तनाद—'होशियारी से'—पैर के नीचे की धरती फटकर चौचीर हो गयी—नीचे नीचे—अतल अधकार मे।

'सामने बत्ती दिखाओ'—कुछ विकृताग प्रेतो की छाया धीरे-धीरे छोटी होती हुई लालटेन की रोशनी मे गुम गयी। लालटेने इधर को आने लगी—हजारो ग्रह-उपग्रह कक्ष से छूटकर मेरी ओर लपके आ रहे है। हर रोमकूप मे प्रत्याशित आतक की पहचान, हर स्नायु मे टाइफून का विक्षोभ—वह आलोडन आख की पुतली मे से फूटकर निकलना चाहने लगा।—तुमुल वात्याविक्षोभ मे अब खडा रहना कठिन हो गया। सख्त मुट्ठी से सीखचे को कसकर पकड लिया।

अपर डिवीजन वार्ड

'राष्ट्रगगन की दिव्य ज्योति राष्ट्रीय पताका नमो नमो' साझ का कीर्तन और गाना खत्म हुआ। वार्डर दरवाजा बद कर रहा है और अपने तई ही बक-बक कर रहा है। सुनने वाले की जगह दूसरा एक वार्डर खडा है।

'एक बाबू यहा तो दूसरा बाबू वहा। एक को लाकर अदर दाखिल करता हू तो देखता हू, दूसरा बाहर निकल गया है। कोई पाखाने मे जाकर बैठे है, कोई पूजा पर बैठे है। किन्ही ने कहा, 'बस एक मिनट सिपाहीजी', किन्ही ने कहा 'ताश का यह हाथ हो ले सिपाही साहव।' फुद्दन बाबू की पायचारी तो खत्म ही नही होती। देख रहे है कि दरवाजा बद करने के लिए खडा हू, फिर भी अदर जाने का नाम नही। हजम करने के लिए अगर इतनी पायचारी करनी पडती है, तो थोडा कम ही खाये। घर मे क्या खाते थे जानता हू! यहा अपर डिवीजन मिल गया है तो क्या पेट मे हवा-पानी के लिए भी थोडी-सी जगह नही रखनी चाहिए?'

'राष्ट्रगगन की' गीत का सुर मेहरचद जी ही जानते है। हम महज उनके साथ सुर मिलाया करते है। यहा इस गीत का नाम है—प्रार्थना। प्रार्थना के पहले लालटेने धीमी कर दी जाती है। रोज ही वह गीत की एक पक्ति भूल जाते है। उसी समय लालटेन की बत्ती को जरा उसका कर जेब से 'आश्रम भजनावली' निकालते है। इतने दिनो से गा रहे है। उनके छूटने का समय हो आया। लेकिन अभी तक उन्हे वह पक्ति मुखस्थ नही हुई। बहुतो को मुखस्थ हो गयी है, परतु सब लुत्फ लेना चाहते है। मेहरचदजी नही समझ पाते कि जब भी गीत की वह पक्ति

आती है और लालटेन लेने के लिए हाथ बढाते है, तो एक दबी हसी के शब्द से सारा कमरा भर जाता है। मैने उस रोज वह पक्ति याद दिला देने की कोशिश की थी। देखा, उन्हे यह पसद नही है। इसीलिए अब कुछ नही कहता।

यह व्यवस्था अच्छी हुई है। 'लॉक-अप' के साथ-साथ ही प्रार्थना और भजन समाप्त होता है। पहले, दरवाजा बद होने के बाद प्रार्थना आरभ होती थी परतु देखा कि सोशलिस्ट पार्टी के बहुत से लोगो को यह पसद नही है। उस जमात के ब्रह्मदेव और शिवपूजन ने एक दिन प्रार्थना के समय होड लगाकर बेसुरे स्वर मे दूसरा गीत गाना शुरू किया था। हमारे गीत से वे इस कदर खीजते है, यह पहले नही समझा था। उसी दिन से कह-सुनकर प्रार्थना के समय को पहले कर लिया है, जिसमे 'लॉक-अप' के पहले ही गीत खत्म हो जाय। मेहरचद, सदाशिव ये हरगिज राजी नही हो रहे थे। उन्होने कहा, 'हम छोटे बने ? वे लोग जो बारह बजे रात तक नाक के आगे बीडी का धुआ छोडते है, लक्ष्मीकात के मार्कस क्लास के लेक्चर के मारे हमारी नीद हराम होती है—उसके लिए हम क्या कुछ कहते है ? आप मास्टर साहब इसके लिए हमे न कहे। उन लोगो को ठडा करने मे ज्यादा तकलीफ उठाने की जरूरत न होगी।' बहुत समझाया। 'जिससे उन्हे वास्तव मे असुविधा होती है' हम वैसा काम क्यो करे ? वे जो चाहे करे, हम अपनी ओर से कर्त्तव्य मे त्रुटि क्यो होने दे ? वे लडके है। तुम लोगो का आदर्श महात्माजी का दिखाया हुआ रास्ता है। वह कितना ऊचा है। उससे क्यो नीचे गिरोगे ?' इस तरह बहुत-बहुत समझाने के बाद मन ही मन सतुष्ट न होते हुए भी मेरी बात मान ली। उसी दिन से दरवाजा बद होने के पहले ही हम लोग सध्या की प्रार्थना कर लिया करते है। वे सब अभी भी निरे बालक से है। स्कूल-कालेज के छात्र वालीबाल खेलते समय उस दिन देखा, कामरेड माधोराम, कामरेड मुरलीमिसिर की छाती पर सवार होकर उसका गला दबा रहा है। खाने के मामले मे अभी भी वे लोग किचन मैनेजर से झगडते है। आज उस से इसका बोलना बद, कल उससे झगड़ा यह सब तो रोज लगा रहता है। रत्ती भर के लडके ! उनके दोष-गुण का विचार हम करने चले ! तीन काल गुजार कर अब चौथे पर आ टिके है, अभी भी अपने मन की वृत्तियो को सयत नही कर पाये है। और, वे तो निहायत लड़के ठहरे। यदि उनकी कमी-खामी का ख्याल करना है, तो हमारा इस पथ पर आना ही बेकार है। बिलू भी तो उसी पार्टी का मेबर है—उसका हर लड़का मेरे लिए बिलू के समान है। · ·

कम से कम आज की रात अगर बिलू के पास रह पाता। न एक साथ रहना अच्छा ही हुआ है। वैसे मे शायद हम दोनो ही टूट पडते—लेकिन अतिम घडी तक बोल तो ले सकता था। शायद हो कि ढूढे बात ही नही मिलती। लडके तो कभी भी मुझसे निहायत काम को छोड कर दूसरी बात नही करते। देखा है, मेरे सामने आते ही बिलू सकुचा जाता है, कैसा तो सकपकाया-सा भाव। सप्रतिमता उसमे सदा से कम रही है। वह सदा से मुहचोर रहा। पर यह तो मेरे शिक्षा देने की ही त्रुटि है। उन्हे मैने जिस प्रकार से तैयार किया, वे वैसे ही बने। यदि शिक्षा की वजह से भी उसका स्वभाव ऐसा हुआ, तो नीलू का स्वभाव वैसा क्यो नही हुआ ? हो सकता है, चूकि बिलू को अगरेजी कालेज मे नही पढाया, इसलिए उसमे एक 'इनफीरियरिटी कप्लेक्स' है। नीलू चूकि कालेज मे पढा है, इसलिए उसमे यह भाव नही है। लडको के बाहरी व्यवहार की नही कह सकता पर मेरे उनके बीच जो व्यवधान है, उसका जिम्मेदार मै हू। मै उनसे कभी भी खुले दिल से नही मिला। गोदी-कधे पर लेकर उन्हे स्नेह नही किया। मेरा ख्याल था, लडको से बधुभाव रखने से उन पर शासन करना कठिन है। उनसे बात कम करो, तो वे डर कर परहेज करते हुए चलेगे। उन्हे छूट दो तो वे सर पर सवार हो जायेगे। इस मामले मे मैने कभी किसी की नही सुनी। था स्कूल मास्टर। आदत से ही हो या और किसी कारण से हो, दुनिया के हर पहलू मे शिक्षक छात्र के सबध को ही देखा किया। इसीलिए राजनीति के क्षेत्र मे भी बडो को गुरू मानता हू। छोटो को शिष्य जैसा देखा करता हू, कामरेड मै कभी नही बन सका। जितेन जब छोटा था, वह चौबीसो घटे यदुदा के साथ-साथ रहा करता था। पिता की मोटी लाठी लिये गुलथुल लडका उनके आगे-आगे चलता था। हाट-बाजार, भोज-भात—सब जगह। उस समय अपने पिता के साथ हमारे साझ के अड्डे पर आकर हमसे भी मजे मे खासी पहचान जमा ली थी। दूसरे के बच्चे को दुलार करना, उनके लिए लाजेस लाकर जेब मे रखना—अपने बच्चे से व्यवहार के इस विभेद को बिलू की मा भी असगत समझती थी। बिलू की मा बहुत कम बोलती है। पर उस समय उसे एक बार खुलकर कहते सुना था, 'जरा अपने बच्चे की ओर भी उलट कर ताकना।' मुस्करा कर मैंने उस दिन मन की उलझन को झाड फेका था। लेकिन तब से अगर लडको से जरा मिलने-जुलने का सबध रक्खा होता तो आज उनसे स्नेह-तार का नाता होता, डर और दुराव का नही।

नीलू-बिलू का सारा लाड-प्यार मा से ही। एक साथ खाना-बैठना, मन की बात कहना, बचपन से आज तक सब वैसा ही बरकरार है। लडको के नाम याद करने से नीलू-बिलू याद आता है—पहले नीलू, तब बिलू। बिलू उम्र मे बडा है, पर बिलू का नाम पहले याद नही आता। कार्तिक गणेश जैसा ही। सभी काम के आरभ मे गणेश का नाम। पर पहले गणेश, उसके बाद कार्तिक कहिये तो—गणेश कार्तिक, दोनो नाम एक सास मे उच्चारण ही नहीं किया जाता।

सदाशिव मेरी मसहरी लगा देने आया है। शायद सोच रहा है कि जप पर बैठूगा। कबख्त मच्छरो के मारे मसहरी से बाहर पूजा पर बैठने की गुजाइश है भला! उनके काटने से मन की एकाग्रता ही जाती रहती है। रात को सोते समय मसहरी नही लगाता। इस शरीर से जितना बरदाश्त करोगे, उतना ही बरदाश्त करेगा। मच्छर का काटना सहने जैसी सहिष्णुता अगर न हो, इतना भी कृच्छ्र-साधन करने की जुर्रत अगर न हो, तो फिर बडा काम हम लोगो से कैसे होगा? मसहरी के बिना बिलू को तो कितनी तकलीफ होती है। इशारे से मैने उसे मसहरी लगाने को मना किया। आज सोमवार है। मेरा मौन व्रत है। महात्मा जी आत्मशुद्धि के लिए करते है। वह जिस काम को करना अच्छा समझते है, उसे भला हम बिना किये रह सकते है? और-और सोमवार को सध्या के पहले पूजा करके उपवास तोडवा रहा हू। खाने के बाद बोलता हू। यही देखकर सदाशिव मेरी पूजा का इतजाम कर देने के लिए आया है। बडा भला है सदाशिव—सचमुच ही सदाशिव है। कई साल पहले उसने वस्त्र-स्वावलवी प्रतिज्ञा-पत्र पर सही बनाया था। तभी से वह प्रतिदिन हजार गज सूत काता करता है। ··

अपर डिवीजन वार्ड। बहुत बडा हाल। बहरहाल चौतीस कैदी इसमे रहते है—उन्नीस सुरक्षा बदी और पद्रह राजनीतिक बदी। जिनको सजा हो चुकी है या जिन पर मुकदमा चल रहा है। मेरी सीट बीच के दरवाजे के पास है। कमरे के बीच से आने-जाने का रास्ता है और उसके दोनो ओर दीवार से सटी कतार से चौकिया है। उनमे नेट की मसहरी टगी है। हर चौकी के पास एक-एक टेबिल, एक कुर्सी, एक किताब रखने का सेल्फ। ज्यादातर चौकियो के पास फर्श पर कबल बिछा। टेबिलो पर टेबिल क्लाथ। उस पर आईना, कघी, और भी कितना क्या। लोहे के सीखचे, तालाकुजी और वार्डर की शक्ल पर नजर न पडे तो इसे जेल समझने का कोई उपाय नही—ठीक जैसे छात्रो का होस्टल हो। पिछले अगस्त

महीने मे हरिहरजी और उसके थुल-थुल बूढे बाप को विचाराधीन कैदी के रूप मे यहा ले आया। उस समय हरिहर के पिता ने सोचा कि पुलिस उन्हे एक धर्मशाला मे ले आयी है। इसके बाद जेल ले जायेगी। बूढे ने एक बार अपने बेटे से पूछा भी था कि मुझे जेल कब ले जाया जायेगा। कई दिन के बाद पुलिस ने उन्हे छोड दिया। 1921-22 मे जब जेल आया था,—तब के और अबके जेल मे जमीन-आसमान का फर्क है। उस बार मै साधारण कैदी के श्रेणी मे था। प्रत्येक कैदी को काम करना पडता था। 'सरकार सलाम' पर कितना झमेला था। कही जा रहे है कि अचानक मेट का कर्कश स्वर कानो मे आता 'जोडा फाइल बाध कर चलो।' पाखाना जाने के समय मे लाइन बनाकर जाना होगा। सबके हाथ मे लोहे का एक बर्तन। खाना-पीना हर काम उसी पात्र से करना होता। बात-बात मे 'डडा-बेडी' (बार फेटर्स), 'खडी हथकडी', 'वट्टी पिन्हाव' (सैकक्लाथ) आदि सजा। उससे आज की हालत की तुलना हो सकती है ? चलना-फिरना, खाना-पीना रहने के सबध मे हर मामूली अधिकार पाने के लिए कितना त्याग करना पडा है, कितने विस्मृत शहीदो का आत्म-बलिदान है। मगर अजीब है इनका विचार। मुझे दिया अपर डिवीजन, मेरी स्त्री को दिया अपर डिवीजन। हमारे लडके को डिवीजन थ्री !

चरखा लेकर बैठा जाय। मन की बेकली को शात करने के लिए चरखे जैसी कोई चीज नही। कुछ देर एकाग्रमन से चरखा कातने से देखा है स्नायु की उत्तेजना धीरे-धीरे शात हो जाती है। डाक्टर चाहे हसे, सोशलिस्ट लोग अविश्वास करे, मुझे तो इसका प्रत्यक्ष अनुभव है। चरखा खोलकर बैठ गया। सदाशिव जाने क्या कहना चाहता है। वरना वह खडा क्यो रहता ? आखो के इशारे से पूछा, 'क्या है ?' उसने रुक-रुककर कहा, 'हम कई जने सूत्रयज्ञ के लिए बैठना चाहते है। उससे आपको कोई असुविधा तो नही होगी ?' इशारे से उससे कहा, 'बैठो।' आज के इन लड़को मे इतनी फार्मेलिटी है ! अजीब है। एक साथ बैठकर चरखा कातेगे, यह तो खुशी की बात है। तुम लोगो को ऐसी सुमति हो तो हम जी जाये। इसमे मेरी राय लेने की क्या जरूरत है ? मै तो यही चाहता हू। डर तो तुम लोगो से है। तुम्हे अपनी जमात मे शामिल करने के लिए सोशलिस्ट लोग हर घड़ी ताक लगाये बैठे है। तुम लोगो पर अब भरोसा होता कहा है ? साझ की तरह सवेरे भी प्रार्थना करने का प्रस्ताव करके उस दिन इन लोगों के आगे कैसा

अपने-सा मुह लिए रह जाना पडा। पीठ पीछे मैहरचद तक को ठट्ठा करके कहते सुना—'दस आने की खूराकी मे दोनो बेला प्रार्थना करना नही पोसाता। राशन सवा रुपया कर दे, देखो, दोनो वेला सामूहिक प्रार्थना करूगा। चीजे बडी महगी हो गयी है, इसलिए सुना है शीघ्र ही खुराकी बारह आने हो जायेगी। बढ जाने पर हफ्ते मे एक दिन सवेरे प्रार्थना कर सकते है।' बोलता और ही ही करके हसता था। अजी, प्रार्थना न करनी हो, न करो। मगर प्रार्थना की बात पर हसी-ठट्ठा करने मे शर्म भी नही आती। तुम गाधी जी के शिष्य हो, सत्याग्रही हो, नास्तिक तो नही हो। तुम लोग भी यदि ऐसी बातो पर ठट्ठा-तमाशा करो, तो जो जी चाहे बोलने पर सोशलिस्टो को दोष कैसे दिया जाय।

सदाशिव और मेहरचद ने कतार मे कबल बिछा दिये। मेरी सीट ठीक वार्ड के बीच मे है। कमरे मे घुसते ही बायी ओर महात्मा जी के भक्त लोग रहते है यानी काग्रेस के मेजोरटीपथी। उनके सिवा उधर एक कम्युनिस्ट है, एक किसान सभा है। इन दोनो को सरकार ने क्यो रोक रक्खा है, यह वही नही जानते। ये लोग तो हृदय से युद्ध मे सरकार का साथ देना चाहते है। कमरे के दाये रहते है सोशलिस्ट और फारवार्ड ब्लाक के सदस्य। बीच मे मै। बफर सीटो की ऐसी व्यवस्था जेल की ओर से नही की गयी है। अपनी सुविधा के अनुसार बहुत दिनो की सीट की अदला बदली से यह स्थिति हो गयी है। मेरी सीट के पास ही वार्ड मे घुसने का दरवाजा है। दरवाजे के पास काफी जगह बिलकुल खाली पड़ी है। यह जगह एक रास्ते पर पड़ती है, तिसपर इसके ठीक ऊपर कबूतरो का बसेरा है। इसलिए यहां पर कोई नही है। यहा पर कबल बिछाकर सब लोग चरखा लाकर बैठे। रामचद्र, किशन देव, हरिहर, रामदेनी, सदाशिव, रामशरण, भूपण प्रसाद, रामलोचन, मेहरचद। अधिकाश नामो के ही शुरू मे यह राम शब्द लगा है। रामदेनी के अलावा और सबके सामने यरवदा 'चक्र' है। और रामदेनी ने जेल मे आकर चरखा कातना सीखा है रेमिशन के लोभ से। थाने पर हमला और खास-महाल कचहरी जलाना—इन दो कसूरो के लिए बेचारे को बारह साल की सजा हुई है। जेल मे उसे चरखा कातने का का काम है। इसलिए उसके सामने जेल का दिया हुआ विशाल 'बिहार चरखा' है। उसने दो आदमी की जगह छेक रक्खी है। रामदेनी ने जिस रोज पहली बार सुपरिटेडेट से कहा कि मै जेल का काम करने के लिए तैयार हू, मुझे काम दिया जाय, तो सबने उमे प्रात से अलग कर देने की बात उठाई

थी। राजनीतिक कैदी भला काम क्या करेगा ? कुछ दिनो से देख रहा हू, लोगो ने फिर से उससे बोलना-चालना शुरू किया है। वे लोग जैसे ही चरखा लाकर बैठे, बायी ओर की एक सीट से कोई मुह से चरखे की आवाज की नकल करने लगा। और, दो-तीन जने हस उठे। यह सुखसाल के सिवाय और कौन होगा ? नही नही, सुखलाल नही, कामरेड सुखलाल, खाक याद भी नही रहता। छोकरा नकल और केरी केचर करना खूब जानता है।

दो लालटेनो से इतने लोगो के सूत कातने जैसी रोशनी भी हो सकती है भला ? किंतु और रोशनी मिले कहा से ? लडाई के कारण तेल की मात्रा कम कर दी है। आदमी पीछे शायद पाव, छटाक तेल देता है। इसलिए कई लोगो को मिलकर एक लालटेन जलाना पडता है। वार्ड के बाहर बिजली की रोशनी जल रही है। वार्ड के अदर, कुछ बत्तियो का इतजाम कर दे, तो क्या बिगडता है। सरकार क्या सोचती है, समझ नही पाता। उन्हे यह डर है कि बिजली की बत्ती देने से ही कैदियो को आत्महत्या करने मे सुविधा होगी। गोया तभी आत्महत्या करने के लिए बेचैन है। इसीलिए जेल मे जितने कुए है, सब तख्तो से मजबूती से ढक दिये गये है। नजीर की कमी नही, कब कौन कैदी इनमे कूद पडा था। अभी उस दिन की बात है, कई लोगो को वेसिलरी डिसेंट्री हुई तो मैने डाक्टर से कहा था, वार्ड मै अगर एक बोतल इलेक्ट्रोलिटिक क्लोरिन दिया जाय, तो सब लोग पीने के पानी मे उसका इस्तेमाल करे, मैं इसकी व्यवस्था कर सकता हू। डाक्टर साहब ने हाथ जोडकर कहा, 'माफ कीजिये, मुझसे ऐसा अनुरोध न करे। पेशन मे केवल तीन साल बाकी है। इसी बीच दो बार विभागीय कार्यवाही हो चुकी है। एक बार एक ने एक शीशी मालिश की दवा पीली थी, और एक ने फिनाइल पी लिया था। मुझसे स्पष्टीकरण मागा गया कि एक ही साथ किसी कैदी को इतना फिनाइल मिलता कैसे है ? मानो 'सफैया' (मेहतर) कैदी से कोई फिनाइल नही ले सकता। इस डिपार्टमेट का क्या मा-बाप है जनाब !'

एक साथ इतने चरखो की तरह-तरह की आवाज सुनने मे अच्छी लगती है। जैसे बडी ऊचाई से हवाई जहाज उडता जा रहा है। याद दिला देता है कि सोने का भारत गढने के पथ का मै अकेला पथिक नही हू। यह तो सिर्फ इतना गज इतना हाथ सूत कातने की बात नही। अब तो चरखे मे प्राण-प्रतिष्ठा की गयी है। यह रामराज्य लौटाने का एक मात्र अस्त्र है। रामराज्य होगा प्रेम का राज्य,

चैतन्य का राज्य। लोग ईर्ष्या-द्वेष भूलेगे। मेहनत करो, सुख से खाओ-पियो, रहो—किसी को कोई अभाव नही। हर के गुहाल मे गाय, हर की मोरी मे धान। जितना गज सूत कातोगे, लक्ष्य के उतने ही नजदीक पहुचोगे। एक आदमी दूसरे की मदद कर रहा है। धनी गरीब को अपनी दौलत लुटा दे रहा है। अपनी जरूरत के लिए गाव अब बाहर की ओर निगाह बिछाये नही है। गरीबो के शोषण के सारे रास्ते बद है। किसी का मुह नही जोहते तो शोषण कैसे करेगे! 'सूत्रयज्ञ' यह याद करा देता है कि हमारे तरीके से और भी बहुतेरे लोग सोचते है। दल के दल राजनीतिक लोग हमारे मत को छोडकर चले जा रहे है। समझो या न समझो, मानो या न मानो, सोशलिस्ट होना तो एक फैशन हो गया है। नीलू-बिलू की ही लीजिये न। यहा तो 1930-32 मे कितना चरखा कातना, कितनी-कितनी बात! कुछ इस तरह से उनका निर्माण हुआ था कि मैंने कभी सोचा ही नही कि ऐसे ऊचे आदर्श को वे लोग कभी छोड सकेगे। जो अब भी मेरे मतावलबर है, ये चले जाएगे, तो मेरे ही मन मे सदेह होगा कि मेरा मत ठीक है न? अपने देश का वेद, पुराण, ऋषि, मुनि, इतिहास सब गया—सबकी नजर रूस पर है। अरे रूस क्या अपने देश से भी ऊचाई पर है? देश-विदेश का इतिहास हमने भी पढा था। मैजिनी, गैरीबाल्डी, वाशिंगटन, कोसुथ की अमर कहानी। हममे भी रोमाच जगाती थी। उन्ही की कीर्ति की प्रेरणा ने ही तो हमे विद्यार्थी-जीवन मे अनुप्राणित किया था। लेकिन तो क्या, शिवाजी की गौरव-कथा को हमने भुला दिया। विवेकानद की वाणी छोडकर हम मार्क्स की बोली के फदे मे फसे? महात्माजी से हम स्तालिन को बडा नही समझ सके। विदेशी मनीषियो की रचनाए क्यो नही पढोगे। पढो। हम लोगो ने भी क्या बेथम, स्पेसर, मिल को नही पढा? तो क्या अपनी बात बिलकुल भुला देनी होगी? बिलू जब पहले काग्रेस सोशलिस्ट पार्टी मे शामिल हुआ, तब भी अगर उसे समझाने की कोशिश करता, तो शायद आज उसकी यह हालत नही होती। और अगर बिलू को शासन कर सकता तो नीलू भी हाथो से बाहर नही जा सकता था। कान खीचने से सर आता है। भैया जो करेगा, उसे तो उसकी नकल करनी ही पडेगी, सो चाहे अच्छा हो या बुरा समझे या न समझे। लेकिन ज़ोर-जबर्दस्ती क्या किसी को भी किसी मत मे बाध कर रक्खा जा सकता है—और खास करके उन्हे, जो निहायत बुद्धिहीन नही है। बिलू बालिग लडका है, उस पर शासन? नही, मेरे मत से मत नही मिला, इसलिए?

उसके व्यक्तित्व का इतना भी सम्मान अगर मै न कर सकू, तो हमारे पथ का सयम और सहनशीलता कहा रही ? वे निर्बोध तो नही है। मै जो बाते उन्हे समझा सकता था, उन बातो को उन लोगो ने ही क्या खुद से विचार नही देखा है ? वे लोग तो मेरे ही मत की आबहवा मे आथम मे पहले है। वे तो इस विषय के सूक्ष्म से सूक्ष्म भेदाभेद भी जानते है। इन विपयो की आलोचना कितनी बार कितनी ही जगहो मे सुनी है। बिलू तो तीन महीने साबरमती आश्रम मे भी था। महात्मा जी के चरणो की धूल लेने का सुयोग नीलू-बिलू दोनो को मिला है। पूर्णिया आश्रम मे उन्होने महात्मा जी के साथ तसवीर भी खिचवाई थी। थोडे दिन के हो, फिर भी ऐसे महात्मा के सस्पर्श मे आने के वावजूद जिन पर उनका प्रभाव पडा, वहा कुछ करने जाना मेरी धृष्टता है। और, मै जब सरकारी स्कूल की हेडमास्टरी छोड कर राजनीति मे आया था, तो किसी की बात सुनी थी क्या ? दुनिया भर के लोगो ने मना किया था। डी पी आई मेरे इस्तीफे की दरखास्त को दबाकर मुझे बुलवा भेजा था——समझाने के लिए। पटने मे साहब की कोठी पर साहब से मिलने गया। देखा, साहब का बैरा तक मेरे इस्तीफे के बारे मे जानता है। और मरतबा मुलाकात करने का कार्ड देते समय बैरे की खुशामद करनी पडती थी। बख्शीश देनी पडती थी। अर्दली कैसा एक निर्लिप्त भाव दिखता था। इस बार देखा कि उसने झुक कर चरणो की धूल ली। 'मास्टर साहब, सुना आप स्वराज मे शरीक हुए है। 'मुझे प्रणाम करके, यह जानकर कि मेरा कोई काम कर पा रहा है, कृतज्ञता मे उसका मुह गद्गद् हो उठा। वह बोल ही बठा, 'मेरे मन की कामना है, स्वराजी मे शामिल होकर आप लोगो की कुछ सेवा करू। लडका अगले साल मिडिल का इम्तहान देगा। उसके बाद साहब से कहकर उसे एक नौकरी दिला दूगा। उसके बाद मै भी स्वराजी मे जाऊगा। मै डी पी. आई की नेक नजर मे था। बी टी पढने के समय वह हमारे कालेज के प्रिसिपल थे। साहब ने हाथ पकडकर मुझे बिठाला। गुरु-शिष्य के सुर मे ही बाते हुई—ऊपर के और मातहत कर्मचारी मे जिस ढग से बात होनी चाहिए उस ढग से नही। आते-आते भी साहब ने कहा, 'अब तक गलती कर रहे हो। फिर से सोच देखना।' उस समय कह आया था, 'अब तक गलती करता आया हू, अब नही करूगा।' ·
टोले के बूढे मित्तिर बाबू, कालीबाडी के पीछे के ईट के भट्टे के पास ले जाकर बडे दर्द के साथ उन्होने समझाया था, 'इस झमेले मे क्यों पड़ रहे हो ? शादी-ब्याह किया

है। बाल बच्चे है। बिलकुल आगे पीछे सोचे बिना कूद पडना क्या अच्छा है! भारत के लिए अगर सभी जगह स्वराज होगा, तो पूर्णिया मे भी होगा। इस जगह को वाद देकर तो स्वराज नही होगा।' कितने लोगो ने कितने तरह का मतव्य दिया था। मैने क्या किसी की बात पर कान दिया था। इस राह पर आने के पहले किसी से राय-मशविरा किया था? पूछने के लिए एक सिर्फ बिलू की मा से पूछा था। वह भी ठीक-ठीक पूछना नही। अपना सकल्प स्थिर कर लेने के बाद महज जता देना। उसने यह सोचा था, नही जानता। सिर्फ कहा, तुम जो अच्छा समझो, वही करो। औरत का मतामत था! मै किसी से मत लेकर नही चला, जो अच्छा समझा, वही किया। तो, बिलू ही मेरे मत से क्यो चलेगा?

एक चरखे से बैलगाडी के पहिये जैसी केच-केच आवाज हो रही है। उस आवाज की न खत्म होने वाली पुनरावृत्ति कानो मे बडी कर्कश लग रही है। सीमेट की जमीन पर किसी धातु के बर्तन को खीच ले जाने से ऐसा ही बादाश्त से बाहर लगता है। नर्म घाव पर जैसे कोई सरेस कागज घिस रहा हो। जेल मे आने से पहले मैने अपनी इस स्नायविक दुर्बलता का ख्याल नही किया था। मुझे इस बात का गर्व था कि मेरी स्वस्थ स्नायुमडली थोडे मे विचलित नही होती। अब कि जेल मे आने से यह क्या हो गया! जरूर रामदेनी के चरखे से यह आवाज हो रही है। अपने हाथ के धागे से नजर हटा कर मैने रामदेनी के चरखे को ताका। रामदेनी से निगाहे मिल गयी। वह चरखा छोडकर उठ खडा हुआ। अपनी सीट की ओर लपका। सभी उसकी ओर ताकने लगे। शायद यह सोचने लगे, शिष्टाचार का यह कैसा अभाव! 'सामूहिक चरखा' से यो उठ जाना! रामदेनी लौट आया—हाथ मे तेल की एक शीशी। उसने बूद-बूद करके चरखे मे तेल डाला। उसके बाद फिर कातना शुरू किया। हम सभी देख रहे है, वह सूत कात रहा है और बीच-बीच मे मेरी तरफ ताककर क्या देख रहा है। मेरे चेहरे मे कोई परिवर्तन देख रहा है क्या? इधर कुछ दिनो से मेरे मन मे जो द्वद्व, जो सशय चल रहा है, इन लोगो ने उसकी छाप मेरे आख-मुह मे देख ली है क्या? मन के भाव को भला छिपाया जा सकता है! शायद हो कि इस गरमी मे उपवास करने से मेरा चेहरा सूखा-सूखा लग रहा हो न, उपवास तो कितने दिनो से प्रति सोमवार को करता आ रहा हू। उपवास की वजह से कुछ नही हुआ है। इनकी समवेदना का मूल्य क्या चुका सकता हू? जरा देर के लिए भी मै जिसमे मन की बेचैनी को

भूल पाऊ, ये लोग इसीलिए चरखा कातने बैठे है। सब मिलकर। मेरे बोझ का भार लेकर मेरे मन को हलका करना चाहते है।

'माथे मे घने घुघराले बाल, खिलता हुआ रग, कुछ-कुछ औरतानी किस्म का लबा मुह, ठोडी पतली, काली आखो की भावुकता भरी गहरी दृष्टि। मै बिलू की ओर ताकता कि वह नजर झुका लेता। ''पर उन आखो से भी मैने वज्र की ज्वाला छिटकते देखी है। मेरे नौकरी छोडने से कुछ दिन पहले की बात है। हाई स्कूल के पास ही 'प्लैटर्स क्लब' है। दो अहाते के बीच तार का घेरा। क्लब मे कोई चैरिटी मेला या क्या तो हो रहा था। स्त्रियो ने तरह-तरह की दूकाने खोली थी। नीलू और बिलू उस तार पर बैठे साहब-मेमो का उत्सव देख रहे थे। नीलू उस समय बहुत छोटा था। बिलू उसे बीच के तार पर खडा करके पकडे हुए था। अचानक देखा, काझाकोठी का पेरिन साहब मेरे क्वार्टर के फाटक मे दाखिल हुआ—हाथ मे छडी, निगाह कडी। मुझसे कहा, लेडीज स्टाल खोला है। आहाते के तार पर से चौबीसो घटे यहा लडके क्या देखते है? 'यूसी हेड-मास्टर, आप अगर इसे बद नही करते तो हम खुद देखेगे कि इस असम्यता को कैसे बद किया जाता है।' तार के घेरे पर बैठे हुए नीलू की तरफ छडी से दिखाते हुए—जैसे अशिष्ट और जबरदस्त अदा से वह आया था, उसी अदा से चला गया। मैने बिलू को बुला कर कहा, 'खबरदार, उधर मत जाना।' जो बिलू मेरी ओर नजर उठाकर ताक भी नही सकता, मैने उसकी आखो मे सोये पौरुष की व्यजना देखी थी। उसने मेरी ओर देखा, मानो दोनो आखो से आग की चिगारी छिटकी। 'क्यो, वहा गया तो क्या हुआ?' मुझसे पूछना 'क्यो?' मुझसे जबान-दराजी? कान पकडकर खीचते हुए उसे घर के अदर ले गया। उसकी मा रसोई में थी। 'जरा अपने गुणवान बेटे की हरकत देखो। साहब से झगडने से भला नौकरी रहेगी?'

उसके बाद मैने अपने कमरे के बरामदे से सुना, बिलू मां से तर्क कर रहा है—'क्यो, अपनी जमीन से साहब-मेमों का मेला देख रहा था, उससे क्या हुआ?' ''उस रात बिलू ने खाया नही। नही जानता, गुस्से से या अभिमान से। आधी रात को बिलू की मा ने मुझे पुकार कर जगाया। बिलू तो बिस्तर पर नही है! कहा गया बिलू को खोजो! खोजो! नौकर-चाकर, स्कूल का दरबान, मैं—लाठी लालटेन लिए सब बाहर निकले। बिलू की मां जोर-जोर से रोने लगी और मुझे

कोसने लगी, उत्ते छोटे-से लडके ने मेमो का खेल देखा, इससे मेमो का अपमान कैसे हुआ ? बिलू खोजे कही नही मिला। आखिर बोर्डिंग के एक लडके ने उसे ढूढ निकाला। दिन को नील-बिलू जहा से मेमो का मेला देख रहे थे, ठीक वही तार के घेरे पर बिलू बैठा था। मेले की रोशनी कब की बुझ चुकी थी। बिलू लेकिन मेरी डाट का अनौचित्य साबित करने के लिए, अपनी अकाट्य युक्ति से काम की सगति रखने के लिए, उस जाडे की अधेरी रात मे वहा जाकर अकेला बैठा था। बदन पर केले के कोमल पत्ते के रग के एक अलवान के सिवाय और कुछ भी नही। नगे पाव। हाथ-पाव बर्फ की तरह ठडे हो गये थे।

जोर-जबरदस्ती बिलू से कोई कुछ करा ले, यह नही होने का। उसे ठग कर, खुशामद करके या उसके कोमल हृदय का सुयोग लेकर लोग उससे कोई भी काम कराया जा सकता है। मगर जरा जोर दिखाओ, बिलू तनक कर खडा हो जायगा। पल मे उसकी स्वाभाविक नमनीयता कहा चली जाती है। उसके बचपन से ही यह देखता आ रहा हू। बीसेक साल पहले की बात बीलू के मा की चीख सुनी। मैं जिला काग्रेस के दफ्तर वाले कमरे से उठकर घर की ओर चला। सुना, बिलू की मा कह रही है—'बोल्, जल्द बता, तूने जरूर मुसलमान का थूक चाटा है। फिर नही कह रहा है ?' घर के अदर जाकर देखा, बिलू की मा छोलनी लिए बिलू को धमका रही है। उनके एक हाथ मे नल टूटी चुनार की चायदानी है, उसमे सूजी रहती है। गुस्से के मारे चायदानी को नीचे रखना भूल गयी है। सारा किस्सा सुना। नीलू और बिलू बहबूद मुख्तार के बगीचे मे बेर खाने गये थे। वहा बहबूद मुख्तार के दामाद ने उन्हे पकड लिया। उसने बेर के एक-एक पत्ते पर थूक फेकने को कहा और हुक्म दिया कि इसे चाटो और कहा कि आइदा कभी बेर खाने नही आऊगा। ऐसा नही करने से पीटने और मास्टर साहब से कह देने की धमकी दी। नीलू ने तो डर से थूक चाट लिया, बिलू ने नही चाटा। उसने क्या सब तो कह दिया। उसके बाद बहबूद मुख्तार के दामाद ने उन्हे छोड़ दिया। लेकिन बहबूद मिया की लडकी ने जाकर शिकायत की कि बिलू वगैरह ने उसके पति का अपमान किया है। इसी से सारी कलई खुल गयी। बिलू की मा ने अभी भी असली प्रश्न यानी बेर चुराने और अपमान करने के प्रश्न को नही छुआ है। उनके लिए जो मुख्य विषय था, अभी उसी पर जिरह चल रही थी कि नीलू ने जो थूक चाटा है, वह सचमुच मे नीलू का ही था कि बहबूद मुख्तार के दामाद का।

चौक उठा । हा-हा-हा । सारे हाल को कपाता हुआ इतने चरखो की सम्मिलित घर्घर ध्वनि को डुबाते हुए हसी का फव्वारा छूटा । मेरे दाये, दो सीटो के बाद, खिडकी के परदे और बिस्तर की चादर से घेर कर एक कमरा-सा बनाया गया है। उसी में सोशलिस्ट पार्टी का 'कैपिटल' क्लास होता है । फारवार्ड ब्लाक के चार जने उस क्लास मे शामिल नही होते । दिन को वे लोग इकट्ठे होकर जाने क्या-क्या, मार्क्सिस्ट किताबे पढते है । 'कैपिटल' पढ रहा हैं, तो इसमे हसी की क्या बात है इतनी ? इस गरमी मे चारो ओर परदा लगाकर बैठने की की क्या जरूरत है ? आजकल के लडको का सब कुछ अजीब है । परदो के ऊपर से धुए की ढेरो कुडलिया उठ रही है । उन लोगो ने कही सिगरेट पीने की सुविधा के लिए तो परदे नही टाग रक्खे है ? नही-नही, अब क्या वह दिन-काल रहा ? सिगरेट-चुरुट पीने के लिए अब इन्हे आड-ओट की जरूरत नही । उनके दल का कामरेड बनारसी—कितना छोटा है बिलू से, बिलू का छात्र—मुझसे ही आकर बिलू के बारे मे बात करता है—होठो के कोने मे एक सिगरेट होती है । सभी जेल-दफ्तर के पर्सनल एकाउट से रुपये उधार लेते है, और फिर—

'कितने आदमी है आप लोग ?'

यानी ग्यारह बज गये । नया वार्डर आया है। परदे के घेरे मे से एक ने वार्डर को देखकर कहा, 'जाओ चिल्लाओ मत ।' कोई दूसरा बोल उठा, 'इस वार्ड मे कैदी साढे सात है ।' वार्डर गुस्से से बुदबुदाता चला गया । कहते-कहते गया, 'हू, पावरोटी और अडे खाते है और ये हजरत महात्मा जी काम करने के लिए जेल मे आये है !'

परदे के अंदर से एक कोई बोल उठा, 'बैजनाथ, उठ । उडेल दे तो इस रास्केल के बदन पर सुराही का पानी ।'

सभी जोर से हस पडे । कामरेड वैद्यनाथ एक ग्लास लिए परदे से बाहर आया । दुबला, ऐंडी हुई रस्सी-सा शरीर । पहनावे मे पायजामा । बदन पर कुरता, कुरते का कालर ऊचा, सभी सोशलिस्टो को देखा, 'कपडा गुदाम' के कैदी दरजी को बीडो दे-देकर ऐसा ही कुरता सिलवाया है। इतनी गरमी के बावजूद ये खाली बदन नही रहते । और यही लोग ससार मे सर्वहारा का राज लायेगे ।

ग्यारह बज गये । सबने चरखा कातना बद किया । तकली, जूनी सब ठीक-ठाक करके उठने की तैयारी कर रहे है । लगातार दो घटा चरखा क्या सभी कात

सकते हे ? व्यक्तिगत सत्याग्रह के समय हजारीवाग जेल मे, गाधी जयती के दिन, लगातार आठ घटे सूत कातने से मुझे किडनी की गडबडी हुई। तब से अब ज्यादा सूत बिलकुल नही कातता। शायद हो कि बीमारी और किसी कारण से हुई हो, पर जेल के डाक्टर ने बताया, एकसास उतनी देर तक वैसे बैठे रहने से ही किडनी की शिकायत हुई ! डाक्टर की राय पर तो कुछ कहा नही जा सकता। सब लोग अपनी-अपनी सीट पर चले गये। सदाशिव और मेहरचद खडे रहे।

मेहरचद ने कहा, 'मास्टर साहब, कुछ तो खा लीजिये। तमाम दिन पित्त पडा। आपका खाना टेबिल पर रख दिया है। दो रोटिया खाइये।'

मैने एक कागज पर लिख दिया कि इस गरमी मे अब खाने को जी नही चाहता। मेहरचद ने कहा, 'थोडा-सा दही ला दू। मेरे घर से आज दही दे गया है। अपने घर की गाय का दूध। वरना आप से नही कहता। आप गाधी-सेवा-सघ के मेबर थे। आप भैस का दूध-घी नही खाते, यह कौन जानता ? इसीलिए तो जेल मे दूध-घी खाना आपका होता ही नही। इत्तफाक से जब मेरे घर से आ गया है और आप अगर वह भी नही खाये तो मुझे बडा दुख होगा।'

नाटकीय ढग मे हाथ जोडकर मेहरचद खडा हो गया—'मेरा यह अनुरोध आपको रखना ही होगा मास्टर साहब ! मेरे फादर अपने साथ यह दही ले आये थे' फिर फादर कहा ! बिहार मे जिसने भी थोडी-सी अगरेजी सीखी, वह अपनी भाषा मे मा, पिताजी, बहन नही कहता। किसी को घुटाया देखकर कारण पूछो, कहेगा, 'मदर की डेथ हो गयी।' यह नही कि ये लोग बोलने मे ज्यादा अगरेजी शब्दो का व्यवहार करते है। लेकिन बाबूजी, मा, वहन, इन शब्दो को अपनी भाषा मे बोलने मे इन्हे कैसा सकोत्र लगता है।...

'फादर बार-बार कह गये है, मास्टर साहब यह दही खाकर देखे। बिलकुल गोयठे की आग मे उबाले दूध का फस्ट किलास दही।' इस कदर अनुरोध कर रहा है कि ना करने का भी उपाय नही। थोडा-सा खा लेने से ये बडे दु:खी होगे। इशारे से मैने स्वीकृति दी। ऐसे ही नाछोड बदा है ये। घटे भर कान खाते। मेहर चद और सदाशिव, दोनो की आखों मे एक इशारा खेल गया। ओ, तो सदाशिव ने मेहरचद को मेरे पीछे लगाया था। खुद उसे हिम्मत नही पडी। शायद यह कह गया था कि जब तक राजी नही, पीछा मत छोडना। मेहरचद ने सवार कर

चरखे के बक्स को बद किया और उठाकर रखा। उसके बाद कबलो को समेटकर एक कोने मे रखा। कमरे मे जहा पानी का ड्रम रहता है, मेरा गमछा और चौकी के नीचे से खडाऊ निकालकर मेरे सामने रख दिया। मैने अपने लडको से इतना सेवा-जतन नही पाया। कभी चाहा भी, याद नही आता। नौकरी छोडने से पहले छुट्टी-वुट्टी के दिन नीलू-बिलू को धूप मे नही खेलने देने की नीयत से शायद पके बाल निकालने को कहा है।

और 1927 के बाद से तो जानकर ही किसी से कोई सेवा नही ली। इसके लिए बिलू की मा का कितना रोना-धोना, कितनी शिकायत! नये खडाऊ का यह जोडा चार-पाच महीना पहले रामचरित्तर जी ने मुझे प्रजेट किया है। उनसे ना नही कह सका। पसद भी आया था। बाद मे सुना, बिसुन देव रामचरित्तर जी से कह रहे है, 'बेटिग का चमडा कितने मे जुगाड किया?' रामचरित्तर जी ने जबाब दिया, 'चमडा चार बीडी मे और लकडी छे बीडी मे।' बिसुनदेवजी ने अवाक होकर पूछा, 'इतना महगा? दस बीडी मे 'बीटी' कबल मिलता है। आप लोग बाजार खराब किये दे रहे है।'—अच्छा! वैसा चौडा, सुदर नये ढग का बैड—वह जेल की फैक्ट्री की कबल-कल की बेल्टिग है! भलमनसाहत से बाहर की बात होगी, इसलिए खडाऊ मैने वापस नही कर दिया। लेकिन खडाऊ को आज तक काम मे भी नही लाया। चौकी के नीचे रख दिया था। सदाशिव ने फिर उसे बाहर निकाला। ऐसे ससर्ग मे आ गया हू कि इसमे अपनी नीति और सिद्धात रखते हुए चलना भी कठिन है। खडाऊ को ठेलकर फिर चौकी के नीचे रख दिया। ड्राम के पास जाकर हाथ हाथ-मुह धोया। सदाशिव ने गमछा थमा दिया। ड्राम के पास की सीट दास जी की है। उनको नाक बज रही है। हर बार निश्वास छोडते समय हवा मुह के भीतर से निकलती है। उससे होठ कापते है और फर्-र्-र्-र्-र् की आवाज होती है—घास खाते समय घोडा रह-रह कर ऐसी आवाज करता है। भले मानुस ठीक साझ को ही लेटते है और लेटते ही सो जाते है। उठते है रात के दो बजे। इस गरमी मे भी आठ ही बजे कैसे सो जाते है? रामायण-महाभारत मे इच्छा-मृत्यु का ही जिक्र मिलता है। मगर इच्छा-निद्रा—यह भी कुछ कम साधना का फल नही। साझ के बाद कमरे मे प्रार्थना होती है, कितना शोरगुल, हो-हल्ला होता है—उससे उनकी नीद मे जरा भी आच नही आती।

मेरी चौकी के पास मेहरचद दही का शरबत बना रहा है। मुझसे पूछा, 'गुड डाले या बूरा ? मेरे पास थोडा-था बूरा है।' मैने इशारे से गुड ही देने को कहा एक लोटा शरबत बना। सदाशिव ने कबल डाल दिया। उसके सामने पानी के छीटे डाल कर लोटा-ग्लास रख दिया। मैने अलमिनियम के ग्लास मे शरबत डाल लिया। दही दिया है, शरबत तो नही, पतला दही। जेल के ग्लास भी अजीब है —पानी पीते समय बदन पर और कपडे पर पानी जरूर गिरेगा। मीठा भी खूब डाला है।

मेहरचद किस्सा सुनाने लगा, 'सवेरे इटरव्यू था। दो कडाही दही और एक हाडी भेट का लड्डू आया था। आफिस वालो को खाने की इच्छा थी या क्या जाने ! जेलर ने पहले जमादार से कहा, काठी डालकर कडाही के नीचे तक देखो, दही के अलावा और कुछ है या नही। उसके बाद रख दो। डाक्टर साहब आयेगे तो पास होगा। जेलर मुझसे ऐसा बिगडा क्यो, पता नही। और किसी की बेर तो ऐसा नही करता। जमादार साहब को गोद का चार लड्डू थमा कर चुपचाप हाडी लिए चला आया।'

उसके बाद जाने जी मे क्या आया, मुझसे कहा 'लड्डू चीनी के बने है न, इसी से आपको नही दिया। एक ग्लास और दू मास्टर साहब ?' मैने मना किया एक ही ग्लास पीना मुश्किल तो दूसरा ग्लास ! मुह-हाथ धोकर फिर कबल पर आ बैठा। मेहरचद ग्लास से लोटा बजाने और चिल्लाने लगा—'चलो चलो—ओ, शरबत पीने वालो !' बिसुनदेव जी के सिवाय किसी ने नही लिया, चीनी का बना होता तो कोई-कोई लेता। बिसुनदेव जी आधा सेर आटे की रोटी खाता है। उम्र कम है, तदुरुस्ती खूब अच्छी है। फिर भी दोपहर रात को खाने-पीने के बाद, एक लोटा दही ? इस वार्ड मे गुड का शरबत कोई पीना नही चाहता। और बिलू ? तीसरी श्रेणी के कैदी थोडा-सा गुड, एक लाल मिर्च या एक प्याज पाने से कृतार्थ हो जाते है। स्कार्वी के प्रतिषेधक के नाते वे हफ्ते मे दो दिन जरा जरा अचार पाते है। यह शौकीन चीज जिस दिन होती है, उसी दिन भात खाकर उसका पेट ही नही भरता ! सिर्फ अचार से ही सारा भात चट कर जाते है। दाल के साथ खाने को भात कहा ? बडे कष्ट से अर्जित दाल की मिर्च नाहक ही बरबाद हो गयी लगता है। बिलू को दोनो शाम भात खाने की आदत है। यहा वह भी मिलता है या नही, कौन जाने ? जेल कोड के मुताबिक दोनो

शाम भात का नाम है 'बगाल डायट' जिसे यह नही मिलता , उसे शाम को दो हाथ परिधि की रोटी नामक चीज दो-दो मिलती है । इस अधपकी दुष्पाच्य खाद्य पदार्थ को काबू मे करना भीम भवानी या गोबर पहलवान के लिए मुमकिन हो तो हो, साधारण बगाली के लिए असभव है । जी मे इच्छा होती है, बिलू यह जाने कि उसी की बात याद करके इस बार जेल मे पूल-मूल, दूध, यह सब चीज मैं नही खाता हू । मच्छरदानी लगा कर नही सोता हू । बिलू को इसकी जानकारी होती, उसके मन को कुछ तृप्ति होती । वह समझता कि उसके पिताजी उसके लिए इतना तो सोचते है । बिलू को अगर फासी की सजा नही हुई होती तो शायद इस समय, ऐसे परदा घिरे घर मे बैठकर वह अपने दल के लोगो को 'कैपिटल' पढाता । बिलू यहा होता तो कामरेड लक्ष्मी चतुर्वेदी को गुरू गिरी नही करनी पडती । मनिहारी घाट मे उस बार उन लोगो का जो समर ट्रेनिग कैप खुला था उसका अध्यक्ष तो बिलू ही था । कामरेड बनारसी भी उस रोज चुरुट पीते-पीते मुझसे कह रहा था, 'हमारे दल मे बिलू बाबू जैसा कोई नही पढा सकता । इसी लिए उस बार सोनपुर मे जब हम लोगो का प्रादेशिक समर-कैप-खुला, तो बिलू पर ही 'डाइलेक्टिक मेटेरियलिज्म' पढाने का भार पडा । 'ओपारचुनिस्टो को छोडकर अगर वास्तविक कार्यकर्ता की बात ली जाय, तो हमारे दल मे 'इटेले-क्चुअलो' मे बिलू बाबू का स्थान बहुत ऊचा है । हा, बिलू बाबू मिलिटैट जरा कम है । इसीलिए पार्टी के सर्वोच्च शिखर पर नही पहुच सके ।' कामरेड बनारसी ने और भी कितना कुछ कहा था, सब याद रखना भी मुश्किल है । बोलते हुए उन्हे ऐसे-ऐसे शब्दो के इस्तेमाल की आदत हो गयी है, जिनका कि असली माने हमारे लिए एक प्रकार से आजाना हैं । बातचीत नही की जा सकती ? वे लोग घर मे भी क्या मा-बहने उन बातो को क्या खाक समझेगी ? वह एक किस्सा है न, अगरेजी पढते हुए एक ने यह सोच रखा था कि अपनी मा से अगरेजी के सिवाय और किसी भाषा मे बात नहीं करूगा । उसके बाद ऐसा हुआ कि बीमार पड़कर प्यास से मर गया, 'वाटर' शब्द उसकी मा नही समझ पायी । वैसा ही होगा और क्या ! बिलू भी उनके दल का एक नेता है । मगर उसकी तो इस ढग की बात-चीत कभी मेरे कानो मे नही पायी । अपनी पार्टी मे क्या बोलता था, नही जानता पर, घर में तो उसे अस्वाभाविक साम्यवादी अभिधान के किसी शब्द का इस्तेमाल करते नही सुना । उनको पायजामा और ऊंचे कालर का कुरता पहनते भी

कभी नही देखा था। उनके बदन से कभी तबाखू की बू भी नही मिली। तुम्हारी भाषा मे मिलिटैट शब्द का माने शायद हो कि मै ठीक नही समझता—जो देश के लिए आज रात फासी पर चढेगा, तुम कहते हो वह मिलिटैट नही है। वह क्यो मिलिटैट होने लगा, मिलिटैट है, वह सूखे छुहारे-सा बैजनाथ, जो थोडी ही देर पहले ग्लास लेकर निकला था, वार्डर के बदन पर पानी देने के लिए। छी, यह क्या सोच रहा हू मै ! बिलू मिलिटैट होता, तभी मानो मेरे गर्व का विषय था। महात्माजी मेरा प्रणाम ले। शायद बनारसी ने ठीक ही कहा बिलू मेरे डैनो मे, आश्रम की आबहवा मे पला है। उसका मिलिटैट न होना ही स्वाभाविक है सदाशिव मेरी टेबिल पर पाव लटकाये बैठा है। मेरी ओर ताक रहा है। वह जरूर सोच रहा है कि मैने प्रणाम क्यो किया। उसने इसका कोई मनगढत माना जरूर निकाल लिया होगा।

'बिसुनदेव बाबू ! बिसुनदेव बाबू !'

बाये दो-तीन सीटो के बाद बिसुनदेव जी की सीट है। एक वार्डर उनकी सीट के सामने के झरोखे के बाहर से उन्हे पुकार रहा है। बाहर बिसुनदेव जी का खासा बडा कारोबार है—व्यवसायी आदमी है। ढेकी स्वर्ग भी जाय तो धान कूटती है। बिसनदेवजी ने जेल मे भी काफी बडा कारोबार फैला लिया है। वह हम लोगो के किचन मैनेजर है। जेल के ठेकेदारो से उनकी जान-पहचान है। यह वार्डर उनके और ठेकेदारो के बीच खबर और चीजो का आदान-प्रदान करता है। जेल-ठेकेदार को रोजना राशन का जो रिक्विजीशन रहता है, वह उससे कम देता है और कागज पर मैनेजर की सही करा ले जाता है कि सारी चीजे मिल गयी। रात को यह वार्डर आकर दूसरी चीजे दे जाता है, जो राशन मे नही आती। जेल के अधिकारी भी मोटा-मोटी इस बात को जानते है और इसे बद करने के लिए रसद गुदाम से शिडिउल के मुताबिक चीजें देने की कोशिश भी कई बार की। लेकिन इस लडाई के दौरान रोजना उसके अनुसार चीजे दे सकना कठिन है। और न देने से ही फिसाद हो सकता है, अपर डिवीजन के कैदी अनशन ही शुरू कर दे। शायद लॉक-अप से ही इनकार कर दे। बलपूर्वक और लाठी चार्ज से सामयिक रूप से समझाया जा सकता है। मगर दो-एकबार ऐसा झमेला होने से जेलर और सुपरिंटेडेट की बदनामी होगी कि टैक्टफुल नही है। कुछ ही दिनो मे बदली का हुक्म आ धमकता है। मार-पीट कर दबा दिया जा सके, सुरक्षा के बदियों के होते इसकी भी गुजाइश नही। जिला मजिस्ट्रेट के आदेश के बिना उन पर लाठी चार्ज नही

किया जा सकता। और, अभी जेल मे जगह की इस कदर कमी है कि उन्हे अलग रखने का इतजाम करना भी कठिन है। यही सब सात-पाच सोचकर जेल के अधिकारी चाहते है कि किसी तरह का गोलमाल नही। थोडा बहुत देखकर भी नही देख रहे है, ऐसा भाव दिखाने से ही यदि चले तो उन्हे उभाडने से क्या लाभ ? इससे ठेकेदार से पावना मे कमी-बेशी तो नही होती। लिहाजा बिसुनदेवजी को सहूलियत हो गयी है। बिसुनदेवजी और वार्डर आहिस्ते-आहिस्ते क्या बोल रहे है, समझ मे नही आता। अचानक बिसुनदेवजी जोर से बोले, 'सिपाहीजी, थोडा-सा दही का शरबत पियोगे ?' सिपाहीजी ने कहा, 'लाइये।' ग्लास सीखचो की फाक से बाहर नही निकला। 'ठहरीये, मै प्याली लाता हू।' बिसुनदेवजी चाय के प्याले मे सिपाही जी को शरबत पिलाने लगा। यो, इसीलिए उसने शरबत लिया था। जभी तो लगा, अचानक उसे गुडवाला घोल का शरबत पीने की इच्छा क्यो हो गयी। सिपाही जी चला गया। शायद उसकी ड्यूटी दूसरे वार्ड मे है। भूषण भी मसहरी गिरा कर अपने बिस्तर पर सो चुका था। ठीक बिसुनदेवजी के पास ही उसकी सीट है। उसने मसहरी के अदर से कहा, 'क्या तिकडम कर रहे थे, यार ?' नियम से बाहर जुगाड-जतर करने का नाम इन लोगो ने तिकडम रक्खा है। दरअसल इस शब्द का कोई अर्थ ही नही है—जेल मे ही इसकी सृष्टि हुई है। बिसुनदेव रोज बीडी मंगाया करता है और दिन मे मेट के मारफत उन बीडियो को जेल की फेक्ट्री मे बेचने भेज देता है। वहा मामूली कैदी दस पैसे पाकिट के हिसाब से बीडी खरीदते है। बिसुनदेवजी को इसमे अच्छा मुनाफा हो जाता है। मेस के मेबरो मे जो थोडा-बहुत गोलमाल कर सकते है, उनका मुह बद करने के लिए बीच-बीच मे खुशबू तेल या ऐसी ही जरूरत की यह-वह चीज मगा दिया करता है। अलावा इसके जेल-गुदाम के कैदियो से भी बदोबस्त कर लिया है—' दो बडल बीडी मे एक ग्लास घी, एक बडल मे एक सेर चीनी। बीडी ही जेल की लीगल टैंडर मुद्रा है। भूषणजी ने बिसुनदेवजी से कहा, 'भैया, मुझे एक बडल बीडी दो तो, जाडे के बाद गरम कुरता धुलाया नही गया है। कल उसे धोबी कमाड मे भेजना है, लोहा कराने के लिए। और कल मेरे लिए ठेकेदारो को फाउटेन पेन की स्याही लाने को तो कह देना।' उसके बाद हस पडा और बोला, 'मै भाई झपट्टा-नद की जमात का हू।' इस झपट्टानद शब्द का एक इतिहास है। बिसुनदेवजी ने एक लटका तैयार किया था। लटका ठीक याद नही आ रहा है लेकिन उसका

भावार्थ यह कि जेल के सभी राजबदी सिद्धपुरुष है। इन्हे तीन श्रेणियो मे बाटा जा सकता है। पहली श्रेणी का नाम 'जोगाडनद'। इस श्रेणी के कैदी बीडा और पैसा घूस देकर, मीठी-मीठी बाते करके, जेल डाक्टर की खुशामद करके और कभी-कभी जेल-कर्मचारियो से झगड कर तरह-तरह की चीजो का जुगाड करते है। इन्हे नशे की चीजो से लेकर किसी भी चीज का अभाव नही रहता। हरदम जुगाड की ही ताक मे रहते है। दूसरी श्रेणी मे है 'झपट्टानद'। इस कोटि के कैदी आमतौर से चुपचाप और निष्क्रिय-से रहते है। आख मुह मे निस्पृहता का चिन्ह जगाये रहने की कोशिश करते है। लेकिन ऊचे पेड पर चील जैसे समाधिस्थ की नाई बैठे रहने पर भी, शिकार पर ठीक ही नजर रखते है, ये लोग भी वैसे ही। इस पर हर घडी निगाह रखते है कि जुगाडानद लोग कौन क्या कर रहा है। ऐन उसी वक्त, जब जुगाडानद के हाथो कोई चीज आती है, झपट्टानद सामने जा धमकते है उसका हिस्सा लेने के लिए। तिकडम करते हुए पकडे जाने से मुसीबत है, लेकिन झपट्टानदो को किसी मुसीबत का खतरा नही, लेकिन हा, जुगाडानदो के मुकाबले इन्हे सामान कम नसीब होता है। इच्छा न रहते हुए भी जुगाडानदो को मजबूरन थोडा-बहुत उन्हे देना पडता है—झमेला करने वालो को शात तो रखना है। एक किस्म के राजनीतिक कैदी और रह जाते है, उस लटके मे इनका नाम है 'बेकूफानद'। इन्ही लोगो की तादाद ज्यादा है। जुगाड करने या जुगाड की हुई चीज का हिस्सा बटाने की इच्छा इन्हे सोलह आना रहती है। लेकिन इच्छा होने से क्या होता है, इनसे बनता नही। इन्हे इस बात का डर रहता है कि पकडाई चाहे न पडे, पर लोग कानाफूसी कर सकते है। और कही रगे हाथो पकडे गये, फिर तो बदनामी का अत नही रहेगा। लिहाजा इन झझटो से दूर रहकर आलोचना करना ही अक्लमदो का काम है।

शोर-शराबा करते हुए सब लोग दायी ओर की परदा घिरी जगह से निकले। गर्ज कि उनका क्लास खत्म हुआ। दिन भर समय रहता है, तो भी ये लोग रात जगकर जरूर पढेगे। सबेरे तो आठ बजे तक उठने का कोई नाम नही लेता। परतु यह देखकर सचमुच खुशी होती है कि राजनीति के क्षेत्र में आने के बावजूद इन लोगो ने पढना-लिखना नही छोडा है। करता था मैं मास्टरी, सो लडको को पढते हुए देखकर अभी भी मन की खुशी दबा नही सकता। सोशलिस्टो, फारवर्ड ब्लाक के लड़को, कम्युनिस्ट और किसान सभा दोनो मे पढ़ने का उत्साह है—

उनसे अपने पथ के लोगो की तुलना करके अवाक हो जाता हू। फारवर्ड ब्लाक के तीन ही जने तो है यहा, लेकिन देखता हू, वे भी कितना खर्च करके सेसर नही की हुई मार्क्सिस्ट किताबे मगाते है। कम्युनिस्ट जो है, उसका भी यह-वह किताब मगाना लगा ही रहता है। इनकी तरह घडी देखकर हम क्लास करना चाहे, तो पढनेवाले नही जुटेगे। इसका ज्वलत प्रमाण तो मिल ही चुका है। सदाशिव के उत्साह और आग्रह से जाडो मे मैने बेल के पेड के नीचे 'रचनात्मक कार्यक्रम' पर क्लास लेना शुरू किया था। पहले हफ्ते कुछ पढनेवाले थे। उसके बाद देखा, रहने को रह गये—सदाशिव, दासजी और रामशरणजी। और सी एस पी के रूसी क्राति के क्लास मे देखता हू, पढने वाले अटते नही। हमारे लोग भी उस क्लास मे बैठे मिलते है। यह अवश्य अस्वाभाविक नही है। बिलू के दल के कार्य-क्रम की निति उसी पर है, जैसा कि आज के आदमियो का मन है, जबकि हमारे कार्यक्रम की बुनियाद अहिसा और लोभहीन आदर्श मानव-मन पर है। इसलिए साधारण लोगो को उन्ही का रास्ता आर्कषित करता है।

नीलू-बिलू को पढने की क्या धुन थी ? और, हमारी जमात के लोगो को ? उनका कहना ही बेकार है। मैं कोई किताब लेकर बैठता हू कि कहते है, 'मास्टर साहब फिर से इम्तहान देगे क्या ?' हमारे रामचदरजी और हरिहरजी को पढने-लिखने का कुछ शौक है। रामचंदरजी पढते है जलचिकित्सा की किताबे और हरिहरजी पढ़ते है आसन और प्राणायाम की किताबे। इन लोगो की राय है। जिन्हे गाधी जी के पथ पर आस्था है, उसके लिए पढ-सुन कर नयी कौन-सी बात जानने की है ? नीलू क्या यो ही हमारी खिल्ली उडाता है ? मेरे दौरे पर जाने के समय बिलू की मा जब मेरा सूटकेस सहेज देती है, तो मैने कितनी बार सुना है, नीलू मा से ठट्ठा करके कह रहा है, 'मा, 'सर्वोदय' की पुरानी फाईल तो रख दी है न ?' लघु-गुरु का ज्ञान नीलू को बचपन से ही कम है। इस सबध मे बिलू से उसका आकाश-पाताल का अतर है। नीलू सदा से जरा उद्दड स्वभाव का है, गुस्सा होने पर उसे ज्ञान नही रहता।

…घर मे जाकर देखा, बिलू की मा रसोई के बरामदे मे है, नीलू और बिलू कुछ दूर पर बैठे है—गोया एक से दूसरे का कोई नाता ही नही। बिलू की मा और बिलू रो रहे है और नीलू झाडू के एक तिनके को लिए हुए फर्श पर शायद कुछ लिख रहा है या आक रहा है। बगल मे एक हसुआ पड़ा है। नजदीक जाकर

देखा, बिलू की मा ने कपडे मे ढकने की क्या तो कोशिश की। मेरे पूछते ही माजरा खुल गया। बिलू के हाथ से दवात उलट जाने से नीलू की 'रबडी का खिलौना' किताब की जिल्द खराब हो गयी। इसी से बिगडकर नीलू ने बिलू के मार्सडेन के इतिहास को हसुआ से काट डाला था। सच ही, किताब के दो टुकडे कर दिये थे—देखने मे वह दो छोटी-छोटी नोट बुक सी हो गयी थी। अजीब लडका है! उनकी मा भी लाड से बच्चो का सिर खा बैठी है। लडके ने अन्याय किया है, तो मुझसे कहेगी कहा कि मुझसे छिपाने की कोशिश चल रही थी।

'क्यो सदाशिव, भूमिहार-राजपूत जाति महासभा की बैठक खतम हो गयी?' कामरेड बैद्यनाथ ने सदाशिव पर व्यग्य किया। लक्ष्य था 'सूत्रयज्ञ'। बिहार के गरम पथी लोग यानी सोशलिस्ट, कम्युनिस्ट, फारवार्ड ब्लाक, और किसान सभा के सदस्य दक्षिणपथियो को यह कह कर ठट्ठा करते है कि बिहार प्रादेशिक काग्रेस स्थानीय भूमिहार और राजपूतो की आपसी दलबदी का मुखपात्र मात्र है। प्रादेशिक काग्रेस मे दलबदी नही है, दलबदी है जात और व्यक्ति पर। बात बहुत हद तक सही है। जेल मे भी देखता हू, रामशरणजी और हरिहरजी जात की बुनियाद पर छोटे-छोटे उपदल बनाने की चेष्टा करते है, ताकि जेल से बाहर जाकर भी उनकी लीडरी बरकरार रहे। हम लोगो के देशो मे कभी स्वराज होने वाला है? कभी-कभी नफरत हो जाती है। नीलू-बिलू की पार्टी जो कहती है, सब गलत ही नही कहती। लेकिन कुछ देर पहले ये लोग जो सूत्रयज्ञ मे बैठे थे, उससे दलबदी का क्या सरोकार है? और माना कि सदाशिव तुम्हारा हम उम्र है, पर वह जब मेरे सामने बैठा है, तो उसका मतलब मुझ पर भी चोट करना है। उम्र मे बडे का जरा लिहाज किया जाता तो महाभारत अशुद्ध हो जाता क्या?

सदाशिव ने जवाब दिया, 'अरे, चुप रह 'लाल दसिया'। कहावत है, ब्राह्मण को खिलाकर, राजपूत को बाबू साहब कहकर, कायस्थ को रुपया देकर और बाकी सब जात को प्रहार देकर कोई भी काम कराया जा सकता है। कुछ रुपये मिले तो फौरन पार्टी छोड देने मे नही हिचकेगे। तुम कायस्थों को मैं नही जानता हू?'

बैजनाथ कायस्थ है। मिथिला के कायस्थो की पदवी प्राय. लाल होती है या दास। इसलिए साधारण लोग कायस्थो को बहुत समय 'लाल दासिया' कहते है। जमीदार का नायब, गुमाश्ता, पटवारी का काम इन्ही लोगो का एक चटिया है। इसलिए गरीब किसानों में इनकी लोकप्रियता कम है। फलस्वरूप 'लाल

दसिया' शब्द का माने अब स्थानीय कायस्थ नही, उसका योगरूढ अर्थ हो गया है—अर्थ लोलुप पटवारी मोनोवृत्ति का जीव।

बैजनाथ ने कहा, 'और एक कहावत याद है न ? ग्वाले की देखी घास और बाम्हन का देखा दही, दोनो का नसीब एक-सा होता है।'

सदाशिव भूमिहार ब्राह्मण है। उसने जवाब दिया—
'यह तो कबूल ही करता हू। देखा नही, मेरा दिया दही मास्टर साहब ने खाया। कायस्थ लोग कहावत की सच्चाई को मानने पर राजी नही, जभी तो बात बढ जाती है।' इसके बाद सदाशिव टेबिल से उतर कर बैजनाथ के पास आ गया। दोनो फुसफुसा कर क्या तो बतिया रहे है। इन्हे एकाएक गोपनीय कौन सी बात याद आ गयी ? आज बैजनाथ की पार्टी के नेता स्थानीय एक कामरेड को फासी पडेगी, पर इनके कार्यकलाप मे और दिन से विलक्षणता तो कुछ नजर नही आती। वही परदा घिरा क्लास, वही ठहाका, बीच-बीच मे वैल्यू, लेबर पावर, सरप्लस वैल्यू शब्द और दिन की तरह आज भी सुनाई पडते है। मेरे बायी ओर जो रहते है, उन लोगो का जीवन भी तो प्राय और ही दिनो जैसा देख रहा हू। कही कोई खरोच तक नही पडी। नही, शायद हो कि सब महसूस कर रहे है, नही तो एक दासजी के अलावा सभी जाग क्यो रहे है ? भूषणजी, विसुनदेव जी मच्छरदानी डालकर लेट जरूर गये है, पर उनकी बात जरा देर पहले भी सुनी। वे सोये नही है। बहुतेरी सीटो पर मच्छरदानी लगी है, ज्यादा दूर तक दिखाई नहीं पडता, मगर कानो मे आवाज आती है। आस्कर वाइल्ड का वह बैले ऑव रीडिग गोल—फासी की रात की कुछ पक्तिया याद आती है।

> बट देअर इज नो स्लीप, व्हेन मेन मस्ट वीप
>
> हू नेवर यट हेव वेप्ट;
>
> सो वी द फूल, द फ्राड, द नेव—
>
> दैट एडलेस विजिल कैप्ट,
>
> एड थ्रू ईच ब्रेन, आन हैडस ऑव पेन
>
> अनदर्स टेरर क्रेप्ट ··

और याद नही आ रही है। मास्टरी कब की छोड़ी है। आज की बात है वह ? ये कुछ पक्तिया जो याद है, वही आश्चर्य है। अभी याद करने की कोशिश कर रहा हू। सभी अब याद नही आयेगी, बाद मे अचानक किसी बेजरूरत की

घडी मे अप्रत्याशित रूप से याद आ जायेगी। ये सब क्या डर से जगे हुए है। शायद हो कि हमदर्दी से। नही, यह जगे रहना स्वेच्छा से नही है। चेष्टा करने पर भी इन्हे नीद नही आ रही है। गप-शप करके ये जी के भार को हलका करना चाहते है। मेरा अपना मन भी तो शात ही हैं। अपने लडको को जितना प्यार करना चाहिए गहराई से, शायद मै उतनी गहराई से स्नेह नही करता। नही तो अभी तक मेरे मन मे वह चचलता क्यो नही आयी ? बैजनाथ की सीट के पास बैजनाथ और सदाशिव ने मिल कर कुछ कुर्सिया लाकर रक्खी। इतनी रात गये इन कुर्सियो का क्या होगा ? उसके बाद सदाशिव आकर मेरी खाट पर बैठा। मै नीचे कबल पर बैठा हू। बैजनाथ, लक्ष्मी चतुर्वेदी, राम प्रकाश, गिरधर उन कुर्सियो पर बैठे। ये लोग तमाम रात जागते रहेगे क्या ? बिलू को भी रात जगकर पढने की आदत है। कितनी बार मना किया। अभी बिलू क्या कर रहा है ? शायद पागल की भाति सेल मे पायचारी कर रहा है। उसे क्या एक बार पिता की याद नही आयेगी ? डरने वाला लडका वह नही है, , पर न तो चरखा कातता है, न ही है भगवान पर विश्वास। आज की रात इन दो मे से एक भी होता, तो मन मे वह कितना बल पाता ! स्कूल के सस्कृत के पडित जेल के रिलीजस इस्ट्रक्टर है। इतवार के दिन जेल मे हिंदू कैदियो को धर्म का उपदेश देने आते है। मेरे हेडमास्टर रहने के समय ही पडितजी स्कूल मे आये थे। इसी नाते उस दिन मिलने आये थे। बिलू उनका छात्र है। वह दुख प्रकट कर गये कि मै बिलू के सेल मे गया था। बिलू ने कहा, 'धर्मोपदेश की कोई जरूरत नही।' पडित जी ने यह भी कहा, बिलू लेकिन पैर छूकर प्रणाम करना नही भूला। वैसा लडका ही नही है बिलू। ईश्वर पर विश्वास करने से सच ही क्या साम्यवादी नही बना जा सकता ? कितने गेरुआधारी स्वामी जी को देखा तो है, उन सबके दल के कार्यकर्ता है। वे लोग भी क्या ईश्वर पर विश्वास नही करते ? उस दिन एक असिस्टेट जेलर को एक पाकेट-गीता दी थी, बिलू को देने के लिए। दूसरे दिन वह पुस्तक मुझे वापस लौटा कर जाते हुए बोले, 'आपके लडके ने कहा, इस पुस्तक की आवश्यकता नही, दूसरी अच्छी किताब-विताब दें तो पढ सकता हूं।' मेरे पास कुछ दूसरी पुस्तके थी। मैने वे किताबे बिलू को दे देने का अनुरोध किया। वह बोले, 'धर्म पुस्तक देने का ही अधिकार मुझे है। डिवीजन थ्री कडेम्न्ड प्रिजनर को दूसरी किताब देने के लिए सुपरिटेडेट की इजाजत लेनी पडती है।

साहब बडे भले और लिनियेट है। उन्होंने आपके लडके से पूछा भी था, कि किसी चीज की जरूरत है ? लेकिन कैदी ने तो खुद उनसे कहा कि 'मुझे कुछ नही चाहिए।'

ठीक कहा है। बिलू से ऐसी ही बात की उम्मीद की जा सकती है। वह आखिरी दम तक ऊचा सिर किये चला जायेगा। मेरा नाम उज्ज्वल करके, सारी हीनता पर लात मार कर, गौरव से दमकता मुखडा लिए लापरवाह हसी हसता हुआ नन्‌मिलिटैंट बिलू चला जायेगा।

पिछले महायुद्ध के बाद के एक व्यग्यचित्र की याद आती है। 'पच' मे निकला था। दो बूढे लॉर्ड अपने भेदबहुल जतन से पले शरीर को एक बहुत ही ऐरिस्टो-क्रेटिक क्लब के मोटे कुशन वाले सोफे पर निढाल किये बैठे है। मुह मे चुरुट, मेज पर बोतल-ग्लास। दोनो होड लगाये-से बाते किये जा रहे है। जिनके लडके लडाई मे काम आये। लडके की मृत्यु से कोई दुखित नही है—एक दूसरे को पराजित कर पाने के गर्व के आगे बेटे की मार्मिक मौत एक निरी गौण घटना है, गो कि उनके गर्व की भित्ति उसी घटना पर है। यह बात कौन सोचे ? मेरा गर्व भी ऐसा ही हास्यास्पद है। जिसके लिए पिता का फर्ज अदा नही किया, उसी बेटे के किये कर्म के गौरव का हिस्सा लेने में मेरा मन कुठित नही। मै यदि इस पथ पर नही आता तो बिलू की भला यह दशा होती ? मेरे पिता सरकारी नौकरी करते थे। मैं भी सरकारी नौकरी करता था। मेरा लडका भी दूसरे गृहस्थो के बेटो की तरह पढना-लिखना खत्म करके कमाता, स्त्री-बेटा-बेटी के साथ घर-गिरस्ती करता। टोले के बूढे मित्तिर बाबू ने ठीक ही कहा था। ब्याह करने के बाद, खास करके अगर बाल-बच्चे हो, तो किसी को भी अपनी इच्छा के मुताबिक जीवन की गति को चलाने का अधिकार नही रहता। वैसे मे उसका जीवन उसके अकेले का नही होता, उस पर और भी बहुतो का हक हो गया होता है। मुझे तो वैसा नही था, उसकी बात भी नहीं। जिनके दौलत होती है, वे लोग शायद ऐसी हालत मे स्त्री-पुत्र-परिवार के लिए पहले से कुछ प्रबंध करके रख सकते है। मगर उसी से क्या कर्त्तव्य हो गया ? उससे हो सकता है, बाल-बच्चे कुछ आराम से रह सके, पर आराम से रहना ही क्या दुनिया मे एकमात्र काम्य है ! गार्हस्थ्य जीवन मे जो मधुर सबध आपस में गढ उठते है, उनका क्या कोई मूल्य नही ? राज-ऐश्वर्य में छोड गये थे, तो क्या सिद्धार्थ ने सतान और स्त्री के प्रति सुविचार किया था ?

बिलू को अगरेजी कालेज मे नही पढाया। उसकी मा के एकात आग्रह से मैट्रिक तक अगरेजी हाई स्कूल मे पढाया था। अगर मेरी ख्वाहिश के मुताबिक काम होता ,तो शायद अगरेजी स्कूल मे इतनी दूर तक पढाई नही होती। मेरी इच्छा उसे बिहार विद्यापीठ मे भेजने की थी। बिलू अगरेजी स्कूल मे पढता था, इसलिए सहयोगियो से मुझे तरह-तरह की बाते सुननी पडी थी। महात्माजी ने जब हमारे आश्रम मे चरणो की धूल दी थी, तो जायसवालजी की स्त्री ने यह बात भी उनके कानो तक पहुचाई थी। भद्रमहिला मे थोडा पागलपन-सा है। परतु मै जानता हू कि उन्होने अपने मन से ही ये सारी बाते महात्माजी से नही कही मेरे ही किसी शुभैसी सहयोगी के कहे उन्होने ऐसा किया था। महात्माजी ने उस समय इस विषय मे कुछ नही कहा। 'इतने बडे देश मे सभी तरह के ही लडके तो रहेगे। मेरे लडके भी तो मुझे दोष देते है'—सिर्फ यही कहकर उन्होने इस बात को टाल दिया था। मेरा सर शर्म के मारे गड गया। और इस मतव्य के तीखेपन को बिलू और उसकी मा ने खूब अनुभव किया। इसीलिए बिलू के मैट्रिक पास कर लेने पर है। उसकी मा और उसने यह तय किया कि उसका काशी विद्यापीठ मे पढना ही ठीक है। अगरेजी कालेज मे जो पढता, वहा उससे कम क्या सीखा है। नीलू तो बी. ए. पास है। वह क्या किसी विषय मे बिलू से ज्यादा अच्छा जानता है ? बिलू के साथ के ज्यादातर लडके कालेज के पढे है—बी ए., एम ए पास। तो फिर वे सब बिलू के पास क्यो पढने जाते थे ? लेकिन इन सबके बावजूद साफ अनुभव किया जा सकता है कि लोग विद्यापीठ की शास्त्री उपाधि को लगाते नही। जिस रोज बिलू के पास होने की खबर आयी, मै खत हाथ मे लिए अदर बिलू की मा को खबर देने गया था। कहा, 'आज से बिलू का नाम हुआ, पूर्णचद्र शास्त्री।' मैने सोचा था, बिलू की मा मै बडा उत्साह देखूगा। लेकिन देखा, मेरी बात का जरा भी जवाब नही दिया—सर झुकाये वह ध्यान से बरी बनाती रही। उसके बाद भी बहुत बार देखा है, पढने-लिखने का जिक्र आने पर बिलू की मा उसे दबा जाना चाहती है। इन्ही सब कारणों से बिलू मे इन्फीरियरटी कपलैक्स आ गया है। बिलू की मा भी मन ही मन सोचती है कि उसके बेटे को उच्च शिक्षा नही दी गयी—लडके के कारण नही, दस फेरे मे पड़कर और खास कर मेरी वजह से। सच भी, बिलू जैसा बुद्धिमान लडका अगर सुयोग-सुविधा पाता, तो वह बडा प्रोफेसर या वैज्ञानिक हो सकता था। नयी-नयी गवेषणा में उसका सारी दुनिया मे नाम होता। और

मै उसे ऐसे पारिपार्श्विक मे ले आया हू, जहा से जेल मे आने से भी विश्राम और शाति मिलती है। वह ऐसे वातावरण मे पला है, जहा फासी का हुक्म एक मामूली दुर्घटना के अलावा और कुछ नही। लेकिन बिलू बेवकूफ नही है, उसे भले-बुरे विचार की क्षमता है। बडे होने पर उसने अपना रास्ता आप ही चुन लिया है। इसके सिवाय और करता भी क्या ? •

चौक उठा। भला इस तरह से भी दरवाजे मे धक्का दिया जाता है ? अजी, दरवाजा बद है या नही, यही देखना तुम्हारा काम है न ! इसके लिए इतना जोर दिखाने की क्या पडी है ? बगल की सीट से कोई कह उठा, 'हा तोडो, तोड दो' और एक मच्छरदानी के अदर से किसी ने कहा, 'फिर तो जी जाये।'

तो, रात एक बजे का वार्डर आ गया। वार्डर मुझे देख रहा है। बडी-बडी सफेद मूछ—अच्छा खासा चेहरा। आखे मिलते ही उसने हाथ जोडकर मुझे नमस्कार किया। उसके बाद बैजनाथ वगैरह चार जने वहा बैठे थे, उस ओर मुडकर बोला, 'नमस्ते। आप लोग मजे मे है तो बाबू ?'

लक्ष्मी चतुर्वेदी ने कहा, 'अरे, सिहजी, बहुत दिनो के बाद आपको यहा ड्यूटी पर देख रहा हू। बात क्या है ?'

'एक हफ्ते की छुट्टी लेकर घर गया था। कल काम पर आया हू। युद्ध की खबर-वबर बताइये।'

'हम आपको खबर बताये ? हम लोग जेल मे रहते है। कहा आप हम लोगो को खबर बतायेंगे, सो नही, आप ही हमसे सुनना चाहते है।'

'हजूर लोग अगरेजी अखबार पढते है। इसलिए पूछ रहा था।' उसके बाद वार्डर साहब ने शुरू कर दी लडाई की, शहर की, अपने, देश की, महात्माजी की बहुत-सी अजीबो-गरीब खबरे।—माल गाडी पर लादकर बेहिसाब गिद्ध और स्पाट लडाई के मैदान को ले जाये जा रहे है। महात्माजी ने जिस दिन अनशन शुरू किया, उस दिन न जाने क्यो, हठात् फट् से लाट साहब के मकान की छत फट गयी थी ! महात्माजी से उलझने मे उस बार—राजकोट के दीवान का क्या हुआ था—और-और बहुत सी खबरे। यही खबरें सुनाने के लिए वह बेताब हो रहा था। उसके शुरू के सवाल इसी की भूमिका भर थे। उसके बाद वह बैजनाथ की खिडकी के सामने बरामदे पर बैठ गया—खूब जमकर गपशप करने के लिए। और दिन रात की ड्यूटी के समय कोई जगा नही रहता। वैसे मैं बड़ा अकेला-

अकेला लगता है। ऊघकर, खैनी खाकर, पहरो को जगाकर और पायचारी करके भी दो घटे का समय कटना नही चाहता। उनके गप-शप मे वार्डर बठा रहे, बैजनाथ को यह शायद अच्छा नही लगा।

बैजनाथ ने कहा, 'सिहजी, आप लोगो ने द्वापर मे किसुन जी और किसुन जी की मा को जेल मे बद किया था। और आज महात्माजी तथा उनके शिष्यो को बद किया है।' 'करम का लिखा क्या मेटा जा सकता है ? मगर किसुन जी को कितने दिन रोक कर रक्खा था ? आप लोगो को कितना दिन रहना होगा इसका कोई ठिकाना है ? यह कबख्त लडाई भी कभी खत्म होगी, ऐसा नही लगता।'

बैजनाथ वगैरह हो-हो करके हस पडे। सिहजी को उन लोगो ने फदे मे फसाया है। 'राधा किसन' कहने से ही सिहजी बिगड जाता है। कहता है, 'बोलो सीता राम' आज अनजानते आप ही उसने किसन जी का नाम लिया है। शर्म से हसते-हसते, दोनो हाथो एक बार ताली पीट कर सिपाहीजी दौडकर वहा से चला गया। बैजनाथ बगैरह ने पुकारा, 'सुनिये, सुनिये सिहजी, हम लोगो के छुटकारे की खबर ?' कौन तो उनकी सुनता है। सिपाहीजी तब तक वार्ड के दूसरी तरफ जा चुका। वार्डरो के हाथ मे एक लालटेन रहती है। सिह जी अपनी लालटेन झरोखे के सामने छोड गया। कामरेड गिरधर ने सीखचो की फाक से हाथ बढाकर उसकी लालटेन के तेल को चाय के एक कप मे डाल लिया। लडाई के दौरान किरासिन तेल की बडी कमी है · वे लोग छुटकारे की बात कर रहे है ! होम मेबर के स्टेटमेट का सुर, ऐमरी ने पार्लमिट मे क्या कहा, किस-किस काग्रेस कार्यकर्ता को छोड दिया गया, इन्ही की पृष्ठभूमि मे वह सब अदाज-अनुमान, वादानुवाद कर रहे है कि सरकार के रुख में कोई परिवर्तन हुआ है या नही। जेल मे आने पर शुरू मे तो राहत की सास ली जाती है, पर कुछ ही दिनो मे जेल-जीवन बड़ा एकरस लगता है। उसके बाद रात-दिन केवल छुटकारे की चिंता हो जाती है—अखबारो से उसके समर्थन और विरोध के सबूत इकट्ठा करने की धुन। फुद्दन बाबू ने अपनी इच्छा से ही छुटकारे के समर्थन के सबूत इकट्ठा करने का ठेका ले रक्खा है। अखबार पढ चुकने के बाद उनके चारो ओर भीड किस कदर होती है। बिसुनदेवजी ने इस पर तुलसीदास का अनुकरण करके एक दोहा भी बनाया है। हर रोज जैसे ही मेट अखबारो का बडल लिए आता है, वैसे ही कोई न कोई वह दोहा बोल उठता है—

तुलसी ढूढत जेल मे वह बढिया अखबार।
जिसमे चरचा सुलह की, करती हो सरकार ॥

खैर, आज न सही, एक न एक दिन तो सभी छूटेगे। पर बिलू ? बिलू को तो साथ वापस नही ले पाउगा। मै बूढा हो गया, मुझ मे अभी भी जीने की आकाक्षा कितनी है ? पर बिलू की उम्र ही क्या है ? उसके सामने तो अभी सारी जिंदगी ही पडी थी। औ, मै ही लौट कर जाऊगा, बिलू नही ! बिलू का ब्याह कर दिया होता, तो शायद उसे गाधीजी के मत मे विश्वास होता। ब्याह के बाद जीवन की उद्दडता समाप्त हो जाती है, जिम्मेदारी का ख्याल होता है। वैसे मे शायद बिलू साम्यवाद के विपत्ति भरे रास्ते पर कदम नही बढाता। 'सर्वोदय' मे काका कालेलकर ने उस लेख मे हसी-मजाक मे मोटामोटी ठीक ही कहा है। उन्होने यह दिखाया था कि काग्रेसी नेताओ मे जिनके स्त्री है, वे खासे नर्म है और जिनका ब्याह नही हुआ है या जो विपत्नीक है, वे कुछ हमलेवर-से है। जवाहरलाल, सुभाष बोस, बल्लभ भाई पटेल—कोई भी ठडे दिमाग से किसी बात पर विचार नही कर सकते। न , साम्यवादी पार्टी मे शामिल न होने से भी शायद बिलू को बचा नही पाता। इस आदोलन मे कितने ही लोग मारे गये , दैनदिन जीवन मे जिनका राजनीति से कोई सरोकार नही था। महात्माजी के शिष्यो में से भी कितनों ने हिसात्मक कार्य किया है, उसका ठिकाना है ? जन्म और मृत्यु किसी की मुट्ठी की चीज नही। ··

सरस्वती से बिलू का ब्याह कर देता तो बडा अच्छा होता। दोनो ही सुखी होते। बडी अच्छी है सरस्वती । अगस्त मे पुलिस ने उसे पकडा। तीनेक महीने बाद सबूत नही मिलने के कारण छोड दिया। वह फिर 29 जनवरी को स्वाधीनता दिवस पर जेल आयी है । उससे विवाह होने से दोनो राजनीति का काम करते हुए घर-गिरस्ती भी कर सकते। लेनिन ने भी तो विवाह किया था।

कपिलदेव और उसकी मा ने ब्याह की बात उठायी थी। उसके वश में कुछ गडबडी है। नही तो वह अशिक्षित भूमिहर-ब्राह्मण परिवार बगाली के यहा बेटी देने को राजी होता भला ? मुझे बेशक इस पर कोई आपत्ति नही थी। बिलू की मां राजी नही हुई। और बिलू की राय तो पूछी ही नही गयी। आज-कल का लड़का—उससे राय मुझे पहले ही पूछनी चाहिए थी। लेकिन जब बिलू की मां

ही तैयार नही हुई तो उससे पूछकर बात क्यो बढाता ? बिलू की मा ने ही मुझे बहुत पहले कहा था, कि बिलू का ख्याल है। राजनीतिक कार्यकर्ता को ब्याह का शौक नही रखना चाहिए। पर सरस्वती से फब्ता खूब। आज-कल के मध्यवित्त बगाली परिवार की लडकी से सरस्वती कही ज्यादा काम की है। तदुरुस्ती भी उसकी काफी अच्छी है। देखने-सुनने मे भी अच्छी है। देखते-देखते तो इतनी बडी हो गयी। कपिलदेव का सदर मे मामला-मुकदमा लगा ही रहता है। और कचहरी के काम से आता है, तो आश्रम मे ही टिकता है। प्राय हर बार वह सरस्वती को अपने साथ लाया करता था। अभी-अभी उस दिन भी, गुलाबी रग की साडी पहने छरछरी-सी लडकी, गुलाब-बाग का मेला देखने जाने के लिए बैलगाडी पर कपिलदेव के साथ आयी थी। हमारे घर की लडकी होती तो इस उम्र मे फ्राक पहनती। रसोई घर के बरामदे पर बिलू की मा ने उसे खाना दिया। दूध से कटोरे मे घूट लेकर लडकी जार-बेजार रो उठी। हरगिज बोलेगी नही कि क्यो रो रही है। आखिर सहदेव ने आकर बकझक करके, भुला-फुसला कर, दुलार कर रोने का कारण निकाला। 'दुधुआ फीका लगै छै' यानी उसे भैस का दूध पीने की आदत थी, गाय का दूध पनछा लग रहा था, इसलिए पी नही पा रही थी। ब्याह नही हुआ, अच्छा ही हुआ। हुआ होता तो सिर्फ अभागिनी की एक सख्या ही बढती। मेरा ही बोझ बढता। मैं और भी उलझ जाता। और फिर मै ही कितने दिन जिऊगा ! उसके बाद नीलू तो रहेगा। नीलू का रहना न रहना ! रहते हुए भी वह नही है। उस पर निर्भर रहना हो तो हो गया ! वह जैसा खाम खयाली और गैर जिम्मेदार है ··· ! बस, एक बिलू से ही वह जरा ठीक रहता है। और किसी को क्या वह आदमी समझता है या कि किसी की कुछ सुनता है ? छुटपन से ही वह शासन के बाहर है। बडा होकर बल्कि शांत और गभीर हुआ है। बचपन मे कितना शरारती था ! रोज कोई न कोई हरकत होती ही थी।··

उस बार दुर्गा बाबू के एक बतख को काट कर पका रहा था—आश्रम के पश्चिम की बसबारी मे। दुर्गा बाबू ने दौडते हुए आकर नालिश की। मै उनके साथ नीलू की खोज में निकला। दुर्गा बाबू का बडा लडका साथ ही था। उसी ने घर पर यह खबर दी थी। बसबारी मे मुलजिम माल सहित बरामद हुआ। साथ मे मुहल्ले के और भी कई लड़के थे, सबसे अचरज की बात यह कि उनमे

दुर्गा बाबू का छोटा लडका नीरू भी था। बतख के काटने की पूछते ही नीलू ने कहा, 'हा, हम सबने मिलकर बतख को मारा है।' वह गोया इसके लिए तैयार ही था। बाद मे जिरह मे मालूम हुआ कि छुरी नीरू ले आया था और काटा नीलू ने। काटने से पहले नीलू ने यह शर्त रक्खी कि काटते वक्त सभी लोग उसे छुए रहेगे। नीलू ने काटा और उसके पीछे नीरू वगैरह एक के बाद दूसरा, बच्चो के रेलगाडी खेलने जैसा पीठ पकडे खडे थे। दिमाग मे इतनी चाल आती है उसके!

नीलू का बलिष्ठ ऋजु शरीर, भावुकताहीन मुखडा---बिलू के सामने मानो सोहता नही। आज-कल देखने मे नीलू ही बिलू से बडा लगता है। वह जो सोच लेगा, उसे करके ही रहेगा। उसके अदम्य साहस के मुकाबले बाधा-विपत्ति तुच्छ लगती है। नीलू को कुछ कहते डर-सा लगता है! उसके मुह पर रोक तो है नही। पर बिलू को कुछ कहने मे पहले सोच लेना पडता है कि मेरा कहना उसके भावुक मन पर चोट तो नही पहुचायेगा। मुह खोलकर बिलू कुछ बोलेगा नही, पर शायद उसकी आखो मे आसू आ जायेगे। और नीलू? नीलू तो मेरे जी पर चोट पहुचाने का मौका मिले तो नही छोडता। जब नीलू के कालेज मे पढने की बात पहले-पहल उठी, तो मैने मना नही किया क्यो कि मैने देखा नीलू की तो ख्वाहिश है ही, बिलू और बिलू की मा की भी इच्छा है कि वह अगरेजी कालेज मे पढे। वह काशी विद्यापीठ में पढ़कर सतुष्ट नही हुआ और उसकी मा तो विद्यापीठ की पढाई को पढाई ही नही समझती। सब तै-तमाम हो गया। इस बीच नीलू बोल बैठा कि मै गाधी-सेवा सघ के पैसे से कालेज मे नही पढूगा। इतना भी उसके दिमाग मे आता है! नौकरी करते हुए जो थोडा-बहुत जमा किया था, उसी पूजी को तोडकर खाते-खाते वह खत्म हो आयी थी। मैने अपने पैसे लगाकर आश्रम की नीव डाली थी उसमे भी काफी रुपये निकल गये। तीन बार जुर्माने में भी लग-भग नौ सौ रुपये गये। काग्रेस के नाम पर बहुतो ने मेरी मदद करनी चाही, मैंने इनकार कर दिया। और आश्रमों मे जिस प्रकार चंदा बटोरा जाता है, हमारे यहा वह शुरू से ही निषिद्ध है। चदा लेने से जैसे आत्मसम्मान बचाना कठिन है, वैसे ही निष्पक्ष और निर्भीक होकर काम करना भी असभव है। अर्थाभाव से जब अपनी गिरस्ती ठप-सी हो आयी, तो ऐसे में पता चला कि गाधी-सेवा संघ से मुझे पचहत्तर रुपये माहवार दिये जायेंगे। शायद महात्माजी को सारी बातें मालूम

हुई। ये रुपये न मिलते तो मुझे शायद आश्रम की आय पर ही निर्भर करना पडता। आश्रम की आय भी क्या ? दो बैलगाडिया किराये पर चलती है, दो तेल पेरने के कोल्हू चलते है और, कुछ अखबारो की एजेंसी है—आमदनी का यही जरिया है। मधुमाछी पालन और तशर के कीडो से आश्रम को कभी भी कुछ खास लाभ नही होता। हा सब्जी की खेती से आश्रम के लोगो के खाने लायक शाक-सब्जिया मिल जाती है। पर इतना कुछ करने के बावजूद आश्रम को जो लाभ होता, उससे वालटियरो के खाने-कपडे का खर्च चलाना ही कठिन है। जिस पर अगर मेरी गिरस्ती का खर्च आश्रम के आमद से ही चलाना पडता तो कहा से चलता। आश्रम का पाठागार और कैसे निकल सकती आश्रम की साप्ताहिक पत्रिका ? अवश्य जिला काग्रेस के दूसरे खर्च से आश्रम का कोई सबध ही नही है। मुझे इतनी सारी परेशानियो से बचा लिया था गाधी-सेवा-सघ के उस माहवार ने। वे रुपये लेने कुछ अपमानजनक भी हो सकता है, ऐसा मेरे मन मे भी नही हुआ। ये रुपये चाहे जिस प्रतिष्ठान से दिये जाते हो, यह जिस किसी करोड पति का ही दान क्यो न हो, मै तो जानता हू कि यह महात्मा जी का आशीर्वाद है,—उनके सेवक को कठिनाई हो रही है, यह सोचकर उन्होने इसकी व्यवस्था कर दी है। और बिलू ने क्या कह दिया कि मै कालेज मे नही पढूगा, क्योकि मुझे गाधी सेवा-सघ का रुपया लेना पडेगा ! जायसवालजी की बहन से उस बार बापू की बाते हुई थी, सबको याद है। कोई जोर भी नही कर सकता। देखा बिलू और बिलू की मा भी नीलू का ही समर्थन कर रहे है। देखता हू कि कोई भी मेरे दृष्टिकोण से चीज को नही देखता। मेरे और मेरे परिवार के बीच का व्यवधान एक स्थान पर इतना गहरा है, यह मै पहले सोच भी नही सका था। बिलू की मा की शक्ति को ही मैंने उत्साहपूर्ण सम्मति समझ कर गलती की थी। लडको के दूसरे राजनीतिक पथ-ग्रहण की जड मे भी शायद यही आतरिक द्वद्व रहा है। उसके बाद देखा, नीलू ने कालेज मे पढा भी और मेरा एक पैसा भी नही लिया। कालेज का खर्च बिलू ने चलाया था। बिहार भूकप रिलीफ का काम काग्रेस कर्मियो पर पडा था। इस काम मे पूर्णता जिला का लेखापाल बिलू था। उसमे उसे तीस रुपये माहवार मिलते थे। ये रुपये उसने नीलू की पढाई मे खर्च किये। बडे भाई का रुपया लेने मे नीलू को सकोच नही हुआ—सकोच जितना, वह मेरा ही रुपया लेने मे। अपने जीवन मे इतना बड़ा निर्मम आघात मैने और किसी से पाया है या

नही, सदेह है। मगर मन ही मन मै यह बात ठीक ही जानता हू कि पढने-लिखने को छोड नीलू को जिस किसी क्षेत्र मे क्यो न छोड दिया जाय, वह उसी क्षेत्र मे सबसे ऊचा उठेगा। और बिलू शिक्षण के अलावा और किसी दिशा मे सफलता नही हासिल कर सकता था। इन हाथो से कितने छात्र निकले और मै इतना नही समझता ? किंतु नीलू, अपने भैया के खिलाफ तुम्हारे गवाही देने के मर्म को मै नही समझ सकता। तुम्हारी पार्टी ने ऐसा आदेश दिया हो तो मुझे कुछ कहना नही है। महात्माजी का आदेश हो तो मैं भी अपना सर्वस्व त्यागने को तैयार हू। पर, कोई राजनीतिक पार्टी क्या ऐसा आदेश दे सकती है ? नीलू और बिलू, दोनो की पार्टी का लक्ष्य एक ही है—कार्यक्रम मे शायद कुछ अतर हो सकता है। उसका नतीजा क्या यहा तक जा सकता है ? जो पार्टी जनमत पर निर्भर करती है, उसका तो कर्तव्य होना चाहिए जनता को दूसरी पार्टी की गलती समझाना और समझाकर गलत चल रही जनता को अपनी ओर करना। नीलू, तुमसे आदेश समझने मे निश्चय ही गलती हुई है। और इस गलती की फसल तुम्हे काटनी ही पडेगी। मै तुम लोगो के फार्मूले की युक्ति को नही समझता, यह सत्य है। लेकिन अपनी सादी बुद्धि से जितना समझता हू, वह ठीक है या नही, यह अपनी पार्टी के नेता स्थानीय लोगो से पूछ देखो, और, वह ठीक हो या बेठीक, अब उससे क्या आता-जाता है ? अन्याय और क्षति जो होनी थी, सो हो चुकी। तमाम जिदगी उठते-बैठते यह बात तुम्हे सालती रहेगी। अनुताप की ज्वाला तुम्हे तिल-तिल दगधेगी—फिर भी तुम्हारे किये काम का प्रायश्चित नही होगा। अरे, मै अपने लडके को अभिशाप दे रहा हूं क्या ? नही, नीलू, इश्वर करे, तुम अपनी गलती कभी न समझो। अपनी पार्टी के आदेश के बारे मे तुमने जो समझा है, जिसमे वही ठीक हो। क्योकि उसी के सहारे तुम अभी भी खडे हो। तुम्हारे मन का बल जितना ज्यादा ही क्यों न हो, अपनी युक्ति के औचित्य के बारे में सदेह पैदा होते ही तुम टूट पडोगे। मुझे तो पता है, तुम्हारा भईया तुम्हारे लिए क्या था।

'महाशय जी !'

आखे खोलकर देखा, खेदन लाल जी मेरे सामने खडे है।

'नीद नही आ रही है क्या ?'

यह न बैठे तो अच्छा। बैठा कि अनर्गल बक-बक करता जायगा ! भले आदमी खामखा इतना बोलते है ! भले मानस के तीन लड़के है—स्वराज प्रसाद, स्वतंत्र

प्रसाद और सगठन प्रसाद। गजब है ये नाम ! नीलू और बिलू। मेरे लडको के नाम बडे साधारण है। सोच-विचार कर नामकरण नही किया है। पिताजी बिलू को बलाई कहकर पुकारा करते—नही बलाई धीरे-धीरे बिलू हो गया। नीलू को शायद पिताजी ने नही देखा। हा, नीलू जब हुआ, तभी तो पिताजी का देहात हुआ। सोच-विचार कर नाम रखना भी एक झमेला है। खेदन लाल जी ने अपने मझले लडके को खत लिखा था। उसमे दूसरे-दूसरे लडको के नाम का जिक्र था। जेल के सी आई डी उस खत को हरगिज पास नही करने की। उनका ख्याल था कोड से कोई खबर भेजी जा रही है। तभी से सी आई डी. से उनका झगडा चल रहा। इसे ठीक से समझा देने से ही काम चल जाता। सो नही, दोनो ही अपनी जिद पर अडे रहेगे। खेदन लाल जी ने छोटे लडके को चिट्ठी लिखी थी। इस जिद के चलते परसो वह चिट्ठी वापस आ गयी। चिट्ठी मे एक पक्ति थी—'तुम लोगो को इतने दिनो तक चिट्ठी नही मिली, इसमे मेरा कोई वश नही था। इस चिट्ठी को मगर किसी उल्लू का बाप भी नही रोक सकेगा।' लेकिन यह चिट्ठी भी लौट आयी। साथ मे सी आई डी का नोट लिखा था—'इस कैदी ने अपने बाप के बारे मे क्या सब लिखा है, वह सदेहास्पद लगता है। इसलिए यह चिट्ठी पास नही की गयी।'

अरे, खेदनलालजी उठ कर जाने लगे ! अभी-अभी मेरे आग्रह से कबल पर बैठे और तुरत जाने लगे ! मैने बात नही की, शायद इसीलिए। भले आदमी ने मन मे क्या सोचा ? वह जाकर बैद्यनाथ की कुर्सी पर बैठे। बैद्यनाथ वगैरह सो गये शायद ? बैठे है, खेदनलाल जी, सुरज बल्ली बाबू, हरिहर जी और राम शरण जी। शायद ये लोग बारी-बारी से रात जग रहे है। जगे हुए तो शायद सभी है। बारी-बारी से चार-चार जने मेरी सीट के पास आकर बैठ रहे है। इसीलिए कुछ देर पहले शायद बैद्यनाथ वगैरह आकर बैठै थे ? सदाशिव और बैद्यनाथ मे जो गुप-चुप बात हो रही थी, वह इसीलिए—अब समझ मे आया। ये लोग मुझ पर निगाह रखना चाहते है। मुझ पर पहरा दे रहे है, कही मैं कुछ कर बैठू ! इन्हे यह कौन समझाये कि ये लोग मुझे जितना बेचैन समझ रहे है, मै उतना बेचैन नही हू। लडके के प्रति अगर मुझे उतना खिचाव होता, तो बिलू की आज यह हालत होती ? सदाशिव कहा चला गया ? वह मेरी ही खाट पर तो बैठा था। ओ, मेरे ही बिस्तर पर सोया पड़ा है। नीद आ रही है शायद। अहा,

मच्छरो ने खा डाला उसे ! बल्कि मच्छरदानी डाल दू। मुझे उठते देखकर सुरज बल्ली बाबू और हरिहर जी दौडे आये, 'क्यो, क्या बात है ? रहने दीजिये, मच्छर-दानी लगा देता हू, आप बैठिये।' शोरगुल से सदाशिव उठ बैठा। बेचारा एक-बारगी अप्रतिभ हो गया—'छि, इस गोलमाल का कारण मै ही हू ! मै फिर आकर कबल पर बैठ गया।'

'बैठिये सुरज बल्ली बाबू।'

सुरज बल्ली बाबू आकर कबल पर मेरे बगल मे बैठ गये। बडे अच्छे लगते है ये। ऐसे ही गभीर प्रकृति के है। तिसपर पिछले अगस्त मे इनका एक लडका आदोलन मे गोली का शिकार हुआ। दस साल का लडका। उसके पिता को जब गिरफ्तार करके थाना लाया गया, तो दल के दल लोग जुलूस बना कर थाने की ओर जाने लगे। सदर भेजे जाने के पहले अपने पिता को एक बार देख लेने के लिए वह भी उन लोगो के साथ आया था। घर पर उसकी दादी ने रोना-पीटना शुरू कर दिया था। मा खिडकी पर बैठी थी। उसे लेकिन बडा अच्छा लग रहा था। 'जय सुरजबल्ली की जय'। अनगिनत लोगो की जबान पर उसके पिता का नाम। सबकी जबान पर उसके पिता की प्रशसा। बबई मे महात्मा जी की मीटिग हुई। आज सबेरे ही उसके पिता ने सबको यह खबर सुनायी कि महात्मा जी गिरफ्तार हो गये। सिपाहियो पर उसे गुस्सा आने लगा। क्या जाने, वे पिताजी से कोई बुरा सलूक करे। जेल की सुनकर भी पहले उसे डर लगता था। लेकिन पिछली बार जब उसके पिता सत्याग्रह करके जेल गये, तो उनके गले मे गेदे की कितनी मालाए थी ! दादी ने तो पहले कहा था कि 'पिताजी जैसे ही न एक पाई, न एक भाई अगरेजो की लडाई मे' यह नारा लगायेगे, वैसे ही पुलिस लाठी की मार से उनकी जान निकाल देगी। लेकिन उसके बदले मे उसने देखा था, दरोगा जी—उतने बडे एक हाकिम ने पिताजी को न्योता करके अपने यहा भोजन कराया था। कई महीने बाद जेल से आते समय पिताजी बक्से में कितनी चीजे ले आये थे ! साबुन, पेसिल, लाइनदार कापी। जेल मे दाढी बनाने वाली 'बिलेड' की उसने छूरी बनायी थी। उसी बक्से मे उसने 'विलायती दतवन' देखा। नाना ने सर घुटाया था—दस-बारह दिन बाद उनके बाल जैसे हुए—विलायती दतवन के सफेद रोए देखने मे हूबहू वैसे ही थे। उस पर रबडी जैसी दवा रखकर मुह धोना होता है। छोटी बहिन धनखनिया ऐसी बुद्धू है कि उसके गाल पर वह दतवन जरा

रगडते ही वह रो पडती है। बचपन मे नाना भी उसे इसी तरह दाढी रगड देने का डर दिखाया करते थे। · थाने के चारो ओर घिरे तार के घेरे के पास अपार भीड। थाने की छत को देखना ही मुश्किल था, तो पिता को देखे ! घेरे को तोड कर वह जब समुद्र थाने के हाते मे घुस गया। भीड के ठेले से वह क्रमश आगे ही बढता जाता था। सुरजबल्ली जी की जय ! ये सभी थाने की ओर दौड क्यो रहे है ? उसके बाद

उसके दूसरे दित रात मे सुरजबल्ली बाबू को लॉकअप के बाद दरवाजा खोल कर बाहर ले गया। पता चला, अस्पताल ले जा रहा है। उन लोगो की अशेष दया कि अतिम घडी मे भेट करा दी। कुछ घटे के लिए श्मशान घाट पर भी रहने दिया था। लडके के बाये पैर को घुटने के ऊपर तक काट डालना पडा था। और, उसके बाद ही सिविल सर्जन ने समझा कि यह बच नही पायेगा। दूसरे दिन साझ को सुरजबल्ली बाबू जब फिर हम लोगो के बीच लौट आये, तो उनके सामने जाने मे ही झिझक होती थी। उस मौन गभीर आदमी को किन शब्दो मे सात्वना दूगा ? उस दिन मै इसी तरह जाकर उनके पास बैठा था। 'बैठिए।' बडी देर के बाद सिर्फ इतना बोले—'जरा देर के लिए होश आया। मेरे गले से लिपट कर उसने मुझसे कहा, 'ओ, किस जोर से गरम आता है, है न बाबू जी ?' उसके बाद दो ही घटे मे तो सब खत्म। अरे ! यह तो मेरी आखो के कोने मे आसू आ गये। नही-नही, यह आसू आया है सुरजबल्ली बाबू की सहानुभूति से। बिलू की सोच कर नही। सुरजबल्ली बाबू की आखो मे भी आसू देख रहा हू। किसी को रोते देखकर पास के आदमी के लिए आसू रोकना कठिन है। छि -छि अपने को इतना-सा भी सयमित करने की क्षमता मुझमे नही है, इतना भी सहने की शक्ति नही है ! महात्माजी, मेरे मन मे बल दीजिये। मात्र सुरजबल्ली बाबू ही मेरे मन की हालत को ठीक-ठीक समझ पा रहे है। उनकी सहानुभूति

बरामदे से दौडता हुआ कौन इधर आ रहा है ? वार्डर सिहजी ने हाफते हुए आकर खिडकी के सामने से लालटेन को उठा लिया। उसके बाद धीरे-धीरे गभीर होकर दूसरी ओर चला गया। दो-एक मिनट के बाद गारद के दरवाजे के सामने आकर खडे हुए जाफर साहब—असिस्टेट जेलर। मुस्कराकर हम सब को आदाब किया—और बिना कोई बात किये चले गये। ये रात के राउड मे आये थे। एक-एक दिन एक-एक असिस्टेट जेलर की ड्यूटी रहती है। इसलिए वार्डर जाकर लालटेन ले गया।

अच्छा, दाह-सस्कार के लिए जैसे सुन्जबल्ली बाबू को श्मशान जाने दिया था, वैसे ही मुझे भी जाने देगा ? शायद नही देगा। देना होता तो जरूर मुझे पहले ही खबर दी होती। देता, तो आखिरी बार के लिए बिलू का मुखडा देख ले सकता। देखने को भी क्या है ? शायद हो कि उधर ताक ही न पाऊ। नही-नही, बिलू का जो सलोना-सा मुखडा मेरे मन मे गडा हुआ है, वही मुखडा ठीक है। वही स्वाभाविक चीन्हा-जाना मुखडा ही मेरे हृदय मे रहे। जाने क्या का क्या देखना पडे। लेकिन कल अगर एक बार बाहर निकल पाता, तो नीलू से भेट होती। अभी उससे भेट करना निहायत जरूरी है। उसके मन की जो हालत है अभी। मुझे खौफ है, आखिर जाने वह क्या कर बैठे। एक तो गया। और एक के नसीब मे क्या है, हे ईश्वर, तुम्हे ही मालूम। मेरा तो जो होना था, हो चुका——चिंता बिलू की मा के ही लिए है। उसने तो निश्चय ही नहाना-खाना छोड दिया होगा। जेल के अदर किसी खबर को पहुचने मे देर थोडे ही लगती है। उसे सारी ही खबरे मिल चुकी होगी। शायद हो कि नीलू के गवाही देने की बात भी मालूम हो। यह आघात वह कैसे सहन करेगी ? राजनीति के बीहड रास्ते को उसने स्वेच्छा से नही चुना है। बाढ मे बहते हुए की नाई बहती आ गयी, बस। उसका स्वाभाविक क्षेत्र घर-गिरस्ती है, गहरे सुख से भरा ससार, बडे ही दर्द के साथ अपने हाथो से बनाया हुआ। जिस घर की दीवारो के अदर बाहर की उथल-पुथल नही पहुचती, घर की जिन दीवारों ने नही मिलने वाले विराट जगत को सीमित, प्रत्यक्ष और निश्चित कर दिया है, उसकी चाह की दुनिया वही थी। एक प्रकार से वहा से मै जबरन उसे एक अस्पष्ट लक्ष्य के काटो भरे पथ पर खीच लाया हू। खोल कर उसे न भी कहा जाय, तो भी वह सह सकेगी ? बिलू की मा ने बहुत बरदाश्त किया है, पर बरदाश्त की भी तो कोई हद होती है। उसे क्या कल दाह-कार्य के समय जाने देगा ? न जाने दे, वही अच्छा। अधिकारी वर्ग शायद उसे भी न जाने देगे। शव-देह को शायद फौजी-लारी से ले जाये। शायद हो कि बहुत खातिरदारी से सुप-रिटेडेट दाह-कार्य ब्राह्मण वार्डरो से करायें। जेल के चारों तरफ आज हथियार बद सिपाहियो का पहरा कितना है ? वे लोग शायद जेल की चहारदीवारी के चारो ओर गश्त लगा रहे है। इतनी चौकसी की कोई जरूरत नही थी। नाहक ही इतनी मेहनत कर रहे है वे। जेल के अदर तो जरा भी विक्षोभ या जरा भी हल-चल नही है। सारा कुछ रोज की भाति ही चल रहा है। सबेरे हो सकता है, जेल

के फाटक पर काफी भीड हो। हुक्म को तोडकर भी कोई-कोई शोक-सभा करेंगे। शहर मे हडताल हो शायद। मगर उससे मेरी क्षति की तो कुछ भी पूर्ति नही होगी। बिलू की मा तक को दिलासा देने वाला कोई नही है। उसकी छोटी बहन वृदावन मे रहती है। दीन-दुनिया से वह उदासीन है। बहन-बेटो से उसका ठीक से परिचय तक नही। और, बिलू के मामा सरकारी नौकर है ? यो ही तो कुछ अलग-अलग रहते है। उनके यहा से विजयादशमी के प्रणाम की भी चिट्ठी नही आती। तिस पर यह सब हाल। अब से तो अपनी नौकरी की खातिर वह यह भी कबूल नही करेगा कि हम से उसकी आत्मियता है। नीलू-बिलू कोई भी ननिहाल नही जाना चाहता। बडा होने पर एक बार गया था। देखा, एक दिन एकाएक लौट आया, क्यो चला आया कुछ समझ मे नही आया। बाद में मालूम हुआ था। उसके मामा ने मेरे बारे मे फतवा दिया था कि मैं एक 'परफेक्ट वेगाबोड' हू। उन दोनो को मेरा यह अपमान सहा नही गया। सच भी तो, उसकी निगाह मे मैं 'वेगाबोड के सिवाय और क्या हू ? दुनिया के प्रति मुझे जिम्मेदारी का कोई ज्ञान नही, कमाता-कोडता नही, फकत शोर-गुल करता हुआ घूमा करता हू। हिसाबी लोग ऐसे को 'वेगाबोड' नही कहेगे, तो और किसे कहेगे ? साधारणतया वे लोग हमे पागल समझते है। जब जरा तारीफ और इज्जत की नजर से देखते है, तभी 'वेगाबोड' कहते है। पुराने समय मे विलायत मे जो 'वेग्रेन्सिया' थी, उनके दायरे में हम जरूर आते। यहा अभी भी हम लोगो पर आसानी से बी एल केस मे सजा हुई है। 1921-22 के दौरान बडे-बडे काग्रेसी नेताओ को बी एल. केस मे सजा हुई थी। लडके-बच्चे इतने भावुक होते है! मै रहा होता तो हसकर टाल जाता। और नीलू की ही कहू, वह पिता का अदब करते हुए जो बोलता है, घर के सभी जानते है! पर किसी दूसरे ने जरा ऐसा-वैसा कह दिया कि खैर नही। मगर हा, इतना मै जरूर स्वीकार करूगा कि वह अभी भी मेरे सामने कुछ नही बोलता। उसने मेरे मुह पर आज तक जवाब नही दिया।

चलू, जरा मुह धो आऊ। बैठे-बैठे पीठ-कमर दुखने लगी है। अपने शरीर के बारे मे क्या लोग चाह कर जानते है, वह खुद ही याद करा देता है। उठते ही सुरजबल्ली बाबू ने पूछा, 'क्यो, कहा चले ?'

कहा, 'जरा ड्रम के पानी से मुह-हाथ धो आऊ।'

किसी हवाई जहाज की आवाज कानो मे आयी। इनके उडने का विराम

नही है। जिनके सैकडो लोग लडाई मे मारे जा रहे है, वे एक जान की कीमत क्या समझेगे ? मेरी आखो मे बिलू मेरा लडका है और उनकी नजरो मे ? लडाई के दौरान अन्य समय के विचार मे साधारण मान रक्खा जा सकता है भला ! आज साधारण नागरिक हाड-मास के बने विवेकशील मनुष्य नही, आज तो उसकी शिनाख्त आईडेंटिटी कार्ड मे है, राशन के कार्ड के नबर मे है। लडते हुए सैनिको की छोड दीजिये। तमाम ही लोग स्वाभाविक जीवन को भूल गये है। पहले एक हवाई जहाज जाता था, तो लोग नजर उठाकर ताकते थे। अब एक साथ तीन दर्जन बमबाज भी उडते है, तो कोई उधर नही ताकते। जब कलकत्ते पर बमबारी हुई थी, तो वहा के लोगो ने क्या उसे ऐसी ही उदासीनता से लिया था ? वे क्या जरा भी नही घबराये। लोगो को अभी बिलू के बारे मे सोचने की फुरसत कहा है ? और, अगर लोगो ने ही इस पर नही सोचा तो सरकार को काहे का सर दर्द ? बिलू की पार्टी बजा कहती है, किसका हृदय परिवर्तन करोगे ? हृदय हो, जब तो बदले ! लेकिन यह बात तो दुरुस्त है कि हिसा की जितनी ही शरण लोगे, विरोधी पक्ष का दमन भी उतना ही बढ़ेगा। उतना दमन सहने की शक्ति देश के लोगो मे है भी ? लक्ष्य पर पहुंचने की आकाक्षा कितनी तीव्र है, इसे नापने का माप-दड है कि देश उसके लिए कितनी कुर्बानी करने को तैयार है। यह सीधी-सी बात बिलू वगैरह नही समझते। कूद पडने से पहले अपनी जुर्रत पर भी तो सोच लेना चाहिए।

मुह-हाथ धोकर गमछे में हाथ पोछा। अरे, दास जी तो उठ गये। अपने मुंह-हाथ धोने और कुल्ला करने की आवाज से तो नही तोड दी नीद उसकी ? नही, शायद तीन बज गये। भले आदमी नितदिन तीन बजे रात मे जग जाते है। उसके बाद क्या जाडा और क्या गरमी, आधा घटा टब मे बैठते है। बहुत पैसे खरच कर जेल की फैक्ट्री से जलचिकित्सा का टब बनवाया है। देखने मे बहुत कुछ इजीचेयर जैसा। उसमें गले तक डुबो कर मुह से एक आवाज निकालते रहते है। वैसी ही आवाज, जैसे ग डुआ की पेटी से पानी ढालने पर होती हैं। बिस्तर की चादरे तान कर चारो ओर से परदा कर लिया है। बाथ कर लेने के बाद शीर्षासन। आधे घंटे से ज्यादा सर नीचे और पैर ऊपर किए थिर रहते है। मुझे डर लगता है, कभी नाक-मुह से खून न उबल आये।

अपनी सीट पर लौट आया। सुरजबल्ली बाबू बैठे हुए है। बिलू इस समय क्या

कर रहा है ? हो सकता है, खौफ और चिता से जर्जर हो सेल के अदर चहलकदमी कर रहा है। उसे क्या मेरी याद आयेगी ? काश, जान पाता कि शेष क्षणो मे बिलू मेरे बारे मे क्या सोच गया। नीलू पर वह तोहमत नही लगायेगा, उसे वह क्षमा कर देगा, यह बात मै बलपूर्वक कह सकता हू। ईश्वर ही जानते है, इस समय उसके मन की क्या हालत हो रही है। शायद पागल-सा हो गया हो। अपने बेत-रतीब बालो को शायद हाथो से नोच रहा है। या कि सीखचो पर सर पीट रहा है। या कि बच्चे की नाई वार्डर से दरवाजा खोल देने के लिए गिडगिडा रहा है। नही-नही, बिलू ऐसा कभी कर सकता है ? दु सह मानसिक पीडा से उसका हृदय चूर-चूर भी हो जाये, तो भी वह चेहरे पर यह भाव नही फूटने देगा। वह अतिम क्षण तक हर कोशिश करेगा कि अपने आदर्श के उचित सम्मान को बर-करार रक्खे। सुपरिटेडेट को दिखाने के लिए आखिरी दम तक होठो पर हसी लाने की चेष्टा करेगा।

जेलर से शायद मजाक मे कुछ कहे। सीढी से फासी के मच पर चढते-चढते अफसरो का शुक्रिया अदा कर जायेगा। इसलिए कि ऐसे सुदर प्रत्यूष मे शुकतारा को साक्षी रखकर उसे फासी दी। किंतु कमजोरी दिखाकर अपनी पार्टी को हर-गिज कलकित नही करेगा। मेरा लडका है, मेरा बडा लडका, भला मै उसे नही पहचानता ! यो ही क्या सभी बिलू को चाहते है ? हरदा की दूबेइन तो बिलू का नाम लेते ही गदगद, सहदेव की मा बिलू का नाम लेते ही पागल-सी हो जाती है। और जितेन की मा की तो पूछिये ही मत। बिलू भी स्नेह का कम कगाल नही। जितेन की मा तो अपने घर-की-सी है। दूसरे स्वल्प परिचित स्थान मे भी, जहा भी उसे स्नेहवर्षण का आभास मिला, वही बिलू उस धारा को स्थायी और बनाए रखने के लिए सचेष्ट रहा है। कही होली के बाद प्रणाम करने जाता, कही आश्रम से नीबू भेज देता। किसी के लडके की पढाई का प्रबध कर देता। उसके ऐसे कार्यों का कोई अत नही। ऐसे स्नेह का कोई दायित्व नही, दावा नही, सब जगह बधन भी वैसा मजबूत नही। यह सिर्फ स्नेह अदा करने का नशा है। घर मे मा के स्नेह के अलावा यह ऊपरी पावना—इसीलिए इसका स्वाद इतना मीठा है। नीलू के लेकिन यह सब बला नही। स्नेह का दावा हो सके, वैसी मीठी बाते बोलना वह जानता भी है ? वह अपनी ही धुन मे मस्त। अपने मत को ध्रुव-सत्य समझ कर बलपूर्क उसे व्यक्त करने मे व्यस्त। स्नेह के ऋण की अदायगी के

लिए जिन छोटे-छोटे कर्त्तव्यो को अदा करना पडता है भला उनके लिए नीलू समय नष्ट कर सकता है ? उतने मे तो उनकी आलोचना करने मे उसे ज्यादा आनद आता है। और बिलू, लोगो पर जैसे जादू कर सकता है। पिताजी पर भी किया था। कहना नही चाहिए, वह स्वर्ग गये, पिताजी को गुस्सा जरा ज्यादा ही था। कितनी बार देखा है, खाने बैठे, खाना जच नही रहा है। पहले तो जरा खुत्-खुत् किया, उसके बाद 'रेचेड डाएट' कह कर ग्लास को ठक् से ठोक कर उठ पडे। बिना खाये ही दफ्तर चल दिये। इधर मा को भी दिन भर भूखा ही रह जाना पड़ा। चाय ठीक नही बनी कि पिताजी ने 'वाहियात' कह कर पिर्च प्याले को उठाकर फेक दिया। ऐसी बहुत दिनो की घटनाऐ याद है। बुढापे मे गुस्सा और भी बढ गया था। अतिम दिनो मे कुछ-कुछ पागलपन के लक्षण दिखाई पडे थे। दोनो पाव धीरे-धीरे अकर्मण्य होते जा रहे थे। लाचार उन्हे काशी छोड कर पूर्णिया जाकर रहना पडा। शरीर जितना ही अपटु हो रहा था, गुस्सा उतना ही बढता जा रहा था। इसी समय आया बिलू। वह रात-दिन उसी रत्ती भर के बच्चे को ही लिए रहते। चल फिर नही सकते थे, इजीचेयर पर पडे रहते, पर 'बलाई' (बिलू) को नजर की ओट नही करते। टोले-मुहल्ले की स्त्रिया आती तो कहते, ये डाईन है—बिलू पर टोना करने आयी है। बिलू की मा को इसके लिए कितनी गालिया देते थे। आखिर जब उन्होने खाट पकडी तो दिमाग काफी खराब हो चुका था। खाट के चारो तरफ लकडी का फ्रेम बना दिया, ताकि लुढक कर नीचे न गिर पडे। बोली लगभग बंद हो गयी। आखे बंद किये रहते। बोध शक्ति भी कम हो गयी थी। परतु गुस्सा फिर भी नही कम हुआ। बिलू की मा को और मुझे नोच-खसोट कर परेशान कर देते थे। भात खिलाते समय उगली काट लेते थे। लेकिन ऐसी हालत मे भी बिलू को उनके पास बिठा देने से उनका सारा गुस्सा काफूर हो जाता था। गुस्से के मारे बच्चे की नाईं बिस्तर पर लोट-पोट रहे है और बिलू का कोमल हाथ उनके गाल पर रख दिया कि मत्रमुग्ध साप की तरह शात हो जाते। आखे बद किये हुए है। हमने बहुतेरा पुकारा, पर आखें नही खोलने के। जितनी ही कहें, मानो शरारती लडके जैसी जिद उतनी ही बढेगी। ऐसे मे हम बिलू से कहते, 'बिलू दादा जी को पुकार तो।' गजब, उस आधी बेहोशी की हालत मे भी ठीक समझ जाते कि बिलू पुकार रहा है। और, फौरन हाथ बढ़ाकर टटोलने लग जाते कि बिलू कहा है। फिर आखे खोल कर निहारते।

जिस रोज बाबूजी का सब शेष हो गया, उस दिन भी अतिम क्षण मे उनके कान के पास मुह ले जाकर कहा, 'पिताजी, बलाई पुकार रहा है, बलाई !' मन मे उस समय भी क्षीण आशा थी, कही बिलू का नाम सुनकर मुखातिब हो। लेकिन उस समय वह कोई भी पुकार कानो सुनने से परे थे। गजब की बुद्धि थी बिलू की। उस समय उम्र भी क्या थी उसकी ? उत्ते से लडके ने यह समभ्क लिया था कि उसके सिवाय और कोई दादाजी को वश मे नही कर सकता। दादाजी को शात करने के लिए या उन्हे खिलाने के लिए उसकी जरूरत है, यह वह पुकारने के स्वर से ही समभ्क जाता था। उस समय वह कुछ नकली उदासीनता और गभीरता दिखाता। लगता कि वह चाहता है कि उसकी मा जरा उसकी खुशामद करे।—बिलू क्या फिर अपने दादाजी को देख पायेगा ? पिता जी, अपने प्यारे बलाई को आखिर आपने यो अपने पास खीच लिया !

मन बडा बेचैन है। कमरे मे इतने आदमी। सभी जग रहे है। बाहर वार्डर है। भीतर की बातचीत की आवाज धीमी हो आने पर भी बिलकुल बद नही हुई थी। दासजी के नहाने के समय का शब्द सुनाई पड रहा है। घर कुछ शात है। बाहर कुत्ते के भौकने की आवाज। फिर भी जाने क्यो, आकाश-वातास मे एक थम्-थम् भाव।

सीखचो के भीतर से रोशनी बाहर बरामदे पर पडी है। साडी पहने—वह कौन ? न-न, वह, वहा पर जलावन की ढेरी है। उस पर रोशनी पडने से वैसा दिखाई दे रहा है। बिसुनदेव जी मेस का जलावन तक सचय करके रखता है। जेल मे सचय की यह प्रवृत्ति सब मे देखता हू। फटा कुरता, पुराना खडाऊ—सब कुछ रखना ही है। जेल मे रहने से ही ऐसी मनोवृत्ति होती है। लकडी की ढेरी देखकर हठात् ऐसा धोखा क्यो हुआ आखो को ? आश्रम की रसोई के बरामदे पर फाडी हुई लकडियो और गोयठे का स्तूप। भीतर बिलू की मा रसोई कर रही है। बिलू कही जायेगा शायद।

इसीलिए वह खाने बैठा है। इतनी जल्दी-जल्दी खाता है, चबाता हरगिज नही। रूखे बिखरे बाल। जेल की अधमैली नीली धारी वाली गजी और जाघिया पहने। दुबला और फीका पड़ा रग।

भगवान ! गाधीजी ! आप लोगो का नाम लेकर भी तो मन मे बल नहीं पा रहा हूं। फिर चरखा लेकर बैठा। यही मेरा अतिम सहारा है, अधे की लकड़ी,

मेरी जय की माला। ··· तिब्बत मे 'यरवदा चक्र' जैसी एक चीज को घुमाकर लोग नाम-जप करते है। हठात् सुरजबल्ली बाबू पर नजर पडी। भले आदमी चिंतित से मेरे मुह की ओर ताक रहे हैं। मेरे आख-मुह मे, मेरे व्यवहार मे जरूर कोई विलक्षणता प्रकट हुई है। प्युनी इतनी ही खराब है कि बार-बार धागा टूट जाता है। परदेस मे आदमी जरा-सा अस्वस्थ होने से ही घबरा जाता है। सगे-सबधियो को देखने को जी चाहता है। घरवालो के आतरिक सेवा के लिए मन व्याकुल हो उठता है। और, आज के जैसे दिन मे बिलू घरवालो को अपने पास नही पा सका! शायद हो कि उसे कितना कुछ कहने को रहा हो। बच्चो की मामूली बीमारी मे बिलू की मा का नहाना-खाना बद हो जाता है। रातदिन रोगी के बिस्तर के पास हो बीतता है। पखा झलने का विराम नही, चगा हो आने के समय पथ्यापथ्य का कितना विचार। बुखार छूटने के पहले दिन जरा-सा जूस, उसके दूसरे दिन दूध-डबलरोटी, उसके बाद आटे की रोटी, उसके बाद भात। नीलू-बीलू को पता है कि बुखार आने पर इस नियम मे इधर-उधर होने का उपाय नही। पर, आज मै इन्हे ऐसी स्थिति मे ले आया हू कि बिलू की मा बिलू को अतिम घडी मे अपने पास नही पायेगी। बहुत-से जानवर अपने बच्चे को खा डालते है। मै क्या उन्ही मे से हू? फिर धागा टूट गया। शायद बडा बारीक कात रहा हू, इसी से टूट-टूट जाता है। उहू, इससे मोटा कातने से तो प्राय: दरी बुनने का सूता हो जायेगा। ··

सुना है, नेपाल मे एक के बदले कोई दूसरा राजदंडभोग कर सकता है। सच है या नही, नही जानता। लेकिन सुना है, बडे लोग अपने बदले नौकर-चाकर को जेल भेज देते है। यहा, काश, ऐसा नियम होता। बिलू के बदले मेरे जाने से भी तो······

कितनी ही कहानिया सुनी है, किसी ने दूसरे की बीमारी अपने ऊपर ले ली। हुमायू जब मृत्यु-शय्या पर था, तो बाबर ने ऐसा ही किया था। लडाई के समय जो होस्टेज रखते है, वह एक के बदले दूसरे प्राण के दावे के सिवाय और क्या है?

फिर धागा टूटा। रूई ही पुरानी है शायद। इतनी बार धागा टूटने से चरखा काता जा सकता है कही? इस प्यूनी से पहले भी सूत काता है। कही, उस समय तो नहीं टूटा। नही, मेरा हाथ-पांव कांप रहा है। रूई को ठीक से पकड़ और जैसा चाहता हू, खीच नहीं पाता। आंख की पुतलिया भी नाच रही है। सूत धुंधला

हुआ जा रहा है, शायद तेल खत्म होता आ रहा है। आखो की दृष्टि कितने दिन रहेगी, उम्र के क्या पेड-पौधे है ? न , नाहक ही अपने को भूल समझने की कोशिश कर रहा हूं। मेरी इस समय जैसी मानसिक अवस्था है, उसमे चरखा कातना असभव है। सोहराब-रुस्तम की कहानी के मूल मे कोई भी ऐतिहासिक सत्य नही है—वह एकबारगी काल्पनिक है। पिता-पुत्र मे ऐसा हो सकता है कभी ? क्यो नही होगा, दुनिया मे सब कुछ सभव है। सिंहासन के लिए बाप-बेटे की लडाई—इतिहास की यही तो साधारण धारा है लेकिन मुझे ऐसी क्या सजा भुगतनी पड रही है ? सजा तो भोगनी पडी थी सिक्ख गुरु बदा को। अपने हाथो अपने लख्तेजिगर की हत्या करनी पडी थी। उफ् कितना लहू। कलेजे से फव्वारे की तरह लहू छूट निकला था।

सुरजबल्ली बाबू ने पूछा, 'कुछ कहना है ?'

अप्रतिभ होकर कहा, 'नही, कुछ कहा तो नही।' शायद अनमनेपन मे अतिम बाते जोर से बोल गया था। सुरजबल्ली ने जरा रुक-रुक कर कहा, 'चरखा कातने मे जरा भी कुछ भी अगर यानी तो छोडिये न।'

कहा, 'नही-नही, ठीक तो चल रहा है।'

लगा, कोई गलत काम करने मे पकडा गया। जवाब देने मे बोली लडखडा रही थी। उस छोटी-सी बात को किसी कदर खत्म करके चरखे पर नजर गडा सकू, तो जी जाऊ। प्यूनी के जहा से धागा निकलता है, जबरदस्ती वही पर नजर डाले रहा, जिसमे किसी से आखे नही मिल जाये। आखो से आसू उमडता आ रहा है। रात जगा हूं, जरूर इसीलिए, और किसी कारण से नही। रात जगने से ही आखो मे जलन होती है। महात्माजी ! मेरे मन मे बल दीजिये। सयम का बाध अब शायद नही टिकने का। अब तो अपने को ठीक नही रख पा रहा हू।

सुरजबल्ली बाबू ने कहा 'मास्टर साहब ! मास्टर साहब ! ओ मास्टर साहब !' यह आवाज जैसे बडी दूर से तिरती आ रही है। तद्रा मे दूर से रेलगाडी की आवाज जैसी सुनाई पडती है, वैसी ही। समझा, सुरजबल्ली बाबू पुकार रहे है। लेकिन जवाब देने को जी नही चाह रहा था। सुरजबल्ली बाबू ने मेरी पीठ पर हाथ रक्खा, हमदर्दी के हाथ के स्पर्श के लगते ही अपने को और नही रोक सका। 'बिलू ! बिलू !' चरखा-धागा छोड कर सुरजबल्ली बाबू के हाथ को कसकर पकड़ लिया। दोनो ही निर्वाक। उनकी आखो से भी आंसू की धारा बह रही थी।

अपनी-अपनी कुर्सी छोडकर वे चारो भी आ गये। छि यह क्या किया। लोग आ जुटे। झट उनके हाथ को छोड दिया। फिर चरखे पर बैठने की कोशिश की। बेकार की कोशिश। देखा, सदाशिव ने फिर पखा झलना शुरू कर दिया। वह तो सो गया था। शायद। जगा कब ? स्वस्थ आदमी को पखा झलने की क्या जरूरत है ? क्या सोच रहे है ये लोग कि मै तुरत बेहोश हो जाऊगा।

सदाशिव से कहा, 'ठडी हवा तो है। पखा झलने की कोई जरूरत नही।' मगर, कौन तो सुनता है।

जरा देर बाद सुरजबल्ली बाबू ने बहुत धीरे-धीरे पूछा, 'गीतापाठ करू, सुनियेगा ?'

ऐसी आतरिकता सनी मीठी बात। उनके आग्रह पर ना कहने की गुजाइश नही। कहा, 'पढिए।' फिर चरखे पर बैठा। वह गीता-पाठ करने लगे। मै समझ गया, वह मेरे पास गीता का पाठ क्यो करना चाहते है। मेरे हृदय मे बल लाने के लिए नही, सहानुभूति से नही, अपनी दुश्चिता दूर करने के लिए नही, बल्कि इस-लिए कि लाश ले जाने वाली मिलिटरी लारी, मजिस्ट्रेट और डाक्टर की मोटर की आवाज मेरे कानो मे न पहुचे। इसके पहले जितनी भी फासिया पडी, हर मे हम लोग भय मिश्रित उत्कठा से इस आवाज की प्रतीक्षा करते थे। मोटर के भोपू के तीखे शब्द ने हमारी स्नायुओ को जैसे सहसा आलोडित कर दिया। उसके बाद सारे वार्ड मे ऐसे सन्नाटे का आलम आया कि अपनी छाती की धडकन तक साफ सुनाई पडती थी। फिर तो रात काटे नही कटती, सबेरा जैसे हुआ ही नही चाहता। फिर जैसे ही मोटर-लारी की आवाज होती, लोग समझ जाते, लाश बाहर ले जायी गयी। उसके बाद नौ घटे बजते, कैदियो को जगाने के लिए। फासी वाले दिन की सुबह तो लोग जगे ही रहते है, फिर भी जो नियम है, उसका तो इधर-उधर हो नही सकता। उसके बाद दो घटे—सबेरे के 'गिनती मिलान' के। वह शब्द सबको यह बता देता है कि रात मे कितने कैदी थे, सबेरे ठीक उतने ही है। एक भी बढा नही, एक भी घटा नही। सभी वार्ड के वार्डर अपने अपने वर्गों के कैदियो की सख्या गुमटी को बता देते है। रात की सख्या से टोटल मिल जाने पर दो घटे के शब्द से वह अभावनीय सवाद चारो ओर प्रचारित कर दिया जाता है। जेलर जमादार साहब को चाबी दे देते है। सभी वार्डों का दरवाजा खोल दिया जाता है। चीटी की कतार जैसी लाइन मे कैदी लोग बाहर निकलते है।

'जोडा फाइल ! जोडा फाइल !' उनकी सजा के मीयाद का एक दिन कम हो गया। नये उत्साह से दुर्वह, दुरतिक्रम्य और एक दिन को घटाने के लिए वे जुट जाते है। हर घटा उन्हे याद दिला देता है कि चौबीस घटे से एक दिन होता है—एक दिन कट गया, अब इतने दिन और बाकी रह गये।

ये लोग मुझे भुलाने की चेष्टा कर रहे है। किंतु इस समय भला बिलू की बात भूली जा सकती है ? इस समय क्या करने से अन्यमनस्क हुआ जा सकता है ? हो पाता, तो जी जाता। भगवान की अशेष करुणा है कि एक साथ एक ही समय एक से ज्यादा बात सोची नही जा सकती। बिलू अगर अतिम कुछ क्षणो मे अपनी मृत्यु के सिवाय और कुछ सोच सकता, तो वह मन की अशाति और आतक से बच सकता है। शायद हो कि पीडा को समझ भी न सके। भगवान, तुमसे मैने कभी कुछ नही मागा है। आज इस कठिन विपत्ति के समय अपने सारे सिद्धातो को जलाजलि देकर मै तुम्हें अपनी इच्छा जताये बिना नही रह सका। भगवान अतिम घडी मे बिलू को किसी दूसरी बात की याद दिला देना, दूसरी बात सोचने की शक्ति देना। आखिरी घडी के पहले से ही जिसमे उसे मृत्युभय से तिल-तिल करके न मरना पडे। टेलिपैथी क्या सत्य है ? मेरे मन की इच्छा-आकाक्षा बिलू के पास पहुच रही है ? बिलू, देखो बेटे, तुम्हारे लिए तुम्हारा पिता आज अपने आगे, ईश्वर के आगे छोटा हो गया।

सुरजबल्ली बाबू गीता-पाठ कर रहे है। बहुत ही परिचित श्लोको को भी सुनते हुए मानो सुन नही पा रहा हू। सुनकर भी समझ नही पा रहा हू। शब्द-तरग कानो मे पहुच रही है, पर मन और मस्तिष्क मे कोई चेतना नही जगा सकती।—युद्ध के विशाल मैदान मे खडे होकर गीता की वाणी सुनना द्वापर मे ही सभव हुआ था। मै तो कुछ अर्जुन नही हू। हम लोग गीता का मर्म क्या समझे। जिस नास्तिक बिलू ने गीता की प्रति वापस कर दी थी, उसी ने लेकिन कर्मयोगी का मूलमत्र समझा है, कामो मे अपने को डुबा दिया है। और नीलू ? वही कम किस बात मे है ? उसके कठोर कर्तव्य-ज्ञान के सामने स्नेह, प्यार, अपनत्व का दावा, जनमत, उसका उतना प्यारा भैया—सब तुच्छ हो गया। और मै इन्हें नास्तिक समझता हू। ईश्वर का विश्वास हमारे मन में बल लाता है और ईश्वर पर अविश्वास ने इसके मन मे दुर्बलता नही लायी। जिस चीज से औरो का पतन होता है, उसी से तान्त्रिक साधको को सिद्धि मिलती है।

'ऐ ।' चौक उठा। हाथ से रूई गिर पडी । चरखे की घर्घर और गीता-पाठ के एकागी सुर को भेद कर, दूसरे सारे शब्दो को डुबाते हुए मोटर-लारी का भोपू सुनाई पडा । फिर मोटर के रुकने की आवाज। जैसे वह लारी मेरी छाती पर से गुजर गयी—उसे अगर खीचकर रोक सकता—बदन की ताकत से, जितनी ताकत मेरे शरीर मे है—ककरीले रास्ते से मुझे घसीटे लिए जा रही है—लारी के पहियो को रोक दू, इतनी ताकत क्या मेरे शरीर मे है—लारी रुकी, मेरे कलेजे की धडकन से मिलकर मोटर इजन की आवाज हो रही है। जैसे, किसी क्रुद्ध हिसक जतु का निर्घोष हो। सदाशिव मेरी पीठ सहला रहा है। सभी लोग चारो ओर खडे हो गये, गाडी से किसी के दबने पर जैसी भीड होती है।

सदाशिव ने कहा, 'आइये, सब मिलकर जरा प्रार्थना करे।' सभी वही बैठ गये। बैजनाथ की पार्टी के लोग, फारवार्ड ब्लाक वाले, किसान सभाई वह लडका, कम्युनिस्ट पार्टी का वह छोकरा—बाकी सब लोग तो है ही। मेहरचद जी ने 'राष्ट्रगगन की दिव्य ज्योति' शुरू की। आज किसी को भी प्रार्थना की आपत्ति नही, व्यग्य करते हुए गीत की चुटकी नही है। मेहरचद जी को जो पक्ति याद नही रहती, लोगो ने उसे पहले ही गा दिया। उन्हे जेब से कागज निकालने की नौबत ही नही आयी। सभी जी-जान से चीत्कार कर रहे है। इतने शोर मे अब मजिस्ट्रेट और डाक्टर साहब की गाडी आवाज नही सुनाई पड़ेगी। उसी इरादे से ये लोग प्रार्थना कर रहे है। मेहरचद जी का जैसे ही समाप्त हुआ, सदाशिव ने शुरू कर दिया, 'रघुपति राघव राजाराम।'

महात्माजी का प्रिय भजन। कितना मीठा और नित्य नया सुर है भजन का। बिलू के पार्टी वालो को आज भजन गाने में भी एतराज नही है। पहला गीत तो खैर राष्ट्रीय पताका पर था, पर यह भजन तो वैसा नही। बिलू की अतिम घडी मे उसकी आत्मा की शुभकामना मे, और, बिलू के पिता को थोडा अन्यमनस्क रखने के लिए उन लोगो ने अपने सिद्धात को जरा नमनीय कर लिया है। बिलू की पार्टी—ये लोग क्या जरा भी नही करेंगे ? रहा होता नीलू, तो क्या वह भजन मे शामिल होता ? हरगिज नही, वह टूट सकता है, झुक नही सकता। पहले नीलू-बिलू आश्रम मे इस भजन को कितना सुदर गाते थे। महात्माजी के सामने भी गाया था। मानसिक उद्वेग को दबाने के लिए ये लोग अस्वाभाविक तौर पर जोर से गा रहे है। तै कर लिया है कि अभी गाना बद नही करेंगे—जब तक बने, गाते

ही रहेगे। मच की सीढी से बिलू चढ रहा है अहा, नगे पाव मे ठोकर लगी कितना दुबला हो गया है, गरदन चिडिया की गरदन जैसी पतली, नाक कटार-सी हो गयी है—नीचे अधेरा, डोरी मे झटका लगा—बिलू, बिलू के जाने से क्या होगा ? मेरे इतने बिलू को वह रख गया। ईश्वर ! महात्माजी ! बिलू की मा को आघात सहने की शक्ति दीजिये, बिलू के मन मे बल दीजिये, बिलू की आत्मा को शाति दीजिये। भजन चल रहा है—

रघुपति राघव राजाराम, पतित पावन सीताराम
जय रघुनदन जय घनश्याम, जानकीवल्लभ सीताराम।

जोर मे, और जोर से।

औरत किता

सरस्वती चली गयी। गरज कि दरवाजा बद होने का समय हो गया। हा, वही तो—लूसी जमादारनी की बोली सुनाई पड रही है। सरस्वती जरा सर दबा रही थी, बडा अच्छा लग रहा था। उसकी उगलिया बडी नर्म है। दोनो रगो को कस-कर दबाया, फिर धीरे-धीरे उगलियो को भौहो के ऊपर से नाक की नोक तक लाती है। रगो का टप्टप् करना तुरत बद हो जाता है। माथे में जैसे कुछ जमा हुआ है, सख्त-सा। लगा, बात की बात मे वह भी गलकर हलका हो गया। जमा-दारनी उसे एक मिनट भी ज्यादा बैठने दे सकती है? हमे तो फिर भी जरा अदब दिखाती हुई बात करती है, पर सरस्वती तो 'सी' क्लासी है। उनका वार्ड अलग है। उसे इतनी देर तक इस वार्ड मे रहने दिया है, यही बहुत है। अहा-रे, वह फिर क्यो जेल लौट आयी, यह तो मै समझती हूं। मुझसे वह छिपा सकती है भला! पहले अगर यह समझती, तो सहदेव की मा ने जब चर्चा चलाई थी, तभी राजी हो जाती। फिर तो शायद मेरे बिलू की यह दशा नही होती। मगर राजी क्यो होने लगी! भगवान ने क्या मुझे ऐसा ही बना कर सरजा है! तो फिर दुनियाभर के सबको अपने पेट में भर कर बैठी कैसे रहती! 'अभागा जिधर जाता है, सागर सूख जाता है।' मेरे साथ यही हुआ है। सरस्वती के नसीब को ऐसे भी आग लगी, और ब्याह होने से भी शायद लगती। मैंने बिलू की राय तक नही पूछी। लडकी महज छात्रवृत्ति तक पढी है। आज के लडके यह कभी पसद करेंगे? मैंने सहदेव की मा को इसका थोड़ा-सा आभास भी दिया था। सहदेव की

मा ने मुझे कोई जवाब नही दिया। उसने सिर्फ टुकुर-टुकुर मेरे मुह की ओर ताका था। पर सहदेव बाद मे इसका जवाब मुझे देने मे बाज नहीं आया था। सहदेव ने कहा था—'हम लोग किसान-खेतिहर है। हम लोगो की बहन मिडिल पास नही होगी तो क्या सरोजिनी नायडू और विजयलक्ष्मी पडित जैसी विदुषी होगी ? और फिर बिलू बाबू ही ऐसा क्या पढे है। विद्यापीठ के शास्त्री ही है न !' सहदेव देखने मे सिटपिट-सा है, गायचोर की तरह चुपचाप रहता है। लेकिन जब सुनाने लगता है तो चुभा-चुभा कर कहता है। मेरे लडके का ब्याह, मेरी जहा इच्छा होगी, करूगी, नही इच्छा होगी, नही करूगी। इसके लिए बोलना क्या ! दोनो की जोडी फबेगी नही, मै इसलिए राजी नही हुई। बिहारी और बगाली फब सकते हैं कही ? जहा का जैसा, वहा का वैसा। एक पेड के छिलके को दूसरे मे लगा दे तो लगेगा ? मै कहूगी सरस्वती तो वे कहेगे सरोसती। सरस्वती क्या 'शुकतो'[1] पका सकती है ? गोकुल-पीठे का नाम सुना है ? बिलू अरहर की दाल नही पसद करता, और वे लोग अरहर के सिवा दूसरी कोई दाल नही खाती। वे लोग मसूर की दाल तब खाती है, जब स्त्रिया बच्चा होने के बाद सौरी मे रहती हैं। एक दिन बहुरियाजी को 'डाटा-चच्चडी'[2] पका दिया था। वह बोली, 'मै डाटा खाना खूब पसद करती हू।' वह डठलो को मुह मे लेकर चूस-चूस कर फेक देने लगी। चबाना शायद नही जानती। और, बगला बोलने का शौक कितना ? ये लोग क्या कोई भी अच्छी मिठाई बनाना जानते है ? जेल मे देखती रही हू। इन्ही लोगो के देश मे तो जिदगी बिता दी, कुछ जानना बाकी थोड़े है। मिठाई में बस एक 'पूआ', पूजा-पाठ, झाल-झोल—सब मे। पानी मे थोडा-सा आटा घोलकर, थोडा-सा गुड मिला कर किसी तरह से छान लिया—पूआ हो गया। न रस मे डालना, न और कुछ। दो चीजे मिला कर तरकारी बनाइये, ये चौक उठेगी। और उन्हीं से मै बिलू का ब्याह करती ! यह तो कुछ एक दिन दो दिन की बात नही। तमाम जिदगी लहसन और काली मिर्च खाकर क्या बगाली का बच्चा जी सकता है ? फिर भी सरस्वती मुझे बडी भली लगती है। अपने बेटे की बहू नही बना सकी, इसके यह माने तो नही कि उसे फूटी आखो नही देख सकती। छुटपन से उसे देखती आयी हू। कपिलदेव के साथ आकर कितनी बार

---

[1]बहुत तरह की मिली-जुली सब्जियो की बनी तरकारी, जिसमे तीता भी कुछ हो।
[2]साग की लबी डठलो की सरसो डाल कर बनी तरकारी।

कितने दिन आश्रम मे रह गयी है। बिलू और नीलू की तरह सहदेव भी मेरे ही हाथ का गढा है, यह भी कहे तो गलत न होगा। उम्र भी क्या है। उस दिन तो यह लडकी रत्ती भर की थी।

मेरी रसोई के बरामदे पर हरसिगार के फूलो से रगाई खद्दर की साडी पहने वह शरीफ लडकी बास पकड कर चक्कर काट रही है। कहा बाल, कहा जूडा, कहा अचरा—बो-बो करके घूमती ही जा रही है। मैने कहा, 'रुक भी, सर चकराकर गिर-विर पडेगी, जी मिचलाने लगेगा। मगर कौन किसकी सुने !' सरस्वती का स्कूल 'बेटी वेरी बैड, वेरी बैड टीचर फुल' कहते-कहते बिलू आकर रसोई के बरामदे पर खडा हुआ। फिर भी छोरी का घूमना रुकने को था ! घूमते-घूमते ही बिलू की बात का जबाब—

मेउ मेउ कू,
बिल्ली भैया थैंकू ।

सुर मिलाकर बिलू बोला, 'मुर्गे भैया की टाग खाती हो ?'

अब छोरी का घूमना बद हुआ। बरामदे पर हंसते-हसते लोट-पोट।

तदुरुस्ती बडी अच्छी है छोरी की। काम वह चला लेती लेकिन। बंगाली गृहस्थ घर की लडकी आकर क्या काग्रेस आश्रम की गिरस्ती चला पाती ? आश्रम क्या है, होटल है। मुकदमेबाज लोग मामले की पैरवी मे सदर आते है और आश्रम मे ठहरते है, मीटिग तो खैर लगी ही रहती है। समय असमय नही, रात नही, बिरात नही, लोगो के आने का विराम है ? वह तो मैं थी कि सम्हाल ले गयी, और कोई होती, तो रो-रोकर मरती। सरस्वती के हाथ का खाना खाकर बिलू का कितु एक दिन भी पेट नही भरता। मेरा बिलू तरकारी बेहद पसद करता है। बैठा-बैठा टप-टप खाता है—जितना भात, लगभग उतनी ही तरकारी। उसी से तो किसी तरह ये हड्डिया साबित है, वरना खाने का जो रवैया है चिड़ए की तरह चुग-चुग कर इत्ता सा भात खाना। और सरस्वती—उन लोगो को तरकारी खाने की आदत भी है क्या ! उन लोगो मे जो लखपती है, उन्हे गर्व है कि वे भात के साथ दो-तीन किस्म की तरकारी खाते है। और, टोले के लोग इस बात की चर्चा करते है। साधारण गृहस्थ के यहा वूधा-ऊची पीतल की थाली में लाल चावल के भात के बीचो-बीच गढ़ा-सा करके नाद भर अरहर की दाल, और, थाली के एक कोने में नमो-नमो करके चदन के टीका जैसी इत्ती-सी तरकारी। सोनामुख किये वही

खाकर उठ जाते और, कपिलदेव और सहदेव एक-एक लोटा पानी पीते है।

यह फिर कौन ? मेरे पाव से खीचातानी क्यो ? कौन है रे ? मनचनिया ? पाव मे तेल लगाने को किसने कहा ? बेशक बहुरिया जी ने कहा होगा। खुद तो सभी जाकर रामायण मे बैठी है और इसे भेज दिया है मुझे तग करने ! रामायण पाठ तो खूब जम आया है, देख रही हू। बहुरिया जी पढती है और बाकी सत्रह जने दोहारी करती है। कान भन्ना जाते है। हम लोगो के यहा कैसा है, एक आदमी रामायण या महाभारत पढता है, बाकी सब लोग बैठे सुनते है। बहुत हुआ तो जरा ऊ-हा किया। इन लोगो का सब कुछ अजीब है ! 'हा रे मनचनिया, मेरे पावो मे तेल लगाने को किसने कहा ?'

'सरोसती जाते समय कह गयी थी, कई दिनो से पित्त पडते-पडते मा जी के हाथ-पाव मे जलन है। हथेली और पाव मे जरा तैल-पानी लगा देना। आप खीजेंगी माई जी, इसलिए तो मैने अब तक लगाया नही। दरवाजे के पास बैठी थी। अभी जमादारनी आकर फिर डाट बता गयी। कहा, 'अभी से सोने का इतजाम हो रहा है ? माई जी की सेवा के लिए तुम्हारी और गलकट्टी की ड्यूटी पडी है। अभी से दरवाजे पर आकर क्या बैठ गयी ? आधी रात तुम जागोगी, आधी रात जगेगी गलकट्टी।' यह कहकर वह तो फडफडाती हुयी चली गयी। 'सरकार ने जेल मे डाला है, यहा तुम लोग जो कहो, वही करना है। बडा पाप किया है, नही तो बाम्हन की बेटी होकर दूसरे के पैर दबाने का काम करना था ? उनके हुक्म से आपका पैर दवाने आयी, तो माई जी, आप भी नाराज ..'

तीसेक साल की उम्र होगी मनचनिया की। 'सी' क्लास की साधारण कैदी है। देखने में खूब सुदर। ब्राह्मण परिवार की बाल-विधवा है। कुछ दिन पहले एक बच्चा हुआ। तुरत पैदा हुए बच्चे की लाश बसवारी मे एक हाडी में मिली। बच्चे के गले मे उगली का दाग था। अहा, मक्खन से मुलायम गले मे लहू जम कर नीला हो गया था। रत्ती भर का एक लोहू का डला ! उसी कसूर में मनचनिया को दस साल की सजा हुई, मनचनिया की मा को दो साल की। अच्छा हुआ, खूब हुआ। तू मा है। अपने पेट मे बच्चे को रक्खा। उस बच्चे ने ठीक से रोना तक नही सीखा था। और मा होकर तूने उस लड़के के साथ ऐसा किया। तुझ जैसी मा को घुटने मे काटा, माथे मे काटा देकर फूस की आग में घुला-घुला कर मारना चाहिए। न-न, उसने हरगिज यह काम नही किया। हो सकता है, वह उस समय

बेहोश पडी हो। यह किया है उसकी मा ने। दईमारी बडी खूखार है। और, उसी को सजा कितनी हुई, तो दो साल! कानून-इजलास का कोई ठीक-ठिकाना है? होता, तो मेरे बिलू को ऐसी सजा होती? न तो उसने किसी का खून किया है, न ही वह किसी को मारने गया है उसने तो काग्रेस का काम किया है। उसके लिए जेल मे रक्खो, जुरमाना करो। सो नही, फासी! भगवान, इतना अन्याय सहेगा?

'माई जी, तलहथी मे जरा तेल-पानी मल दू?' अहा, तग मत कर तो। माथे के घाव से कुत्ता पागल। कैसे तो कहते है, मै अपनी ही जलन से मर रही हू। और ये सब मिलकर मेरे पीछे पडी है! मुझे परेशान मत कर, जरा शाति से अकेले मे रहने दे। चौबीस घटे छत्तीस जने मुझे घेर कर मेला लगाये बैठी है, गोया मुझे तुलसी चौरे के नीचे उतार दिया गया है। रामायण-पाठ देखकर सोचा खैर, जरा देर के लिए निश्चित हुई। सो नही, इसने आकर वही गजर-गजर शुरू कर दिया। मनचनिया कहती गयी, 'माई जी. आज सबेरे आप जब बेहोश हो गयी थी न, तो डाक्टर साहब आये थे। वह कह गये, आपको उपवास करते तीन दिन हो गये, आप अगर कल कुछ नही खाएगी, तो आपको जबरदस्ती खिलाया जायेगा। 'सूई' देगा और नाक मे नली डालकर मुर्गी का अडा खिलायेगा।'

'हा रे हा, इस समय खाना ही मेरे लिए बडा हुआ! अरे, मै न खाऊ तो किसकी मजाल कि मुझे खिलाये!'

'आप इन लोगो को जानती नही है बूढी माई जी। नर्मदा बेन के बिस्तर बांधने की थैली है न? चमडे से खटिया मे बाध देने की वैसी ही व्यवस्था है इनके पास। कई जमादारनी मिल कर धर-पकड करके आपको खाट पर सुला देगी। उसके बाद बिस्तर बाधने जैसा आपको एडी चोटी बाध देगे ये, गद्दी दार खटिया के साथ।'

'अरे मै निगलना न चाहू तो निगलवा तो नही दे सकेंगे ये। जा-जा, ज्यादा बक-बक मत कर।'

भुलाये भूलने की नही। मनचनिया अपने तई कहती गयी, 'हारीन मधैया डोमिन है न, जानती हैं माई जी, उसकी नाक मे घाव हैं। जब-तब लहू बहता है। उसने पिछले साल, उन लोगों के आने से पहले, अनशन किया था। इसलिए कि उसे पाखाना 'सफैया' कमाड मे काम दिया गया था। उसने कहा, 'हम लोग राजा हरिश्चदर के वश के है। अपनी जात से हम लोगो को कितना बोलबाला है, हम कभी मैला कर सकते हैं। हम मुरदा नही छूते, जो पनाला साफ करते है,

उनके साथ बैठकर खाते नही ।' उसने यह भी कहा था, 'इस जेल मे 'सफैया' का काम सदा से सतालिने करती रही है । उसके बाद कितने दिनो तक उसे मुर्गे के अडे का शरबत जबरदस्ती पिलाया गया । मगर पिलाने से क्या हुआ, सस्कार अच्छा था उसका । डाक्टरो ने गो कि अडे के बारे मे नही बताया, लेकिन उसे कै होने लगी । लाचार सरकार को हार माननी पडी । साहब ने उसे 'पाखाना' कमाड से हटा देने का हुक्म दिया । महात्माजी सरकार से पार नही पाते । उसने लेकिन कई दिनो मे ही सरकार को एकबारगी ठडा कर दिया । 'कलक्टर' साहब ने आकर 'सुपरिटन' साहब की जो फजीहत की ! चमाइन जमादारनी ने एक दिन मुझे सारा किस्सा सुनाया था । एक बला तो टली लेकिन तभी से उसकी नाक से लहू निकलता है ।

फासी पर भूलते समय नाक-मुह से लहू निकलता है ? मनचनिया से पूछना चाहिए । उसने जब गला दबाया था, तो नन्हे बच्चे के नाक-मुंह से लहू उबल आया था ? न , मा होकर एक मा से भला यह सब पूछा जा सकता है ? यह पाप-कार्य अगर उसने अपने हाथो किया हो, तो उस समय वह उस सुकुमार शिशु के मुह की ओर ताक सकी होगी ?

दुर्गा के उस छोटे लडके का क्या हुआ ? मेरी ही गोदी मे सब समाप्त । ज्वर से भोगते-भोगते हड्डियो का ढाचा रह गया था, पेट निकला हुआ । अचानक दुर्गा की मा ने बुलवा पठाया । मै तरकारी की कडाही उतार कर उसके घर दौडी-दौडी गयी । दुर्गा की मा भी ऐसी है न, हर बात मे डर से ही मरती है । रो-पीट कर उसने सारे टोले को सरगरम कर दिया । अरे, उस नन्हे बच्चे की भगवान के यहा से पुकार हुई है, दो घडी उसके पास बैठ तो । सो नही, बोली, यह गुझसे नही होगा दीदी, मुझे बडा डर लगता है । मैने जाकर देखा, डर से काठ हुई दुर्गा बच्चे के पास बैठी है । उसकी हालत अब-तब है । मैं अपने बच्चे को अपनी गोद में लेकर बैठ गयी । गले में घरघराहट । आंख की पुतली का सफेद हिस्सा दिख रहा था । बेचारा जी-जान से सास लेने की कोशिश कर रहा था । तकलीफ से चेहरा, हाथ-पाव नीला पड गया था । उत्ता-सा बच्चा, जीने की कैसी चेष्टा ! उसके बाद मेरी ही गोदी मे उसकी सारी चेष्टाए समाप्त हो गयी । दवा की बात तो दूर, एक बूद पानी भी गले मे नीचे नही उतरा । लेकिन सबसे अचरज की बात यह कि अत मे बच्चे के नाक-मुंह से खून निकल कर मेरे कपडे-लत्ते का बुरा

हाल हो गया। मैने ऐसा कभी नही देखा था। दुर्गा की मा ने तो रो-पीट कर आसमान सर पर उठा लिया। दुर्गा काठ बनी बैठी थी—और टेपी की मा उससे खोद-खोद कर पूछ रही थी, 'हा रे दुर्गा, मुन्ने ने पपीता और तालमिसरी खाया था न ?'

बिलू जब पैदा हुआ था, खासा मोटा-ताजा था—इतना बडा, भर गोदी। सौरी मे हेड पडित की पत्नी देखने आयी। रुक्मिणी दाई ने बच्चे के गाल पर इतना काजल लगा दिया। बोली, 'इन पडिताइनो को तुम नही जानती। ये डाईनो से भी बढकर है। इनकी जहरीली निगाह जिधर भी पडती है, जलकर सब खाक हो जाता है। गाल पर स्याही नही लगा देने से देखोगी कि धीरे-धीरे सूखकर बच्चा डोरी हो जायेगा।' बुढिया दाई उस समय मुझे चौबीसो घटे शासन मे रखती थी, यह करो, तो वह सही करो, उठते-बैठते सावधान करती रहती। खैर बाबा, जो कह, वही सही। बिलू हुआ था विजयादशमी के दिन। हेड पडित जी की पत्नी आयी पूजा की छुट्टी के बाद। पहले वह अपने गाव पर ही रहती थी। उसी बार पडित जी पहले पहल परिवार को ले आये। पडित जी की पत्नी विश्वास ही करने को तैयार नही कि बिलू की उम्र बीस दिन की है। बिलू के मोटे-मोटे हाथ-पाव की ओर वह ताकती और रुक्मिणी कुछ बुद-बुदा कर कपडे से उसे ढकती जाती। ··

उसके बाद उस बार डबल न्यूमोनिया होने से बिलू का शरीर टूट गया। उस समय उसकी उम्र ढाई साल की होगी। 'ठाकुर' (ससुरजी) उस समय खाट पर थे, उनके पाव की ओर का हिस्सा धीरे-धीरे अवश होता आ रहा था। उसी समय बिलू बीमार पडा। कातिक-कातिक दो साल—अगहन, पूस, माघ, फागुन, चैत,—दो साल पाच महीने—बिलू की उम्र दो वर्ष पाच महीने थी। महीने दिन का इतना लेखा मुझे खाक याद नही रहता। उसकी बात भी नही। होती टेपी की मा तो मेरे हिसाब मे जरूर ही गलती निकाल देती। उसके सामने क्या कुछ बोलने की गुजाइश है, एक भी बात नही पाली।··· पहले दिन बिलू का कपाल कुछ गर्म देख कर ही मेरे मन मे घबराहट होने लगी। ओह, रात भर उसका वह रोना और छटपटाना! और बगल के कमरे से ससुरजी का क्या गुस्सा और डाट! बच्चे को सम्हालना मुश्किल। बिलू के दादाजी गुस्से से आगबबूला। उनकी फटकार से आखिर डाक्टर को खबर भेजी गयी। डाक्टर साहब ने कहला

भेजा रात को नही आ सकूगा। यह सुनकर ससुरजी के गुस्से की न पूछिये। बोले कि सरकार को शिकायत करके मै उसकी नौकरी ही खा जाऊगा। रात के एक बजे तक सीता पति की दूकान मे पाशा खेलेगा और रोगी मरता हो, तो भी रात मे देखने नही आयेगा! अभी तो जाडा भी नही है, बरसात भी नही। ये सब खूनी है। डाक्टर नही, डकैत है, बटमार। वह तो बिस्तर से उठ नही सकते थे। रिपोर्ट लिखने के लिए इनके पास लालटेन, कागज, कलम रखकर उन्हे चुप करा आयी। स्कूल के दरबान नन्हकू को फिर डाक्टर के पास भेजा। अलीबख्श की सपनी[1]—नन्हकू रात मे खुद चला कर उसी पर डाक्टर साहब को ले आया।

अभी भी लाठी के सहारे नन्हकू माईजी से भेट करने के लिए आश्रम मे जाता है। हरगोबिद डाक्टर को होठ टेढा करते देख कर ही मैने समझा, बच्चे की बीमारी टेढी है। फिर कई दिनो तक मौत और आदमी से लडाई चली। एक दिन तो बस, हो ही गया था। उसी दिन मैंने पहली बार मृगनाभि का गुण देखा। हाथ-पाव बिलकुल बर्फ हो गया था। हरगोबिद डाक्टर नब्ज दबाये, मुह बना कर बैठा था। कमाल कहिये दवा का! देखते ही देखते बूद-बूद पसीने से हाथ-पाव गीला हो गया। तकिया-बिस्तर लथपथ। उस निढाल पड़े उत्ते-से बच्चे को पोछना आसान था? तिस पर छाती और पीठ पर पोलटिस का बोझा। सबेरे डाक्टर साहब मुझे कह गये, 'आपके बच्चे को नयी जिदगी दिये जा रहा हू।' कहने मे जरा भी अत्युक्ति नही थी। धन्य धन्वतरि डाक्टर हरगोबिद बाबू। लेकिन कस्तूरी खिलाने के कारण महीने भर बच्चे के बदन की जलन नही गयी। छटपट करता रहता। तमाम रात उसके लिए खीचने वाले पखे का इतजाम किया गया। खैर, धीरे-धीरे बच्चा तो चगा हो उठा। लेकिन वही जो उसकी तदुरुस्ती टूटी, फिर क्या कभी ठीक से सम्हल सकी? बदन पर गोश्त नही चढा। बीमारी रोज लगी ही है। बड़े आदमी के घर की बात होती, तो जैसे बक्स मे अगूर रक्खे जाते है, वैसे ही आदर-जतन से रक्खा-पाला जा सकता। लेकिन जो नसीब लेकर आया था, वैसे आदर-जतन से खाना-पहनना तो बेचारे को एक दिन के लिए भी मयस्सर नही हुआ! हरगोबिद बाबू ने उस समय उसे क्यो बचाया था, क्यो उसे इतना बडा होने दिया? हे भगवान, यदि उसे लेने की ही इच्छा थी, तो उसी समय क्यो नही ले लिया था। मेरा लोभ क्यो बढा दिया!

---

[1] बग्गी जैसी बैलगाड़ी।

ऐसा, राक्षस की तरह लेना क्यो ठीक किया ? न जाने कितना पाप मैंने किया है। ईश्वर, मेरे पाप के लिए मुझे चाहे जो भी दड देते, पर मेरे पाप के लिए उसे सजा क्यो दी ? यह उस समय गुजर गया होता, तो नीलू को अपनी गोदी मे पाकर अब तक उसे भूल गयी होती। कोई एक लडका तो नही, उसका हजार किस्म का रूप। उसका लाख प्रकार का हाव-भाव, बातचीत मन मे आती है। एक लडका हजार के समान। कितनी स्मृति, छोटी-मोटी कितनी घटनाए, कितना लाड-प्यार, रोने-हसने की छविया चौबीसो घंटे आखो के आगे नाचती रहती है—उसका कोई लेखा-जोखा है ? जी में आता है, उन याद आने वाली बातो को जकड कर पडी रहू। बन पडे तो भर कर कलेजे मे रख लू। लगता है, मैंने बिलू को ही कलेजे मे पा लिया है, उसे छू रही हू, बदन पर हाथ फेर रही हू, जकडे हुए हू—उसे हरगिज नही छोडने की, किसकी मजाल है कि मा की छाती से बच्चे को खीच कर अलग करे।

जोर-जोर से चिल्ला कर इन लोगों ने रामायण की आरती शुरू कर दी। यानी अब रामयण-पाठ समाप्त होगा। ये सब आरती नही कहती है। कहती है 'आर्त्ति।' इस समय चीखती किस कदर है। जेल में आने के बाद से रोज, तीसो दिन सुनते-सुनते जी एकबारगी ऊब गया है।

आरती-गीत चल रहा है। सभी शब्द समझ मे नही आते।

> आरति श्री रामायण-अ जी की।
> कीरति कलित ललित सिय पी की।।
> गावत-अ ब्रह्मा दिक-अ मुनि सारद-अ।
> वाल्मीकि विज्ञान विसारद-अ।
> सुक सनकादि सेस अरु सारद-अ।।
> बरनि पवन सुत कीरति ई-की।
> कीरति की, रामा, कीरति-ई की।।
> गावत वेद पुरान-अ अष्टा दस-अ।
> छहो शास्त्र-अ सब-अ ग्रथन को रस।।
> मुनिजन-अ धन-अ संतन को सरबस।
> सार-अ अस-अ सम्मति सब ही-ई की।।
> सम्मति की, रामा, सम्मति-ई की।।

आरति श्री रामायण-अ जी की।
कीरति कलित-अ ललित-अ सिय पी की ।।
गावत अस्तुति सभु भवा-आ नी,
अरु वह-अ सत- मुनि-इ विज्ञानी-ई
व्या-अ स-अ आदि कवि वर्ग बखानी-ई
काग भुसुडि गरुड के ही-ई की-ई ।।
आरति श्री रामायण-अ जी की—
कीरति कलित ललित सिय पी की ।।

उसके बाद नये सुर मे शुरू हुआ —

आज-अ कथा-आ इतनी भई, सुनहु वीर हनुमान।
राम-अ लखन-अ सिय जानकी, सदा-आ करहु कल्यान ।।

और अब कमरे को चौचीर करते हुए शुरू हुआ —

अजोधिया रामलला की जै ! वृ दावन बिहारीलाल की जै ।
उमापति महादेव की जै ! रमापति रामचद्र की जै !
पवन सुत-अ हनुमान की जै ! महात्मा गाधी की जै !
सर्व सतन की जै ! जै जै ! हो-ओ-ओ-ओ-ओ ।

दोनो हाथो की ताली की आवाज करके सबने प्रणाम किया। अब सभी उठ पडे। लूसी जमादारनी, चमाइन जमादारनी—जहा रामायण-पाठ होता है, उसके बाहर बरामदे पर खिडकी के पास हाथ जोड कर बैठी रहती है।

लूसी सतालिन ईसाई है, मगर भगवान के नाम मे क्या जातिवाचक है ? उसे बडी भक्ति है। 'आरति श्री रामायण जी की, कीरति कलित ललित सिय पी की' टेक की यह पक्ति उसे मुखस्थ हो गयी है। जयकार के समय और यह टेक जब गायी जाती है, वह भी बाहर से चीखने मे बाज नही आती। गला है गरुडजी का। उनका नाम है सध्या देवी। रामायण पाठ के समय गला सबसे ऊपर रहता है। आरती मे जहा 'गरुड के ही की' है, वहा पर आते ही उनका स्वर सप्तम मे चढ जाता है। और उनकी नाक भी गरुड के ठोर जैसी है। इसीलिए मजाक मे सबने उन्हें गरुडजी कहकर पुकारना शुरू कर दिया। अब हालत यह है कि लोग उनका असली नाम भूल गये हैं। जमादारनी तक उन्हे गरुडजी के ही नाम से पुकारती है। शुरू-शुरू मे वह बिगड़ती थी, अब आदी हो गयी है। लूसी जमादारनी

एक दिन गरुडजी के नाम पर 'कपडा-गुदाम' से साडी तो ले आयी थी, उफ, उस दिन जो गुजरा। जेल से कोई चीज लेने पर जिस बही मे सही करनी पडती है, उस बही मे देखा, लिखा था—गरुडजी—एक साडी। हाय गजब। भद्र महिला रो-धोकर खाना-पीना छोड बैठी। जेलर साहब को चिट्ठी लिखी कि जमादारनी ने उनका अपमान किया है। यह भी लिखा कि लूसी औरत कैदियो को बीडी और खैनी बेचती है। लूसी की हालत तो पतली हो गयी। जेलर साहब ने आकर लूसी को गरुडजी के सामने माफी मंगवायी। तब कही उनका गुस्सा उतरा। लेकिन नाम उनका फिर भी नहीं बदला।

बचपन मे बिलू ने हमे कितनी रामायण-महाभारत पढकर सुनायी। मार्निंग स्कूल के दिनो और गरमी की छुट्टियो के समय दोपहर की धूप मे जलते हुए टेपी की मा, दुर्गा की मा, और जितेन की मा-दीदी, बिलू की रामायण-महाभारत सुनने के लिए आश्रम मै आया करती थी। बिलू को रामायण पढना पसद नही था। वह महाभारत पढना चाहता। पर जितेन की मा-दीदी, आते ही कहती, 'अरे ओ बारिदर के बेटे, तुझसे कहा न कि हम पुण्यवान नही है, हम काशीदास नही सुनना चाहती। रामायण ले आ। रामायण और चीज है, महाभारत और चीज।' बिलू कहता है, 'रुकिये तो ताई जी, जरा इतनी-सी खत्म कर लू।' सर और शरीर हिलाते हुए बिलू पढ़ता—'कांदे यज्ञसेनो, तितिल अवनी नयनेर-अ नीर-अ झरे।'[1] बिलू की आंखो में आंसू आ जाता। वह जब भी यह स्थल पढता, उसकी आखो मे पानी आ जाता। और ऐन उसी वक्त टेपी की मा कहती, 'अहा विजयादशमी के दिन पैदा हुआ है न, इसीलिए इसकी धात वर्षा की है।' सच ही, पढते-पढते कितनी जगह पर उसकी आंखो मे पानी आ जाता, इसका ठिकाना नही। हम लोग उमरदराज स्त्री, बच्चे की मा, षष्ठी-मगलवार का व्रत करती है, धरम-करम की पोथी पढने से कहा आसू से हम लोगो की छाती भीगनी चाहिए, सो नही, इन जली आखों में आसू क्या आता था ? बिलू छिपा कर दूसरी और मुह फेरकर आखो के आंसू पोछ डालने की चेष्टा करता। नीलू जरा दूर पर औंधा पडा सब देखता और चिल्ला उठता, 'मा, देखो, भैया क्या कर रहा है।' जितेन की मा-दीदी, उसे डाट कर चुप कर देतीं। कहती, 'घर के कोने की हाडी, और कहता है, मैं सब जानता हू। आप चुप तो रहिये।' पर नीलू को भला चुप

[1]यज्ञसेनी रोने लगी, आखो की कोर से धरती गीली हो गयी।

कराया जा सकता था ? वह हसकर, चीख कर घर को सर पर उठा लेता। नन्हकू महाभारत की जिल्दबदी करा लाया था—स्कूल के दफ्तरी से। उसके पहले पन्ने पर बिलू के हरूफ मे दो पक्ति लिखी थी—'खुद-इ मालिक—मा। बकलम बिलू।' महाभारत पर म्लेच्छ पडिती बघारा गया था। दुर्गा की मा कहती, 'बिलू के अब एक चुटिया रख दो। महाभारत पढते समय चुटिया खूब नाचेगी।' 'ऐ सक्राति-बाम्हन, खूब हिल-हिल कर पढना, भला ?' शर्म के मारे बिलू उनकी ओर ताक नही पाता। इधर नीलू चिल्ला पडता—'चुटिया धर कर दूगा तान, उड जाओगे बर्दवान।' जितेन की मा-दीदी भी कहती, 'हा बहन, अब बिलू का जनेऊ कर दो।'

हा, ठाकुर देवता पर बिलू की इतनी भक्ति, बडा होते ही कपूर की तरह उड गयी। बिलू के भी, नीलू के भी। कुछ दिन तो ऐसा हुआ कि जनेऊ नही होने से जिदगी ही बेकार हुई जा रही है। जब-तब बिलू वही बोल उठता, 'जनेऊ करने की नीयत नही है तुम लोगो की। जनेऊ तो नौ साल की उम्र मे ही होना चाहिए था। इस साल तो बस एक ही दिन है जनेऊ का।' जनेऊ के बाद भी देखा, नियम से सध्या, गायत्री, पूजा, एकादशी चलती थी। जाने कितने दिनो तक खाने के समय बोलता नही था, बाजार का नही खाता था, कही भोजभात खाने नही जाता था। कितनी निष्ठा ! कितना आचार-विचार ! बचपन से ही उसे पूजा-पाठ का शौक था। कितने श्लोक, कितने स्त्रोत कठ थे उसे। चार साल की उम्र मे श्रीकृष्ण का 'अष्टोत्तर शतनाम' और 'देवि सुरेश्वरी भगवती गगे' वह जबानी सुना जाता था। यही उस दिन की बात है। जनेऊ के पहले साल की, मै रसोई मे थी, ये दोनो भाई सोने के कमरे मे बिस्तर की गत कर रहे थे और तकिये से दुर्योधन का उरुभग कर रहे थे। इतने मे अचानक बिलू की चीख सुनाई पडी—'मा, ऐ मा, जल्दी आओ, जल्दी।' 'क्या हो गया ? हाथ-पाव तोड़ लिए क्या ? साप-बिच्छू तो नही है ?' मा का कलेजा, डर से ढिप-ढिप करने लगा। चूल्हे पर चढी तरकारी चूल्हे पर ही रही। गिरू कि मरू, गयी। देखा, नीलू बिस्तर पर स्थिर बैठा है—ठीक वैसे ही जैसे सर घुटाने के समय लोग हजाम के सामने बैठते है। बिलू नीलू को जकड़े बैठा है। दोनो ही डर से बेहाल। एक हाथ से मुट्ठी बाधे बिलू जैसे क्या तो पकडे हुए है। मेरे जाते ही दिखाया, नीलू के हाथ मे मा पूर्णेश्वरी की ताबीज, एक रुद्राक्ष और कटी हुई हर्तकी का एक टुकडा था। धागा टूट गया

था। उन्हे यह मालूम था कि इस तावीज के हाथ मे नही रहने से एक डग भी नही चलना चाहिए, चलने से नीलू का अकल्याण होगा। बोला—'मा जल्दी से एक धागा बना कर ले आओ।' फिर से ताबीज को बाधा गया। उसके बाद दोनो महारथी बिछावन पर से उतरे।

उस बार, महात्माजी के दौरे के समय, ठीक मानसाही पुल पर जैसे ही हमारी मोटर पहुची, देखा सामने ही धूल-कादो भरे दो नग-धडग लडके है। मोटर देख कर उन्हे डर लग गया है। क्या करें, कुछ सोच नही पाकर जरा इधर-उधर दौडने की कोशिश की। उसके बाद दोनो एक दूसरे से लिपट कर बीच रास्ते मे लेट गये। ईश्वर की दया से दोनो की जान बच गयी। लेकिन गाडी से उतर कर जब उन्हे उठाने लगी, तो देखा मारे डर के वे नीले पड गये है। आख खोल कर देख ही नही रहे थे। नीलू-बिलू, इन दोनो भाइयो की सोचकर मेरी आखों से आसू छलके पड रहे थे। उन दोनो को घर पहुचा कर तब कही मन को जरा शाति मिली। जरा देर मे क्या हो जाता। इसके बाद जब कभी भी नीलू-बिलू की बात एक साथ याद आयी, तभी आखो के सामने नाच उठी उन असहाय धूलकादो लिपटे दोनो लडको की शक्ले।

भगवान, तुम पर बिलू-नीलू को इतना विश्वास था, उस विश्वस को तुमने क्यो छीन लिया? 'बिलू जिस दिन पहली बार आश्रम में सध्या-कीर्तन के समय नही गया, मैने सोचा, सर-वर दुख रहा होगा। जब पूछा तो बताया, तबीयत ठीक है। बदन पर हाथ रख कर देखा, बुखार-वुखार नही था, तो? हुआ क्या? बाद मे जब बात समझ मे आयी, तो छाती पीटने की नौबत। जब बिलू को ऐसा हुआ, तो दुनिया मे हर कुछ सभव है। यह तो नीलू के जनेऊ फेंक देने जैसी टाल जाने की बात नही थी। नीलू तो गंवार-गोबिद है—वह अपनी ही धुन मे रहता है। उसका दिमाग गरम होता, तो मै सोचती, हजरत मिजाज दिखाने आये है। अरे, मैं तो तेरे पेट से नही पैदा हुई, तू मेरे पेट से जनमा है। तेरी नस-नस मैं नही पहचानूगी तो कौन पहचानेगा? तू आज बिगड उठा है, कल ही तेरा गुस्सा उतर जायेगा। तेरा यह गंवारपन बचपन से ही देखती आ रही हू। छुटपन में मोदीखाने के फेंके हुए कागज के ठोंगे में भी पैर लग जाने से नीलू प्रणाम करता था। गलती से कही पंजिका लांघ लेता तो सिटपिटा कर मेरे पास आता और अपने पाप की कहता। मुझसे यह कहला लेना चाहता कि अनजान में हो जाने से पाप नही होता।

एक दिन की बात, मै रसोई का काम खत्म करके रात मे अडी की चादर को सोडे मे उबाल रही थी कि बिलू ने पुकारा, 'मां, जरा नीलू की हरकत देखो।' लडको का इम्तहान खत्म हो चुका था। पढने-लिखने की बला नही थी। सोचा, नीलू के दिमाग मे कोई नया फितूर समाया होगा। जाकर देखा, फ्रेम म बधी मा सरस्वती की तसवीर को नीचे रखकर नीलू ने उसके ऊपर घर के सारे जूतो को बटोर कर रख दिया था। मै तो अवाक हो गयी! भला नीलू कभी ऐसा कर सकता है? वह तो नित्य परीक्षा देने के लिए जाते समय मुझे प्रणाम करने से पहले सरस्वती के चित्र को प्रणाम करता है! इसी पट से तो हर साल सरस्वती पूजा के दिन पूजा होती है। चदन के छीटे अभी भी लगे ही हुए है। 'अरे डकैत, पिशाच, तुझे ऐसी दुर्मति क्यो हुई?' बिलू ने बताया, 'हिसाब मे फेल कर गया है, उसी गुस्मे मे इसने यह हरकत की है। कैसा बददिमाग लडका है!' 'अरे, हिसाब मे फेल किया तो ऐसा करने की क्या पडी थी? पढा-लिखा नही, साल भर खेलता फिरा तो हिसाब मे फेल नही करेगा? मैने कितनी ही बार कहा था? उनके पास बैठ कर जरा गणित के सवाल समझ ले!' तो जवाब मे जनाब ने फरमाया, 'अगर पढ कर ही पास करना है, तो सरस्वती की खुशामद क्यो करू? यदि वह बिना पढे लडको को पास नहीं करा सकती, तो फिर देवी कैसी?' इतना कह कर वह कोने मे गुम होकर बैठा रहा। बिलू ने जूतो को हटाया, गगाजल छुला कर पट को फिर से दीवाल पर टागा। मैने पाच पैसे मा सरस्वती के पट से छुलाकर अलग रख दिए—इसलिए कि जब इस मूरख्र का गुस्सा ठडा होगा, तो इन्ही पैसो से मा सरस्वती की उससे पूजा कराऊगी। नीलू की ऐसी हरकते ख्याल ही करने लायक नही। लेकिन बिलू का कीर्तन मे नही जाना, मन से देवता-ब्राह्मण की भक्ति को निकाल फेकना—इसने बेशक मुझे सोच मे डाल दिया था। मेरे बिलू को ठाकुर-देवता पर विश्वास था। बचपन मे लक्ष्मी पूजा के दिन वह मुझसे अपने लट्टू और गोली पर लक्ष्मी जी के चरण की अल्पना बनवा लिया करता था। ऐसा किये बिना भला बहुत-से लट्टू और बहुत सारी गोलिया कैसे होगी? और, वही बिलू ऐसा हो गया, और, मेरी ही नजर के सामने? मै चौबीसो घटे भगवान से कहती, बिलू का तुमने यह क्या किया? उन दोनो के पिता के कानो तक यह बात न पहुचे, इसकी कितनी कोशिश की। पर वह कीर्तन मे नही जायेगा—यह बात कितने दिनों तक दबा कर रक्खी जा सकती थी? मैने छिपा कर बिलू के पीने के

पानी मे पूर्णेश्वरी का खडग धोया, पानी और चरणामृत मिला दिया और विनती की, मा पूर्णेश्वरी, मेरे बच्चे का कसूर मत लेना। और वह भी कैसे आदमी ? अजी, तुम उसके बाप हो। उनसे भूल-चूक होती है, तुम उन्हे समझा-बुझा सकते हो। तुम्हारे समझाने पर तो उनकी हेकडी नही चल सकती। लेकिन वह जबान खोलकर कुछ कहने के नही, गोया लडको के भले-बुरे का ठेका मेरा ही अकेली का है। उसी एक ढग के आदमी है !

ऐ रे, फिर सब आ धमकी तग करने। ऐसो को देख कर मेरे बदन मे आग लग जाती है, यह बात मै इनसे कहू भी कैसे और समझाऊ भी कैसे ?

कमला देवी ने आकर मेरी नब्ज पकडी। अरे, नब्ज देखना जानती ही कितना हो ! मुझसे तो यह कुछ छिपा नही है। पति डिस्ट्रिक्ट बोर्ड के डाक्टर है, लिहाजा ये यह दिखाना चाहती है कि मै भी कुछ डाक्टरी जानती हू। नाहक ही यह वहम क्यो ? मेरे ये भी तो मास्टर थे। मैने तो एक दिन के लिए भी यह नही सोचा कि चूकि उनकी स्त्री हू, इसलिए मै भी पडित हो गयी हू। वह तो काग्रेस की कितनी जानकारी रखते है, तो क्या मै भी कहूगी कि मै भी जानती हू ?

कमला देवी ने पूछा, 'अब कैसी है ?' गुस्से से एडी-चोटी लहर उठी। मेरे लिए तुम लोग परेशान हो, यह तो समझती हू, फिर यह ढग किसलिए ? गुस्से की जलन से जवाब दिया—'जो सोच रही है, उसमें अभी काफी देर है। ऐसी तकदीर लेकर दुनिया मे थोडे ही आयी हू कि सबको रख-रुख कर फटाफट स्वर्ग चली जाऊंगी। फिर तो हो ही गया था। सारे परिवार को खाये बिना मे दुनिया से नही हिलने की।'

कमला देवी ने नब्ज देख ली ! उसका हाथ ढीला हो आया। मेरा हाथ टप् से बिस्तर पर गिर पडा। हाथ मे ! झिनझिनी हो गयी। ओ., गयी, गयी। कितना दर्द हो रहा है हाथ में ! माथे मे बाये कान के पीछे, माथे के भीतर, लगता है जैसे अवश हो आया। तकिये से सर उठाने पर बायी ओर मानो टाल खाकर धप् से फिर तकिये पर गिर जाता है। आठों पहर कानो मे झीगुर की झी-झी जैसी आवाज। · कमला देवी को कसकर सुना दिया ! यह सब पंचपना तुम रामायण सुननेवालियो पर जमाया करो, जो तुम्हारी बाते सुनती नही, हां किये निगला करती है। उनमें से कई तो न कुछ समझती है, न ही कुछ जानती हैं। अनुसूया जी को उस दिन चाय बनाकर दी थी। बोली, 'जुकाम हो गया है, नमक

अदरक देकर जरा चाय बना देगी ?' चाय ली तो अपने ही लोटे मे। उसके बाद लोटे से ऊपर से अलग-अलग डाल कर जैसे पानी पीते है, वैसे ही ऊपर से हडहड करके चाय को मुह मे डाल लिया। फिर क्या था ! मुह-जीभ जलकर एकाकार। जो बनी-बनाई चाय तक पीना नही जानती, उसकी विद्या की बडाई ! उस जमात की सब समान ही है। और एक जो सरला देवी है, उनके भी थोडी-सी अकल-वकल जो होती। उसका नैहर रुपौली थाना के बुडहियाधन कट्टा गाव मे है। गाव शायद खूब बडा है। कितना बडा है, यह समझाने के लिए उस दिन कहा क्या कि—'गाव मे हाकिम-हुक्काम, दरोगा-पुलिस, हैजे का डाक्टर—इनका आना-जाना लगा ही रहता है। ऐसा वीद्धेष्णु गाव है कि गाव के कुत्ते तक इनके आदी हो गये है—हाफ-पैंट वाले लोगो को देखकर अब वे भौकते तक नही।' धन्य तुम्हारा गाव और धन्य तुम्हारी बुद्धि ! इन्ही बातो को लेकर कमला देवी नेतागिरी करती है, दल बनाती है। एसेंबली की मेबर है। न, वह अंगरेजी नही जानती। हाथ उठाना छोडकर वहा के और काम कैसे करती है, नही जानती। नर्मदा बेन ने उस दिन मुझे बताया कि कमला देवी यह नही चाहती कि बिहार मे कोई लिखी-पढी स्त्री काग्रेस मे आये। आने से उसकी कद्र घट जायेगी न ! इसीलिए वह मूर्खमडली ही जमाती है। बात शायद सच ही है। वह डब्बे के दूध को कहती है 'मोमिन का दूध' (मेम का दूध)। डब्बे का मक्खन यहा किसी को खाने नही देती है। कहती है, उसमे अडा मिलाया हुआ है। नही तो मक्खन कही पीले रंग का होता है ! फिजूल की बकवास कौन करे उससे

अरे, कमला देवी फफक-फफक कर रो रही है ! छि-छि, यह मै क्या कर बैठी। उठकर मैंने कमला देवी का हाथ पकडा।

'कमला, मै तुम्हारी मा की उम्र की हू। मुझसे गलती हो गयी, ख्याल मत करो, मैं क्या इस समय मैं रह गयी हू ? अभी मेरा दिमाग सही नही है, क्या कहते क्या कह गयी।' उसके सर पर हाथ फेरा। आसू पोछ कर उसने होठो पर हसी लाने की कोशिश की।

पूछा, 'मुझे माफ कर दिया न ?'

'आप भी क्या कहती है। लेट जाइये।'

यह कहकर उसने जबरन मुझे बिस्तर पर लिटा दिया। मेरे लिए दर्द और सहानुभूति उसके आख-मुह से टपक पड़ी। ठीक जैसे बेटी मा की सेवा कर रही

हो। मेरे लडकी तो नही है, मेरा जो कुछ है बिलू और नीलू। एक बेटी रही होती ! लडकी की साध क्या लडके से पूरी हो सकती है ? जब भी लडकी की बात मन मे आतो है, तभी लगता है, विलू मेरी लडकी है, नीलू लडका। बिलू का स्वभाव लडकी जैसा ही नर्म है, उसका व्यवहार वैसा ही दर्दभरा है। लडकी जैसी ही उसकी सहने की क्षमता है और उसी तरह से जरा ही मे उसकी आखो मे आसू आ जाते है। देखो न, कमला देवी को मैंने इतनी सख्त बात कही, मगर उसने जरा भी गुस्सा किया ? वह मुझे उल्टा सुना दे सकती थी। जबान तो कुछ नही है उसकी। उस दिन रसद-गुदाम के असिस्टेट जेलर को तो रुला मारा था। इस कमरे की सब मुझे कितना प्यार करती है, मेरी कितनी फिक्र करती है, कितनी सेवा करती है मेरी। और मै, झुझलाती हू, भला-बुरा सुनाती हू। ऐसी तो मै थी नही। जीवन मे मुझसे किसी का झगडा नही हुआ। जेल मे मेरा स्वभाव मानो बदल गया है। इस समय मेरे मुह और मन पर जरा भी बधन नही है। कमला मुझ पर पखा झल रही है।

वह बोली, 'जरा-सा मिसरी का शरबत पीजिये न, जरा-सा दू।' 'नही।' मैने जरा मीठी बात की न, फिर सर पर सवार हो गयी। इनके साथ मे करू क्या सोच भी तो नही पाती। और, भूख लगेगी तो खुद ही भकोसूगी, उस समय किसी की खुशामद की दरकार नही होगी। लूसी जमादारनी कह रही थी, परसो डाक्टर कह गया है, मेरे बिस्तर के पास चौबीसों घटे कुछ न कुछ खाने का सामान रक्खा रहे, कब खाने की ख्वाहिश हो आये, कहा तो नही जा सकता। इनका हाव-भाव देखकर हसी भी आती है, दुख भी होता है। यह गोया हारीन मधैया डोमिन का अनशन है। हम ब्राह्मण घर की व्रत-पूजा वाली स्त्री है। दो-एक दिन का उपवास तो हमारी आदत है।

टन्-टन् करके वार्ड का घटा बजा। इतनी रात गये फिर कौन आया ? कमरे का ताला बद करके जमादारनी दीवाल तडप कर जेल के साहब को चाबी जिम्मा देती है। और हमारे वार्ड के बाहर का फाटक चौबीसो घटे बद रहता है। अदर से किसी को कुछ कहना होता है तो बाहर से रस्सी खीचता है, अदर घटा बजता है। वही तो, लूसी किसी से बात कर रही है जैसे। फिर कुछ हुआ-हवाया क्या ? यह लूसी भी क्या कुछ कम है ? दिन भर बाहर टो-टो घूमती रहेगी, दुनिया भर के वार्डरो से गप्पें मारेगी और मैं यदि कहूगी, मैं जरा तरकारी बना लेती हूं, सेल में

बिलू को दे आयेगी ? कि वह आखे बडी-बडी करके कहेगी, 'हाय राम, यह कैसे होगा ? सेल मे कोई चीज पहुचाने का उपाय है भला ? वहा तो चौबीसो घटा कडा पहरा रहता है। वहा जाने से मेरी नौकरी सलामत रहेगी ?' अरे, हाय रे मेरे धरमपुत्र युधिष्ठिर रे ! सात काल लडका खाते बीता, अब कहते है डाईन ! तुम तो वार्डर के डर से बिलकुल सिट्टी-पिट्टी गुम हो न ! रात-दिन उन लोगो से हसी मजाक चलता है। लेकिन एक काम की बात कही कि सौ बहाने। अरी, तू भी तो आखिर लडके की मा है। तूने ही अगर मेरी बात न समझी तो और कोई न समझे तो उसे दोष कैसे दू ? ईश्वर करे, तुझे मेरे जैसा नसीब कभी न हो—लेकिन यदि होता, तो समझती। परसो बत्तीसो दात निपोर कर कहा, 'आपके लडके को आज अलग से पकाकर आलू की तरकारी खाने को दी है। खबर जैसी खबर। क्या बेशकीमती चीज दी है ! यह सवाद देते हुए आनद के मारे पिघल पडी।

दरवाजे के बाहर से लूसी चीख रही है—'कमला देवी।' 'क्यों रे, कौन आया था ?'

'रात ड्यूटी वाले डाक्टर बाबू। पूछ गया, माईजी कैसी है। ज्यादा कुछ गडबड देखो, तो अस्पताल मे खबर करना। बेहोश हो जाय, तो हरी शीशी सुघाने को कह गया। मनचनिया और गलकट्टी, सुन ले। दोनो शायद सो रही है।।

हमदरदी तो जाने कितनी हे। जैसा डाक्टर बाबू, वैसी ही लूसी जमादारनी। मै तुम लोगो को पहचानती नही। तुम सबकी, एक-एक की नस-नस पहचानती हू मै। तुम्हारे मुह और मन मे एक ही है। ऊपर से नीचे तक सब समान। दरोगा साहब को ही देखो न, जिस दिन बिलू के पिताजी को गिरफ्तार किया, उसी दिन काग्रेस आफिस मे भी ताला लगा गया। और मुझसे कह गया, 'मा जी, आप अपने घर में रह सकती है—उसे सरकार ने नहीं लिया है, जब्त हुआ है सिर्फ काग्रेस आफिस।' हाय राम, तीन-चार दिन के बाद मुझे तो गिरफ्तार करके थाने ले आया। बोला, 'मास्टर साहब की तरह आपको भी नजरबद रक्खा जायेगा।' थाने लाकर कितनी खातिदारी ! क्वार्टर मे दरोगा बाबू की पत्नी से मेरे जप और सध्या का प्रबध कर दिया। पति-पत्नी दोनो माजी-माजी करके हैरान ! पत्नी उनकी खूब है। अपने मुन्ने को मेरी गोदी में देकर बोली, 'आशीर्वाद कीजिये, यह जिसमें जिए-बचे। जैसे नौकरी है, दुनिया भर के लोगों का गाली-

शाप लेना ! आप मा जी जरा जी खोलकर आशीर्वाद दीजिये। एक के बाद एक, दो बच्चे गोद सूनी करके जा चुके है।' मैने कहा, 'अरे राम कहो। मेरे क्या, बाल-बच्चे नही है। भले लोग गाली-शाप देते है। यह लडका तुम्हारे वश का मुह उज्ज्वल करेगा। यहा के 'बरम्ह थान' को तो जानती हो—पूर्णेश्वरी के मदिर के पास-बहुत जाग्रत है। उसी पेड मे अपने नाम से एक ईट बाध देना।' खैर, मुह अध्याय तो खत्म हुआ। जेल मे आने के बाद सुना, दरोगा ने रिपोर्ट दी है कि सरकार द्वारा जब्त जिला काग्रेस आफिस से सरकार को बेदखल करके मैने वहा अनधिकार प्रवेश किया था। इसी कसूर पर मुझ पर शायद मुकदमा चलाया जायेगा। मजा देखो जरा। कैसी बात ! आसमान मे चाद-सूरज के होते इतना बडा झूठ ! दरोगाबाबू ने खुद मुझसे कहा, 'आप अपने घर मे रहे तो कोई हर्ज नही—वह हिस्सा सरकार ने जब्त नही किया है।' और देख लो, उसी ने नमक-मिर्च लगाकर शिकायत की।

जेल का डाक्टर उसी दरोगा जैसा है। लाल नीले पानी से कैदी को चगा करना—बाद मे फासी देने के लिए। ठीक मिया का मुर्गी पालना। और, मा जी कहकर पुकारता है ! कोई मा कहकर पुकारता है, तो जी ऐसा पिघल जाता है कि खरा-खोटा सुनाकर मन का गुबार निकाल लू, यह उपाय नही रह जाता। मै तमाम इलाके की मां जी, जिले के सारे काग्रेस कार्यकर्ताओं की मां जी। मेरे तो सारी दुनिया में लडके ही लडके। पर मेरा मन तो बिलू-नीलू पर पडा रहता है, इनके सिवाय और किसी लड़के की मा होना मैने नही चाहा। अरे मै तो इन दोनो को ही जी भरकर प्यार नही कर सकी—नही तो क्या मेरा बिलू प्यार का इतना कंगाल होता ! नही तो क्या वह जितेन की मा-दीदी को 'मा' कहता। मैं बिलू-नीलू को बिलकुल अपने दखल मे रखना चाहती हू ताकि उन पर और किसी का दावी-दावा न रहे। मगर मै उन्हे जकडे रहू तो क्या, दुनिया भर के लोग जो उन्हे चाहते है। उनकी ओर सबका आकर्षण है। मैं भला उन्हें पकडकर के रख सकती हू ? यों ही तो बिलू बडा भावुक है। 'तू' के बजाय 'तुम' कहने से ही उसकी आंखें छलछला उठती है। एक दिन दोपहर में खाते समय उन्होने कहा था—'बड़े बाबू को देख नही रहा हू। अभी तक लौटे नही है शायद,' बिलू अदर था। यह सुनते ही वह तो रो-धो कर बेहाल। नीलू होता तो वह शोर मचाकर उथल-पुथल कर देता। दीदी, तुम्हारे तो जितेन, बीरेन, हेबलू, बेलाबहुए, पोते-पोती सभी

है। तुम्हारी भरी-पूरी घर-गिरस्ती। किसी चीज की कमी नही। फिर तुम बिलू को मेरे पास से क्यो छीन लोगी, क्यो उसे पराया कर दोगी ? अपने लडके का जरा भी हिस्सा मै किसी को नही दे सकती ! ससार मे मेरे तो बिलू-नीलू के सिवाय और कुछ भी नही। चावल नही, चूल्हा नही, सर छिपाने को जरा-सी जगह नही। न रुपये-पैसे है, न धन-दौलत। मै तो उन लडको का मुह देखकर ही सारे कष्ट भूली हुई हू। ईश्वर, तुमसे यह भी नही देखा गया ! लडका फुसलाने के मतर से सबने मेरे बेटे को पराया बना दिया। ' जितेन की मा-दीदी देखने मे भली भोली लगती हैं, पर मन मानो जलेबी का पेच। दूसरे घर की कोई एक गहना गढाये न,—खोद-खोद कर देखते हुए उसकी दस दशा करेगी। उसे सारी बातो की खोज-पूछ जरूरी है—सोना मेरे सोने जैसा लगता है। कितनी मिलावट है, किससे बनवाया, वजन कितना है—मजूरी कम दी तो गढन बढिया कैसे होगा। बिलू-नीलू से मेरे घर का सारा अता-पता जानना जरूरी है—तेरी मा तेल मे छौक डालती है कि घी मे, तेरी मा बैगन को तेल में छानती है कि थोडे तेल मे भून लेती है। नीलू वगैरह जब छोटे थे, वह उनसे यही सब पूछा करती थी। सोचिये भला, इन बातों से क्या मतलब ? बिलू तो ऐसा है कि कभी कुछ नही बताता। पर नीलू मेरे पास आकर उन बातो की नकल उतारता। हूबहू दीदी का गला, हूबहू दीदी का हाव-भाव। सुनकर हसी के मारे जान जाने की नौबत। पर, दीदी को क्या ऐसा चाहिए ? मेरी ठहरी गरीबी की गिरस्ती। तुम लोग हुए अपने लोग। इन बातों की चर्चा की क्या पड़ी है ? इधर दीदी हम लोगो को करती भी खूब है, इसे मैं अस्वीकार नही कर सकती। बर-बीमारी मे देखभाल, किसी बहाने खिलाना-पिलाना—इनकी तो खैर बात ही नही। नीलू तो अभी भी वही रहता है। जी-जान से करेगी—और, खूब कर रही हू, यह सुना देने से भी बाज नहीं आयेगी। दीदी का स्वभाव ही ऐसा है। और, जरा भी गभीर नही—बड़ा हलहल-गलगल भाव। बिलू को कहती हैं, बरिदर का बेटा, नीलू को कहती है माछपातुरी और इनके पिता का नाम रक्खा है 'दाढ़ी'। यह सब ऊंलजलूल न करके सादी भासा में नाम से ही पुकारें तो क्या हो ? ' आदमी का मुह वाला, एक किस्म का, डब्बे का कटोरा हम लोगो के समय में होता था—हूबहू वैसा ही मुह। झिंगी के बीये जैसे काले दात। इत्ता-सा जरदा मुह में डालकर आठों पहर थूकना। थी तो ब्राह्मण पुरोहित की लडकी। नैवेद्य का चावल और कच्चा केला खाकर

बचपन मे पली । पुरोहिता में पाई लाल कोर की साडी छोड़कर बारह वर्ष की उम्र तक और कोई साडी नही पहनी। बडे आदमी के यहा ब्याह हुआ, इसलिए तर गयी। सो नही, अब जमीन पर पाव नही पडते—जैसे साप के पाच पांव देखे हो! भगवान ने तुम्हे दिया है, तुम्हे है। मगर जिसे नही है, जरा उसे भी आदमी सोचा करो। मै भी कुछ गये-बीते घर की बेटी नही थी, न गए-बीते के हाथ पडी हू। मगर मेरा करमफल—मुट्ठी मे साना लेती हू, धूल हो जाता है अच्छा दीदी, बिलू तुम्हे ताई जी कहता था, तो तुम्हारा जी क्यों नही भरा ? न दीदी, सच कहू, तुम पर मुझे जरा भी गुस्सा नही तुम लोग थी, जभी बिलू-नीलू अपने जीवन मे कुछ शौक-अरमान मिटा सका। जब ये जेल मे थे, उन लोगो को खडे होने की जगह नही थी, उस आडे वक्त मे तुमने ही तो उन्हे रहने की जगह दी! बिलू के जाने से तुम्हे क्या मुझसे कम दुख होगा। यह क्या मै नही जानती! मै हृदय से अगर बिलू को तुम्हे दे देती, तो क्या दीदी, बिलू को तुम बचा सकती ? मेरा बिलू जिये, अब उसे तुम्हारे हाथो सौपने मे मैं कजूसी नही करूगी। अब तुम्हारा सहारा भी कुछ स्मृतिया रही, मेरी भी। उन्ही पर अब तमाम जिंदगी काटनी पड़ेगी। नही दीदी, तुम्हारी दया, तुम्हारा अपनत्व मैं कभी नही भूल सकूगी। मेरे बच्चे मछली इतना पसद करते थे, पर आश्रम में तो मछली पकाने की गुजाइश नही थी। हम बूढे ठहरे, गाधीजी के कहे मुताबिक बीस साल से मास-मछली खाना छोड रक्खा है। पर बच्चो पर जब्र कैसे करू ? तुमने तो दीदी मेरे मन की समझी थी। बिलू-नीलू को रोज बुलाकर मछली खिलाना, अपने यहा मुझे मछली खिलाने के लिए कितना जोर करना,—दीदी, तुम्हारे प्राणो का अपनत्व मैं खूब समझती हू। तुम्हारे निकट मैं जन्म-जन्म की ऋणी हूं। तुम्हारी निदा करू तो मेरी जीभ गलकर नही गिरेगी ? तुम्हारी निंदा की बात सोचना भी मेरे लिए पाप है। अच्छी बात मन मे आये कैसे ? तुम भी तो बिलू की मा हो—तुम्हे तो नये सिरे से मेरे मन की हालत समझानी नही होगी। बिलू तुम्हे कितना चाहता है, तुम्हारी कितनी भक्ति करता है। बिलू ने जिसे एक बार मा कहा है, आज के दिन मै क्या उस पर गुस्सा कर सकती हू ? बिलू के मा कहकर पुकारने का मर्म मैं तो समझती हू। वह पुकार तो नही, पुकार सुनकर सारा मन उसकी ओर दौड जाता है। लडका तो नही, एक-एक शत्रु है। लडकों के बारे मे जितना सोचा, उसका आधा भी अगर भगवान की सोचती तो भगवान मिल जाते। पर जितना

ही जकड कर पकडो, पुचक जायेगा। बज्र बधन और हलकी गाठ। नही तो—वही लडका बिलू बरामदे मे बैठा पढ रहा है, मै अगर पीछे से पाव दबाये आहट किये बगैर भी चली जाऊ तो भी वह समझ जाता। कहता, 'मा-मा गध लग रही।' और,सच ही वह गध पाता था। जब छोटा था, नहाकर मै आती कि मुझसे लिपट जाता। कहता, 'तुम नहाकर आती हो कि मै मा-मा गध पाता हू।' मैं कहती, 'अरे शैतान लडका, बासी कपडा-कुरता पहन कर मुझे मत छू, ठाकुर घर मे, रसोई मे दुनिया भर का काम पडा है।' मगर वह सुनने वाला भला, कहता, 'मटका का कपडा छूने से छुतता है कही?' और नीलू इतना बडा शैतान, उसने जाने कितने दिनो की कितनी-कितनी बाते जमा कर रक्खी है। उन्ही सब की याद दिला-दिला कर वह मेरे पीछे पड जाता। कहता, 'मा, तुम भैया को मुझसे ज्यादा प्यार करती हो।' अरे पागल, ऐसा भी होता है? मा कभी एक लडके को ज्यादा, एक को कम प्यार करती है। भगवान का नियम ही जो ऐसा नही है। कि नीलू कह उठता, 'अच्छा मा, मान लो पूर्णिया मे वकराक्षस आया है। वह सिर्फ लडके का मास खायेगा। दूसरा कोई मास वह नही खाता। हर घर से एक-एक लडका उसे देना ही पडेगा। आज तुम्हारे घर की बारी है। बताओ, ऐसी हालत मे तुम वकराक्षस के पास किसे भेजोगी भैया को या मुझको?' 'जा, हट, बकवास मत कर।' इतनी फिजूल बक-बक कर सकता है।

इतनी बाते तेरे दिमाग में आती कहा से है, मै तो समझ नही सकती। मै किसे देने लगी, किसी को नही दूगी। कि नीलू 'समझ गया, समझ गया' कह कर घर को गुजा देता। समझा तो खाक। तुम लोग यदि मा के मन की बात समझते होते तो मुझे दुख किस बात का था। नही तो क्या नीलू ने एक दिन मुझे यह समझाया होता कि मा का प्यार स्वार्थ के नाते होता है। यह समझाने के लिए उसने एक कहानी कही थी, 'एक बिल्ली और उसके बच्चे को पहाड पर रख कर नीचे से चूल्हे मे आच दी गयी। कुछ ऐसा इतजाम किया गया कि बिल्ली भाग नही सके। जब पडाह खूब तप गया, तो बिल्ली धीरे-धीरे जाकर बच्चे की पीठ पर बैठ गयी। सब मां ही इसी किस्म की होती है। जब तक अपने बदन को आंच नही लगती, बेटा-बेटा करके जान देती है।' आज कल के लडके यह सब कहा से सीखते है, यह समझ भी नही पाती। बिलू तो ऐसी बात कभी नही कहता। यह सुनने के बाद नीलू से इस पर तर्क करने मे भी घिन लगती है। लेकिन नीलू की

यह बात मेरे जी मे बैठ गयी है। उसने और भी एक बात एक दिन कही थी—उसे भी कभी नही भूलूगी। वह भी मा की स्वार्थपरता के ही बारे मे थी। उस बडे भूकप के बाद बहुत दिनो तक थोडा-थोडा भूकप होता रहता था। एक दिन रात को जैसे ही भूकप का झटका लगा, हरीन की स्त्री नीद के नशे मे गोदी के बच्चे को छोड कर ही कमरे से बाहर भाग गयी। फिर क्या था! इसी पर घरभर के लोग उसे फाड खाने लगे। और मुझे सुनाने के लिए नीलू की पूजी मे भी एक कहानी बढी। होरे बाबा, हा, स्त्रिया स्वर्थपरक होती है, हजार बार स्वार्थपरक होती है और लडको का प्रेम बिलकुल निस्वार्थ होता है, जरा भी मिलावट नही होती। हो गया न ? यदि यही सुनने से तुम्हे खुशी हो, तो वही सही। बचपन से नीलू ने क्या कुछ कम परेशान किया है मुझे। बिलू-नीलू दोनो भाई साथ ही पले, पर कबख्त नीलू ने कहा से जो इतनी शरारत सीखी, मै यही सोचती हू। कितनी बार तो एकबारगी रुला मारा। दोपहर को शायद हो कि मुझे झपकी आ गयी। कहा से तो सुशील लडका, गुलेदाउदी के ढेरों पका फल ले आया और मेरी नाक के सामने उन्हे जोडना शुरू किया। उनके बीये छिटक कर नाक-कान मे घुस जाने लगे। हाउ-माउ करके उठी। मगर डाट-फटकार से सुनने का भी तो नही, फिक्-फिक् हसने लगता। लघु-गुरु का ज्ञान उसे जरा भी नही है। अपनी ही धुन मे पागल। एक दिन किया क्या कि, इतना बडा होने पर—खटमल मार-मार कर उसके लहू से साइन बोर्ड की तरह लिखा—'अहिंसा परमोधर्म।' मैं तो समझती थी, यह लिखता किसे ठेस लगाने को है। बात उनके कानो तक पहुचेगी, यह सोच कर मैंने ऐसा भाव दिखाया, मैने गोया लिखा देखा ही नही। अरे नीलू, एक दिन जब मां-बाप नही रहेगे, तब समझेगा कि मां-बाप क्या होता है। दात रहते क्या दात की मर्यादा समझ मे आती है ? अपने पिता का जी दुखाने के लिए नीलू क्या करेगा कि जहा पर आश्रम का अहाता खत्म होता है, इंच से नाप कर ठीक वही पर गोश्त पका कर खायेगा। और कहेगा—'आश्रम की जमीन पर बकरा खाना मना है, यहा तो नही।' अरे नीलू, महात्माजी बकरी का दूध पीते है, बकरे का मास खाना क्या इसलिए मना है ? आश्रम मे आमिष खाने की मनाही क्यों है, यह तू भी जानता है, मैं भी जानती हू, तो फिर तू क्यों उन्हे ऐसी खोंच लगा कर बात बोलता है ? तू मास खाना पसद करता है, मै तुझे पकाकर मांस नही खिला पाती, यह मेरे लिए कुछ कम दुख की बात है क्या ? मगर आश्रम

का नियम है, कर क्या सकती हू। कितनी बार दीदी के यहा जाकर बैठी-बैठी बिलू-नीलू का मछली खाना देखा है। नीलू को मछली किस कदर पसद है! रेवा मछली की हड्डिया तक चबा कर खा जाता है। बिलू ने लेकिन बहुत बार कहा हैं कि अब मछली खाना छोड दूगा। मैंने और दीदी ने ही उसे छोडने नही दिया। यो तो जो शकल है! ·· दीदी के यहा फिर भी दो-चार दिन मछली पेट मे जाती है। बचपन मे अपने गाव-घर मे हम सोच भी नही सकती थी कि बगैर मछली के कोई एक जून खाना भी कैसे खाता है। अपने बच्चो को इस हालत मे तो हम लोग ही ले गये है। वे बगाल मे रहे भी नही और वहा की भाषा. आचार-व्यवहार कुछ जाना भी नही। ये तैरना नही जानते। वन्या, हिजल, गाव—इन पेडो का नाम नही सुना। एक दिन इन्हे 'ढप कीर्तन' के बारे मे कहा। नीलू तो 'ढप' सुनते ही हसते-हसते लोट-पोट। बोला, 'ऐसा 'बेढब' नाम भी तो कभी नही सुना।' बिलू से एक दिन कहा, 'उस कमरे से 'तिजेल' ला दे।' उसने पूछा, 'तिजेल' क्या मा?' हमारे बगाल में सुकुमार बच्चा भी जिसे जानता है, ये उसे कभी नही जानते। बारह महीने मे तेरह त्योहार—यह क्या इन्हे मालूम है? बिलू मगर खोद-खोद कर यह सब पूछता है। उसे हर कुछ जानना ही चाहिए। मा, 'देल' किस पूजा को कहते है। चड़क के दिन बचपन मे तुम लोग क्या करती थी? 'गाजन गीत' का सुर कैसा होता है? तुम्हारे गाव मे वैरागी थे? दुनिया भर की खबरें उसे चाहिए। कब, याद भी नही, बिलू उस समय छोटा था, उसके सामने बोली थी, हमारे गाव का निखिल चौधरी पिशाच-सिद्ध होने की कोशिश मे मरघट मे जान गवा बैठा था। उस दिन भी देखा, उसने वही कहानी कही। बिलू से अगर पूछती हू अरे क्या करेगा इतने किस्से सुनकर, तो कहता, 'तुम लोगो का बचपन मुखस्थ करूगा।' अरे, मेरा बचपन क्या मुखस्थ करेगा? इतनी मीठी बात कर सकता है वह! सुनते ही मन खुशी मे भर जाता है। नीलू को लेकिन यह सब बला नही। उसे इतनी सब बातें सुनने का समय और धीरज कहा? दिन भर कहा-कहा की खाक छानता फिरेगा और बीच-बीच मे एक-एक बार हुड़मुड़ा कर घर मे घुसेगा। कुरते को उतार फेकेगा और फौरन हुक्म होगा, 'मा, बनियान मे साबुन लगा देना।' माथे मे तेल थोपकर दो लोटा पानी बदन में पडा कि नही पड़ा, आये रसोई मे। 'अभी तक खाना नहीं परोसा?' कब से पका-चुका कर मैं और बिलू उसके लिए खाना अगोरे बैठे है, इसका उसे ख्याल ही नही। और बिलू अपना

कपडा-लत्ता तो फीचता ही है, बहुत बार उसके कपडे भी साबुन लगाकर फीच देता। किससे किसकी तुलना !

'अभी कैसी है ?' उगली से छूकर नैना देवी ने मुझसे पूछा।

ये लोग क्या मुझे दम मारने की फुरसत नही देगी ? दो घडी एकात मे बिलू की सोच कर उसे अपने पास पाने की कोशिश करू, इसकी गुजाइश है ? कितनी मेरी हितू है रे ! तुरत लगातार सात सवाल करेगी—ग्रामोफोन के रिकार्ड की तरह। एक सवाल खत्म होगा कि दूसरे के लिए तैयार होना पडेगा ! उस समय इस कमरे मे आग भी लग जाय, तो भी नैना देवी अपने बधे-बधाये प्रश्न पूछने से बाज नही आयेगी। हमदर्दी देखकर मरी जाती हू ! मैंने जवाब दिया, 'हा जी हा, बहुत ही अच्छी हू। जी मिचलाना बद है, सर का दर्द जाता रहा है, गरमी नही लग रही है, पेट में जलन नही है, मुह का कडवापन कम हो गया है। कबल-बिस्तर झाडने की जरूरत नही। हो गया ? अब मेरी फिक्र नही करनी होगी। अब चुपचाप जाकर अपने बिस्तर पर सो जाओ।' मेरा जवाब सुनकर नैना देवी अवाक हो गयी। शायद सोच रही है, दिमाग तो नही खराब हो गया ? वह एक भी शब्द बोले बिना अपने बिछावन की ओर चली गयी। किसी की फटकार चुपचाप सहने वाली औरत वह नहीं है। मेरी इस बात को लेकर वह दलबदी करके ही रहेगी—सो वह आज हो या कल। यही तो, कई दिन पहले उसकी मा इटरव्यू में आयी थी। उसने किया क्या कि साबुन, पेसिल, कापी, मक्खन, किसमिस, जेल से पाई हुई कितनी और भी यह-वह चीजें साथ लिए-लिए ही जेल-गेट पर जा पहुची कि उन्हे मा के हाथ घर भेज देगी। वहा सी आई. डी तथा जमादार ने घर दबाया। पहले तो उससे झगडी। कहा कि ये चीजे मेरी अपनी है। बाहर क्यो नही भेजने दीजियेगा ? इस पर सी. आई. डी ने कहा, 'मुझसे कानून बघारेगी तो यह सब मैं नहीं ले जाने दूगा। लेकिन अगर मुझसे अनुरोध करें, कहे कि घर के लिए इन चीजो की जरूरत हैं तब मै यह सब आपकी मा को ले जाने दूगा। आखिर नैना देवी इसी पर राजी हो गयी। गेट के जमादार को किसमिस भी खिलाया गया। जरा देखो तो सही, कैसा अपमानित होना पड़ा ! और अपमान क्या उसका अकेले का ! इससे तो हम सबके चेहरे पर कालिख-चूना पुता। जमादारनी ने आकर सारी बाते हमारे वार्ड में कह दी। बहुरियाजी जरा मुहफट किस्म की औरत है। वह जसे ही नैना देवी से यह कहने गयी कि हो गया। आग ही लग गयी। जो हो-हल्ला,

उथल-पुथल कि पूछो मत। बहुरियाजी को अब मारे कि तब मारे! यहा नर्म मिट्टी पा गयी न! सी आई डी के सामने यह तेज कहा गया था? उसके बाद पद्रह दिनो तक उसके और बहुरिया जी के दल मे कुकुर कुडली चला की। वह तो अकेली ही एक सौ है। बातो मे जहर कैसा, फास कैसी! कैसे कहते है न, 'भैस का सीग बाका, जूझने मे एक्का'। अकेले ही उसने लडकर सबको ठडा कर दिया था। पता नही अब मेरे पीछे पडकर क्या करेगी। करेगी तो करेगी। जो जी मे आये करे, मरने से ज्यादा गाली होती है! भगवान ने मुझे जो दुख दिया, उससे ज्यादा वह करेगी क्या मेरा? सब चीज की एक सीमा है, और, लोगो के दुख की क्या सीमा नही? यो ही तो बिलू की सोच कर मेरा लहू पानी हो आता है, तिस पर चमारिन जमादारनी ने एक दिन मुझसे कहा, 'बगालिन माईजी, आपके लडके को सुना सरकार बहादुर ने इच्छा करके सजा नही दी है। आपके ही एक लडके ने गवाही देकर सजा दिलाई है।' कहती क्या है यह? सुन-कर मै तो थर-थर कापने लगी। पूछा, 'किसने कहा तुझसे।' बोली, 'नैना दी ने एक दिन मुझसे कहा था कि ऐसा सुना है। जरा तू बाहर के वार्डर से पूछ कर जान लेना तो दरअसल बात क्या है। बाहर पूछने से मुझे मालूम हुआ कि नैना दी ने जो कहा था, वह सही है। नैना देवी वगैरह ने आपसे कहने को मना किया था माईजी। लेकिन मैने सोचा, आप के घर की बात है। सब लोग जाने, सब लोग बोले-चाले, और आपको पता न हो। ऐसा भी होता है? मेरे भी तो धरम है। अच्छा माईजी, आपके लड़के-लडके मे झगडा है क्या? मेरे भी दो भाइयो ने एक बार एक कटहल के पेड के लिए सर फुड़ौवल किया था। उसके चलते। कितना थाना-पुलिस हुआ। मुट्ठी-मुट्ठी रुपये खर्च हुए। आखिर सत्रह रुपया लिया, तब दरोगा साहब ने मुकदमा उठाया। आपके बहुत जोत-जमीन, माल-मवेशी है क्या माईजी? उस लडके ने गाधीजी मे नाम नहीं लिखया है शायद? भगवान किसके पेट में कैसी सतान देता है—कोई कह नही सकता।' सुन कर मेरी तो छाती सूख गयी। कहा, 'तू गलत बाते फैला रही है। मै तेरे नाम से रिपोर्ट करूंगी।' वह बोली, 'माईजी, मैंने अच्छा समझ कर ही आपसे कहा था। झूठ हो भी सकता है। मैंने तो जो सुना, वही कहा—एक भी शब्द मेरा मनगढ़त नही है। आप रिपोर्ट मत करिये माईजी। मेरा पुरुख (पति) तीन साल से लकवा से लाचार पड़ा है—मेरी कमाई से ही बच्चों को दो मुट्ठी मिलती है।'

मैने कहा, 'खैर, हो गया। जा, जा। खबरदार, फिर ऐसी बात मेरे सामने मत कहना।' वह तो चली गयी, पर तभी से मेरे मन के अदर उथल-पुथल मची हुई है। लोग इतना भूठ बोल सकते है! .

जाघिया पहना बडा भाई बिलू, छोटे-से नीलू को गाल दबा कर प्यार कर रहा है, नीलू-निल्लू-पिल्लू-पिल्लू।

वही नीलू बिलू के खिलाफ गवाही देगा? यह तो मै मर जाने पर भी यकीन नही कर सकती। नीलू गवार है, नीलू नासमझ है, नीलू खामखयाली है—सब ठीक है—पर भैया के लिए जान देता है। नीलू भला कभी ऐसा कर सकता है? उसी दिन से जब भी यह सोचती हू कलेजे का खून बर्फ हो जाता है। यदि यह बात सच हो? जेल-गेट में उस दिन उनसे इटरव्यू था। सुपरिटेडेट खातिर से कभी-कभी हम लोगो को भेट-मुलाकात करने देता है। सोचा, उनसे एक बार पूछ देखू, वह इस विषय मे कुछ जानते है या नही। फिर जी मे आया, छोडो। यह बात भी पूछी जा सकती है? कही वह कहे, 'नीलू के खिलाफ ऐसी बातो पर तुम विश्वास करती हो?' और मान लो, सच ही हो कही। यो ही तो उनका चेहरा देखकर ही समझ गयी कि उनके भीतर कैसी आधी उठी हुई है। मेरे मन मे क्या हो रहा है, यह तो मैं जानती हू। उसी से तो उनके मन की हालत को भाप सकती हू। और फिर मैने गौर किया कि वह मेरी ओर ताक नही पा रहे है। आखिर सात-पांच सोचकर बात पूछी नही जा सकी। मुह की बात मुह मे ही रह गयी। सी. आई. डी. ने कहा, 'तो अब उठिये, समय हो गया।' घूम-फिर कर सिर्फ वही बात मन मे आती है। नीलू क्या कभी ऐसा काम कर सकता है? भैया कह कर वह तो विभोर हो जाता है। बचपन से ही आदत है, भैया जो करेगा, वह भी वह करेगा। नीलू को तो मै बिलू से अलग करके सोच ही नही सकती। नीलू गुसैल है। कब बाहर क्या कर बैठेगा, यही सोच कर तो मै तटस्थ हुई रहती हू। पर सब समय मन मे यह भरोसा रहता है कि भैया है, उसे सम्हाल लेगा। . वह जब जेल गया था, तब भी मन में यही भरोसा था। बचपन में कोई नीलू से कुछ कहता तो वह अपने भैया से नालिश करता, 'ऐ भैया, देखो न।' . .

छुटपन मे नीलू और बिलू हेडमास्टर के क्वार्टर के आम के नीचे खेल रहे थे—हमीद दफ्तरी गेट मे दाखिल हुआ। दाखिल होते ही दूर से कार्निश करने की तरह अदाब किया और कहा, 'अदाब निल्लू बाबू, आपकी शादी बुढ़िया मेम

से करा दूगा। कल मुझसे एक बुढिया मेम कह रही थी कि मै निल्लू बाबू को छोड कर और किसी से शादी नही करूगी।'

'भैया, देखो न, मुझस क्या सब कह रहा है।'

बिलू ने नीलू को समझाया, 'अरे सच थोडे है, तुझे चिढा रहा है। बूढी मेम कही ब्याह करती है ?'

नीलू ने कहा, 'नही, वह कहेगा क्यो ?'

दफ्तरी कहने लगा, 'बुढिया मेम के थोडी-थोडी मूछ है। पहले मुझी से शादी करना चाहती थी। मगर मैने कहा, मै ऐसी से शादी नही करता, जिसके दाढी नही है। तो बोली, तो फिर मेरी शादी निल्लू बाबू से करा दो।'

'भैया, देखो न।'

नीलू ने रोना-धोना शुरू किया। बिलू उसे समझाते-समझाते मेरे पास ले आया। 'बुद्धू लडका कही का, चिढाने से कोई रोता है। फिर तो जितना रोओगे, उतना ही चिढायेगा।' उसके बाद बिलू मुझसे कहता, 'नीलू समझ कर भी नही समझता, मै जितना ही समझाता हू उतना ही रोता है।' और मै जैसे ही बिलू से कहती, 'तुम उसके भैया हो। तुम नही समझाओगे तो और कौन समझायेगा।' वैसे ही वह खुश हो जाता। भैयागिरी का दायित्व तो कम नही ! बिलू नीलू को सदा आखो-आखो रखता। कुछ दिन नीलू को पीले कनेर के बीज से खेलने का शौक हुआ। मैने बिलू से कहा, 'बिलू, बेटे, जरा नीलू पर नजर तो रखना। मुझे बडा खौफ होता रहता है, वह कभी कनेर के बिये-विये न खा ले। उसका बीया जहर होता है। जानते हो न ?' बिलू ने पडित की नाई कहा, 'यह मुझे कहना नही पडेगा। अभी-अभी तो उस दिन नीलू वगैरह ने रेडी के बीज खाने के लिए बटोरे थे। वे कह रहे थे, इन बीजो को हिंदुस्तानी बादाम कहते है। मैंने ही तो उन्हे खाने नही दिया।' सचमुच, बचपन में बिलू नीलू को घडीभर के लिए भी आखों की ओट नही करता था। उस समय कितना छोटा था वह— नीलू के कुरते का बटन लगा देना, जूते का फीता बाध देना—सब उसने अपने हाथों किया। वह नीलू कभी बिलू के खिलाफ जा सकता है ? और यदि गया भी हो तो स्वेच्छा से हरगिज नहीं। हो सकता है, पुलिस के सताने से गया हो। वह दारोगा सब कर सकता है। शायद हो कि नीलू पर कितना जुल्म किया है, शायद हो कि जज के सामने बिलू के विरुद्ध बोलने में उसका कलेजा टूक-टूक हुआ हो। आखों में आंसू

आ गया हो। लगता है बिना बोले कोई उपाय नही था। न, नीलू का गवाही देना—यह कोई विश्वास करने योग्य बात है! किस बात का क्या सुन लिया है चमारिन जमादारिन ने और उसी को बढा-चढा कर लगाया है। नीलू ने अगर यही किया हो तो उस लडके का मुह अब देखूगी मै! जिधर दोनो आखे जायेगी, उधर ही चली जाऊगी। मेरा मन कहता है कि ऐसा हो ही नही सकता। और, मा का मन क्या कभी गलत कहता है?

कपिलदेव के ब्याह में बिलू-नीलू उसके घर गया था। मेरी इच्छा नही थी कि वे वहा जाये। उस समय तो वे छोटे थे। वहा जाकर बीमार-वीमार पडेगे, उनके यहा का आचार-व्यवहार नही मालूम है, क्या करते क्या कर बैठेंगे, लेकिन जिस दिन से दही भात गाव का नाई हलदी रगी सुपारी उनके हाथों दे गया, उसी दिन से उन दोनो ने जिद पकडी कि हम ब्याह मे जायेगे। कपिलदेव के पिता उस समय जीवित थे। वह एक दिन आये और बैलगाडी से लडको को लिवा गये। वहा वे आठ-दस दिन से ज्यादा नही थे। लेकिन जाने उधर की क्या शिक्षा है, उन्ही कई दिनो मे जो-सो गीत सीख आये थे। आगन के एक ओर बैठा नीलू, एक ओर बिलू। दोनो के सामने बिस्कुट का एक-एक पुराना टिन, हाथ मे एक-एक काठी। नीलू ने कहा, 'भैया, अब लेकिन 'बकरी के पाच टेग' नही बजाऊंगा। 'तकई के तकधुम मकई का लावा' भी नही। अब ब्याह के समय का वह गीत होगा।' दोनो बजाने लगे। बिलू गाने लगा, 'कपिलदेव के पाच बियाह, छठवा चुमौना।'[1] बिलू दुलहा की तरफ का। आगन के दूसरे कोने में कन्यापक्ष के नीलू ने जवाब दिया, 'बजाते जाओ धाइ धाइ, कपिलदेव की बहू के छठवा साइं।'[2] मैने दोनों को खूब डांटा। ये वाहियात गीत भले घर के लडके गाते हैं? बिलू तो बिलकुल अप्रतिभ हो गया। नीलू ने कहा, 'दहीभात में तो सहदेव के यहा की लडके-लड़किया यह गीत गाती है। वे क्या भले आदमी नही है?' मैं जानती हूं कि नीलू को जो काम जितना मना करोगे, वह वह काम उतना ही ज्यादा करेगा। बिलू ने तो मेरी बात समझी। अब जब वह चुप हो गया, तो नीलू अकेला कहा तक चलाये? उसे तो सिर्फ नकलनबीशी आती है। बिलू के चुप हो जाने पर नीलू कुछ ज्यादा ही जोर से मुझे सुना-सुनाकर गाने लगा, 'तकई के तकधुम

---

[1]विधवा से शादी, जिसमे कोई अनुष्ठान नही होता।
[2]पति।

मकई का लावा।' उसके बाद धीरे-धीरे ठडा हो गया। उसके बाद सुना, वह अपने भैया से चुप-चुप पूछ रहा है, 'भैया, सच ही यह गीत खराब है?' उसे भैया, खराब कह देगा, तब खराब होगा! भैया का कहना ही वेद वाक्य है और मैने जो इतनी देर समझाया, मना किया, चीख कर मरती रही, वह कुछ भी नही

उनके बडे हो जाने पर बहुत बार देखा है, दोनो भाई कमरे मे बैठकर बाते कर रहे है। मै या तो कुछ कहने या गप करने गयी कि नीलू झट कट्-कट् करके भैया से अगरेजी मे जाने क्या कहने लगता और हो-हो करके हस उठता। मैने समझा, शायद मेरे बारे मे कुछ कहा, ठट्ठा-वट्ठा हो शायद। अब तो अगरेजी मे बडो के लिए कुछ कहने में कोई दोष नही! क्या शिक्षा हुई है! बिलू ने कहा, 'मा, नाराज न हो। नीलू ने नाराजगी का कुछ नही कहा है। नीलू, क्यो नाहक ही मा को चिढाते हो?'

'मै तुम लोगो से और चाहती क्या हू। अरे, दो मीठी बातो से भी उपकार नही कर सकता? तू दिन भर मे मुझसे गप ही कितनी करता है नीलू? फिर भी क्या ऐसी लाठी मार बात किये बिना नही चलता? और हसता है, शर्म नहीं आती? बचपन से बस एक ही जैसा रह गया। अगार शत धौतेन मलिनश्च न मुचति।' नीलू फिर हंस उठा। गलत बोल गयी शायद।

'जमादारनी! जमादारनी! हे मनचनिया। बगालिन माईजी सो रही है?' कहा जमादारनी और कहा मनचनिया। जमादारनी बरामदे मे पडी सो रही है और मनचनिया मेरे पास बैठी ऊघ रही है। नर्मदा बेन को जवाब कौन दे? और जवाब न ही दे, सो अच्छा। नही तो मनचनिया फिर कुछ देर मुझे तंग करेगी। नर्मदा बेन का घर है अहमदाबाद। बहुत बड़े आदमी की बेटी है, विलायत हो आयी है। हाव-भाव और पोशाक के सिवा बाकी सब मेमसाहब जैसा। महात्माजी की प्रिय शिष्याओं में से एक। रग धप्धप् गोरा, पहनावे में खद्दर की साडी। जमशेदपुर के मजदूरो की सेवा के लिए बिहार आयी थी। वहा गिरफ्तार हुई। हमारे वार्ड के सामने ही एक छोटा-सा कमरा है। पहले यह कमरा सौरी (जच्चा घर) या किसी को छूत की बीमारी होती तो उसे अलग रखने के काम में लाया जाता था। नर्मदा बेन अगरेजी मे ही बोलती हैं, लिहाजा सुपरिंटेंडेंट से उनका खूब परिचय है। उससे कहकर वह उसी कमरे में चली गयी है। अकेली ही रहती

है। बडे आदमी की बेटी, यहा तुम सबके साथ रहने मे उन्हें कुछ असुविधा हो रही थी। कमरे को खूब सवारा है। कितना परदा, कितना टेबिल क्लाथ। चारो तरफ फूलो का बगीचा लगाया है। रात दिन उस बगीचे मे कुछ न कुछ करती रहती है। रोज हमे कितने फूल दे जाती है। अभी भी मेरे सिरहाने काच के एक लोटे मे उन्ही के दिये कितने फूल है। देखने मे ये फूल कागज के फूल जैसे। जरा भी खुशबू नही। बिलू रहा होता। तो जरूर इनके नाम बता देता। आश्रम मे बिलू ने फूलो के कितने पौधे जो लगाये थे, ठिकाना है! जो भी मौसमी फूल होगा, उसके लिए मुझे उसका नाम सुनाना जरूरी है। मुझे खाक उतने अगरेजी नाम याद रहे? नर्मदा बेन को बिलू जैसा ही फूलो का शौक है, इसलिए वह मुझे बडी भली लगती है। मगर वह मुझे इतना फूल देती है, फूल का मर्म मै खाक समझती हू? यह तो धूल मे मोती बिखेरना हुआ। बिलू को रोज कुछ फूल सेल मे भेज सकती, तो तुम्हारी अगरेजी भी खूबी समझती। नर्मदा बेन साहब से कहती, तो साहब सेल मे फूल भेजने की इजाजत जरूर देता। यही सोचकर मैने एक दिन नर्मदा बेन से बिलू के फूल के शौक के बारे मे कहा था। वह बात उनके दिमाग मे क्यो घुसने लगी? विलायत जाकर क्या धान-चावल देकर लिखना-पढना सीखा था? विद्या और चीज है, बुद्धि और चीज। उसी दिन से वह रोज मेरे पास इतना फूल दे जाती है। और साहब से अनुरोध करना हुआ, तो किया अपने यूरोपियन डायट के लिए। साहब रोज नर्मदा बेन के लिए अपने घर से चोकर भरे आटे की एक पाव रोटी भेज देता है। अब अपने मन की बात साफ-साफ उसे कहने मे हिचक होती है। वह औरत लेकिन खूब लेकचर झाडती है। कथा-वाचक की तरह जब-तब आकर दिन में हमे सत्य और अहिसा समझाया करती है, हिंदी तो मेरे ही जैसे बोलती है। टूटी-फूटी हिंदी मे क्या-क्या कहती है, आधी बात तो खाक समझ में ही नही आती। कान मे रह-रह कर सत्य, अहिसा और बापूजी आता है। यदि यही सब भाषण करना हो, तो कथावाचक की तरह मीठे ढग से बोलना भी सीखना चाहिए। गाधीजी के आश्रम में यह सब भाषण सिखाया जाता है क्या? नहीं—बिलू तो एकबार साबरमती आश्रम गया था—उसने तो कभी यह सब नही बताया। अच्छा, इतने लागों के होते नर्मदा बेन मुझे ही ये सब बातें ज्यादा क्यो सुनाती हैं? क्या वह यह समझती है कि मैं सत्य नही बोलती या दूसरो के गहना-गुरिया देखकर हिसा से मरी जाती हूं? अरे, वह

मुझे यह सब क्या सुनायेगी। आज बीस वर्षो से यह सब सुनते-सुनते कानो मे कीडे पड गये है। हू, कितने सुने—और नर्मदा बेन समझती है कि मुझे नयी बात सिखा रही है वही, जब नया-नया आश्रम खुला तो उन्होने मुझे ये सब बाते समझाने की कितनी चेष्टा की थी! मेरा मन उस समय नीलू-बिलू और गिरस्ती पर पडा था। सब बाते जानने की मुझे इच्छा भी नही थी, समझ भी नही सकती थी। इस कान से सुनती, उस कान से निकल जाती। लाभ मे से मुझे इतना ही था कि लगता, इन बातो से मै जरा उनके करीब आ पा रही हू। वह सदा के जरा गभीर आदमी है। उनसे कभी जी खोलकर बात कर सकी हू क्या? जी खोलकर बात क्या करू, डर के मारे ही बुरा हाल। हम लोगो का तो ठीक औरो जैसा नही है। मन मे जो आये, पति से न बोलना, हसी आये तो दबा लेना, हाय, यह क्या कर बैठी, यह क्या कर बैठी—सब समय यह भाव—इसका दुख भुक्तभोगी ही जानती है।· · उन्होने ही मुझे सिखाना शुरू किया—चरखे की चर्चा आने पर, महात्माजी की बात आने पर, देश की बात आने पर इन लोगो के सामने क्या कहना चाहिए। इधर के लोग तो यह नही समझ सकेगे—'चरखा आमार मातार पूत, चरखा आमार नाती'[1] इन्हें तो दूसरी ही बात कहनी होगी। इसीलिए उन्होने मुझे ऐसी कितनी ही हिंदी की पक्तियां सिखाई थी। वे तो बहुत जगह लेकचर देते है, उन्हे ऐसी पक्तियो की जरूरत पडती है। कबकी बात है, भूल भी गयी? कैसे तो एक थी—पति को दूसरी शादी करने की ख्वाहिश हो गयी है। स्त्री यह समझ गयी है। समझकर बोली, 'जब इच्छा तुम्हे हुई है, तो शादी करो। मेरे लिए फिक्र करने की जरूरत नही—मुझे तो चरखा सहारा स्वरूप है ही।' ऐसी कितनी ही बातें उन्होने सिखाई थी। सोचा था कि मै भी उनकी तरह घूम-घूम कर लेकचर दे पाऊगी। बाद मे जब उन्होंने समझा कि मुझसे यह सब होने-हवाने का नही, यह केवल गोबर मे घी डालना है, तब उन्होंने हथियार डाल दिया। और मैं भी बच गयी। तुम सब छोड-छोड कर इधर आ गये, अच्छा किया मैंने तो मना नही किया। मुझे ताजिंदगी तकलीफ झेलनी होगी, मैं उसके लिए भी तैयार हूं। जेल आने को कहा, जेल भी आ गयी। मगर एक मेले जैसी भीड के सामने खडे होकर 'प्यारे भाइयो' यह मुझसे नही होने का। तुम्हारे आश्रम का ससार चलाना, बच्चो को पालना, यह भी तो एक काम है।

रामगढ़ कांग्रेस से पहले, तुम्हारी बात पर बमनगामा जाकर कैसी मिट्टी

[1]चरखा मेरा पति-पूत, चरखा मेरा पोता है।

पलीद हुई, कैसी मिट्टी पलीद ! पटने से चिट्ठी आयी, कुछ स्वयसेविकाए भेजो। कडा तकाजा। अभी ही उन्हे प्रशिक्षण देना है, नही तो काग्रेस अधिवेशन तक वे तैयार नही हो सकेगी। महाराष्ट्र से एक भद्र महिला प्रशिक्षण देने के लिए रामगढ मे आकर बैठी है। राज गया, मान गया ! जिले की इज्जत अब शायद नही बचेगी। जेल जाने लायक महिला तो जिले मे सच पूछिये तो पाच—मै, हरदा की दूबेइन, बहुरियाजी, बुढिया धनकट्टा की सरला देवी और चोपडा की खादी जुन्निसा। उनकी भी आख मे छाला पड जाने से दो-तीन साल से बाहर नही निकल पाती ! सरस्वती तो अब आयी है। तो, मुझे हुक्म मिला कि कोढा थाना के सब काग्रेस कार्यकर्ताओ के घर-घर जाओ। उनके घरो की स्त्रियो से 'स्वय-सेविका-प्रतिज्ञापत्र' पर जोर-जबरदस्ती हस्ताक्षर कराकर लाना होगा। मर्दों के जाने से नही होगा, तुम्हे ही जाना पडेगा। जो जायेगी, वे कैसे मजे मे सेत ही काग्रेस देख लेगी, उम्र की कोई बदिश नही, ज्यादा उम्र की महिला होगी, तो उन्हे हलका काम दिया जायेगा। जैसे, दूसरी स्वयसेविकाओ के बच्चों की देख-भाल, भडार की ताली रखना, या ऐसे ही और काम। जाते समय उन्होने मुझे ऐसे ही कितने उपदेश दिये। वालटियर भिदरी, मुझे बैलगाडी से बमनगामा ले गया। दोपहर मे टोले की सब स्त्रिया झाजी के प्रागण मे जुटी। मैं उनसे काग्रेस स्वयंसेविका के बारे मे बात करने लगी। सब मुझसे तरह-तरह के सवाल पूछने लगी—जूता पहने बिना काम चलेगा या नही, घोडे पर चढना पडेगा या नही, ऐसे कितने ही अवातर प्रश्न। इसके बाद कुछ जने राजी हुई बशर्ते कि उनके घर के पुरुष एतराज न करे। मैं घर के मालिको के पास पहुची। सबसे पहले से ही मोटा-मोटी जान-पहचान थी—बहुत बार वे आश्रम में रह आये थे। वे भी शुरूमे आगा-पीछा करने लगे, और फिर जैसे ही एक राजी हुआ कि सभी राजी हो गये। इसके बाद मैं प्रतिज्ञापत्र लेकर फिर अदर गयी—उन पर दस्तखत कराने के लिये। स्याही आयी, कलम आयी—कुछ की सही बनी, कुछ का अगूठे का निशाना। झाजी की बेटी शकुतला ने फार्म पर सही करने के पहले उसे जोर-जोर से पढा—'मैं देश के लिए हर तरह की कुर्बानी को तैयार हूं।' 'ऐं, यह कुर्बानी क्या ? यह तो ठीक-ठीक नही समझी।' 'ऐ बगालिन माईजी, देश के लिए हर तरह की कुर्बानी को तैयार हूं, यह लिखा लेना क्या वाजिब हुआ ?' पहले सभी नर्म थी। बेलगरामिया की नानी ने पहले जरा बिगड़ कर कहा, 'हम यह महात्मा

जी-फहात्मा जी नही जानती, यह कैसा व्यवहार है तुम्हारा ? तुम लोग मुसलमान होना चाहती हो, होओ, हमारी जाति से यह खीचातानी क्यो ? इसी करम के लिए तुम आश्रम से इतनी दूर आयी हो ? छि., शर्म भी नही आती। गाय साक्षात भगवती है। तुम हमारी जात गवाने का प्रमाण-पत्र ले जाने के लिए आयी हो ?' कि सब मुझसे उलझी। मुझसे भी इस बात का कोई जवाब नही देते बना। सच तो इसमे कुर्बानी की बात क्यो लिखी रहेगी ? आने से पहले उन्होने इतना कुछ समझाया, यह बात नही समझायी ? हो सकता है, हिंदुओ के प्रतिज्ञापत्र के बदले मुसलमानो का प्रतिज्ञापत्र आ गया। डर से तो मेरे बदन से पसीना छूटने लगा। मैने उन्हे समझाया, मै तो हिदी नही जानती, हो सकता है, कागज बदल गया हो। मगर उनका गुस्सा क्यो उतरे ? मैं बाहर झाजी के पास गयी। कहा, 'किसी और दिन आना पडेगा, दूसरा प्रतिज्ञापत्र लेकर।' झाजी प्रतिज्ञापत्र को पढ़कर हसते-हसते बेहाल। कहा, 'ठीक तो लिखा है। कुर्बानी के माने है त्याग।' देखो तो सही। कहा कुर्बानी और कहा त्याग ! मै क्या खाक इतना जानती हू ! मै खैर न जानती होऊ, आगन मे इतनी स्त्रियो मे से कोई इस शब्द का अर्थ नही जानती ? फिर ऐसा शब्द देने की क्या आवश्यकता ? जिनके लिए लिखा, वही नही समझते—फिर भी लिखा ही चाहिए। नमो-नमो करके तो उस दिन का काम खतम हुआ। आश्रम लौट कर मैने कहा, 'यह रहा तुम लोगो का कागज। इस काम के चरणो कोटि-कोटि दडवत। अब मै जो काग्रेस के काम से कही बाहर गयी !' नीलू इसके लिए मेरी कितनी हसी उडाता है।

सखावतीजी का बच्चा चीख रहा है, 'बगाजी, बगाजी'। मुझे बगाजी कहता है। मुझसे बड़ा हिल गया है। रात-दिन मेरे पास घुर-घुर करता रहेगा—यानी गोदी मे लेकर बैठी रहो। वह जब बहुत शैतानी करता है, बात नही सुनता, तो उसकी मा उसे मेरे पास दे जाती है। मेरी गोदी में आकर शात हो जाता है। बच्चे को ले आती, तो होता। मनचनिया तो कब की सो गयी। अभी तो वह जगने की नही। अभी गलकट्टी की ड्यूटी हैं। उसे भी तो हाथ मे पखा लिये पास बैठी ऊघते देखा। दिन भर दाल बीनने के कमाड में काम किया है। अब भला सारी रात जगी रह सकती है ? जेल आयी है, तो नीद-वीद तो घर नही रख आयी है। कसूर भी क्या किया था ? एक हतभागे पति के अत्याचार से ऊबकर वह खुदकशी करने गयी थी। उस्तरे से पता नही अपना गला अपने से ही कैसे काटा था।

सोच कर भी रोगटे खडे हो जाते है। अभी भी गले की ओर देखा नही जाता। जख्म नही है, पर गले की नली कट कर इत्ती बडी हा हो गयी है। नली के अदर दिखाई पडता है। कटे पर आठो पहर एक गमछा बाधे रहती है। कहती है, नही तो बोलने के समय फस्-फस् करके उसमे से हवा निकल जाती है और खाते समय उसमे से खाने की चीज बाहर निकल आती है। यो ही पानी पीते समय गमछा थोडा गीला हो जाता है। जरा नसीबजली का भाग्य तो देखो। मर जाती तो आप भी जी जाती, पति का भी हाड जुडाता। मगर मरी भी नही, कुछ भी नही। और आत्महत्या करने के जुर्म मे एक साल की सजा हो गयी। इन लोगो का भी क्या कानून ! अपने प्राण पर भी अधिकार नही। जो मरना नही चाहता, उसे फासी देते है, और जो मरने जाता है, उसे पकड कर जेल ले आते है।

बच्चा जान देकर रो रहा है। वह गला फट कर मरा—उसकी मा की कैसी अक्ल है, कहो तो ! अहा, वह आज दिन भर मेरे पास आ नही पाया है ! सखावती जी बच्चे से कह रही है, 'लाड़ली-ई बगाजी के पास जैवन की ?' यानी बगाजी के पास जाओगे लाडली। 'बगाजी की आज तबीयत खराब है। कल सबेरे जाना। बीमार रहने से उसके पास जाना चाहिए ?' बच्चा जरा देर चुप रह कर शायद समझने की कोशिश कर रहा है। उसके बाद फिर वही रोना। 'बगाजी ।' सखावतीजी बच्चे पर बिगड गयी। 'वह देखो, गलकट्टी है, पकड़ लेगी।' बच्चा चुप हो गया। शायद डर से। फिर वही चीख 'बगाजी-ई ।' 'जिद कितनी है बच्चे को ! इत्ते छोटे बच्चे की इतनी जिद !' ··· अरे, ठायं-ठाय करके बच्चे को पीट रही है। मां के क्या जरा भी दया-माया नही ! गलकट्टी, ऐ गलकट्टी, जा, जल्दी से लाडली को यहा ले आ तो। गलकट्टी ने टूटी आवाज में जवाब दिया, 'वह लडका मेरी गोदी मे आयेगा ?' कितनी आलसी है गलकट्टी ! नीद आ रही है, उठने को जी नही चाहता, एक बहाना बना दिया। गलकट्टी को मैं पुकार रही हू, यह सुन कर बहुरियाजी, कमला, सभी आकर पूछने लगी, 'क्या बात है, पानी पियेगी ?' हो गया ! खामखा मैं क्यों गलकट्टी को पुकारने गयी ! मै क्या जानती थी कि सभी यहां चुपचाप बैठी है। सही है, गलकट्टी को देखकर तो बच्चा डर से दुबक जाता है। लूसी जमादरनी से कपड़ा फीचने के साबुन के बदले हमारे वार्ड की सब बीच-बीच मे बीड़ी लेती हैं। और वही बीडी गलकट्टी को देकर सब लोग मजा देखती हैं कि उस कटी हुई जगह से

कैसे धुआ निकलता है। गलकट्टी को चार बीडी देने से वह गले का गमछा हटा कर धुआ निकाल कर दिखाती है। लाडली लेकिन यह सब देखकर डर से नीला पड जाता है और मुझे जकड लेता है। अजी, वह तो बच्चा है, बहुतेरे उम्र वाले लोग भी वह दृश्य देखकर मूर्च्छित हो गिर जाते है।

मेरा कोई जवाब नही पाकर बहुरियाजी ने ऊघती हुई गलकट्टी को ठोकर देकर पूछा, 'बगाली माईजी क्या कह रही थी रे ?''

'माईजी लाडली को लाने के लिए कह रही थी।'

'यह कहना चाहिए न। मै ही ले आती हू उसे। गलकट्टी, तो तू जाकर उस दरवाजे के पास जरा बैठ। तुझे देखकर तो वह बच्चा यहा भी रोयेगा। वह सो जायेगा, तो तू फिर यहा आकर बैठ जाना।'

गलकट्टी की जान मे जान आयी। बहुरियाजी ने बच्चे को लाकर मुझे दिया। लाडली ने एकबारगी मेरा गला जकड लिया। अरे, सोयेगा ? सो जा, मै पखा किये देती हू। इतनी रात को अच्छे बच्चे जगते है भला ? लाडली मेरी बात सुनता कितना हे। कहा गया उसका रोना, कहा गयी उसकी जिद, वह मेरी छाती से लगकर सो गया। लेटे ही लेटे मैने उसके हाथ मे नर्मदा बेन का दिया हुआ एक फूल खोस दिया। कहा, कल सबेरे सब फूल तुझे दूगी। उसने हाथ के फूल को फेक दिया। उसे अब फूल की भी जरूरत नही, किसी चीज की जरूरत नही। वह जो चाहता था, उसे मिल गया। जरा पखा न कर दू तो मच्छर खा जायेगे। मुझे पखा खोजते देख बहुरियाजी नजदीक आकर बैठी—पखा झलने के लिए। अभी तक हिम्मत नही पड रही थी, कही मैं नाराज हो जाऊ। अच्छा। यह बच्चा मुझे प्यार करता है, इससे क्या सखावती जी मुझसे खीजती हैं। लगता तो नही है। तो फिर जितेन की मा-दीदी से मै क्यो खीजती हू ? तो फिर मानना होगा कि सखावती जी का मन मुझसे कही अच्छा है। यो ही क्या नर्मदा बेन मुझे सुना-सुना कर अहिंसा की बुकनी झाडती है। बहुरियाजी भी लाडली को बहुत मानती है। उसकी छोटी बच्ची लज्जा से लाडली का बडा मेलजोल था न। लज्जा की उम्र पाचेक साल की थी। पर वह मा को छोडकर रह नही सकती। गिरफ्तारी के बाद बहुरियाजी ने चाहा था कि वह अपनी चाची के पास रहे। वह बच्चा मा का आचल छोड़ने को हरगिज तैयार नहीं। महा मुश्किल। इधर तीन साल से बडी बच्ची को जेल में साथ लाने का नियम नही। दरोगा भी कहने लगा, रख आइये। ऐसे मे

बहुरियाजी लाचार होकर दरोगा से लड पडी। बोली, 'किसने कहा कि इसकी उम्र तीन साल से ज्यादा है। माप देखो। डेढ हाथ ऊची लडकी की उम्र पाच साल हो सकती है कभी ? इसे साथ नही ले जाने दीजियेगा तो मै देखती हू, आप मुझे कैसे पकडकर ले जाते है।' फौरन स्वराजी वालटियरो से आपको गिरफ्तार करा दूगी। दरोगा साहब ने देखा, हगामे की जरूरत भी क्या है। उन्होने उसके साथ लज्जा को भी लाकर जेल मे भर दिया। रात-दिन लाडली और लज्जा साथ-साथ खेलते थे। खेल भी क्या, लाडकी को गोद पीठ पर लादे लज्जा घूमा करती थी। यहा ज्यादा सगी-साथी तो नही। मिलना-जुलना हो तो दूसरे वार्ड के नीच लोगो के बुरे बच्चो से मिलना-जुलना होगा। उन सबके रोग भी है बुरे-बुरे। चौबीसों घटे आपस मे गाली-गलौज करते रहते है। उनसे भला हम अपने बाल-बच्चो को मिलने-जुलने दे सकती है! इसीलिए हम लोग उन्हे आठो पहर आखो-आखो रखती थी। अहा रे, वह बच्ची महज कई दिनो की खूनी पेचिश से गुजर गयी। मा का ही तो जी—बहुरियाजी के शोक और रुलाई की न पूछो। छाती पीटती केवल और कहती, 'मैं अगर उसे साथ नही लाती तो मेरी लज्जा की यह दशा होती ?' लज्जा के मरने के बाद से लाडली भी जैसे दिन-दिन सूखता जा रहा है। जेल से उसे आधा सेर दूध तो मिलता है। मगर जेल का दूध! कट्रैक्टर मक्खन निकाला हुआ भैंस का दूध पानी मिलाकर ले आता है। उसके बाद गेट, गुदाम, वार्ड—जहा-जहा से होकर दूध आता है, सब जगह वार्डर, मेट, पहरा और कैदी, सभी एक-एक ग्लास लेकर कच्चा ही दूध ढक-ढक पी जाते है। यहा बिलकुल बधा-बंधाया नियम है। इसमे कोई छिपे-चोरी भी नही। एक ही अनिवार्यता है केवल, जो भी एक ग्लास दूध निकालेगे, उन्हे परिश्रम करके दूध के ड्रम मे ठीक एक ग्लास पानी मिला देना पडेगा। यहां आते-आते वह दूध ऐसी चीज हो जाता है कि उसे पीकर बच्चे जी नही सकते। छोटे बच्चो को न तो जेल से कपड़-लत्ता मिलता है, न खाने की चीज। शायद यह सोचते है, जिसने दूध छोडकर दूसरी चीज खाना सीख लिया है, उसे मा के साथ आने की जरूरत क्या है? साफ जवाब!

अहा, बेचारे का पेट एकबारगी धंस गया। क्यों, मा ने रात खिलाया नही क्या ? मेरा खाना तो सिरहाने रख दिया है। दे दू इसे कुछ। न, छोडो। कही बीमार पड जाय, तो झमेला झेलने मे उसकी मा परेशान हो जायेगी। बदन कितना नर्म है! बिलू जब छोटा था, ऐसे ही सटकर सोया रहता था। ससुरजी

की गोदी मे बैठा था, वह तसवीर जब ली गयी, वह इतना ही बडा था। वह हरगिज चुप नही बैठने का। मैने दूर से मिसरी का टुकडा दिखाया। उसे देखकर जब वह मन मे आनद-मगन हो गया, निताई देवरजी ने उसी मौके से उसकी तसवीर खीच ली। यह आज की बात है ! बीमारी के बाद कितना दुबला हो गया था ! चौबीसो घटे खाऊ-खाऊ करता था मन—मगर खुलकर रोने की आदत तो उसे कभी नही थी। मै यदि उसे चौकी पर बिठाकर भडार या रसोई मे गयी और वहा किसी काम से अटक गयी, तो जरा देर बाद लौटकर देखती क्या हू कि आसू उसकी दोनो आखो से बहकर छाती को भिगो रहे है। नीचे का होठ जरा बाहर निकल आया है और काप-काप उठता है। मुझे आने मे देरी हुई, इसलिए रो रहा है। 'हाय, मै मर जाऊ—मेरा बिलू कितना अच्छा लडका है' यह कहकर उसके सर को छाती मे खीच लिया कि बच्चा मेरा ठडा हो गया—कभी-कभी फफकने की आवाज केवल। अभी भी उस फफकने का गर्म निश्वास मानो रह-रह कर गले के पास लग रहा है ! लाडली, तू मेरा वही छुटपन वाला बिलू है क्या ? तेरे कोमल-कोमल बदन को एक बार वैसे ही मल दू क्या ? नही, ये लोग देख रहे है। क्या-सोचेगे मन मे। अभी अगर एक बार बिलू को पा जाती, उसे अपनी छाती से लगा लेती। जितनी ही देर के लिए चाहे, कलेजा तो जरा जुडाता। दोनो मिलकर रोने से मन मे थोडी शाति तो पाती। अतिम घडी मे उसके पास रहू, भगवान ने यह उपाय भी तो नही रहने दिया। चारो ओर लोहे का दरवाजा और ताला। सुना है, लडाई मे इतना लोहा लगता है। बिलू बता रहा था, कहा तो लडाई के समय गिरजे के घटे को पिघलाकर तोप बनाई गयी। मगर जेल के इतने-इतने लोहे पर क्या उनकी नजर नही पडती ? इतने जले दिलो की आहे तो यमराज के सिहासन को भी हिला दे सकती है !

'बहुरियाजी अच्छा सच-सच बताओ तो, भगवान ने क्या मुझ पर अन्याय नही किया है ?'

बहुरियाजी मेरा मुह ताकने लगी। ऐसे सवाल के लिए वह तैयार नहीं थी। उसने मेरी बात का जवाब नही दिया। नैना देवी की ओर ताक कर जाने उसने क्या इशारा किया। उसके बाद मेरे माथे के बालो मे धीरे-धीरे उंगली चलाने लगी। जोर-जोर से पखा झलने लगी। अरे तुमसे बात अचानक पूछ जरूर बैठी थी, पर जवाब भी नही चाहा, आशा भी नही की थी !

लाडली कब सो गया। इतना छोटा लडका, मगर नाक बजना ठीक उम्र वालो जैसा। अहारे, एक ओर करवट लिये सोया है और चादी की चकतिया पेट के चमडे मे गड-गडकर बैठ गयी है। कमरधनी मे ढेरो चकतिया झूल रही है। सखावती जी सोचती है, इनसे बडी बहार होती है। कितनी बार कहा कि यह जेलखाना है, यहा हजार किस्म के स्वभाव के लोग रहते है, चादी के लोभ मे कभी बच्चे का कुछ कर बैठेगे तो रोकर किनारा नही पाओगी। वह क्या सखावती जी सुने ! उसे उस कमरधनी मे कौन-सी तुक-ताक है, कौन जाने।

बिलू जब छोटा था, उसके कपाल पर के बालो की एक चोटी बना दिया करती थी। दुबला था, खाते ही पेट गणेश जी की तरह ऊचा हो जाता था। उसे फुसलाने के लिए खाने के बाद कहती थी, 'बस, अब हो गया। अब उठना पडेगा। बा प रे !' कि वह अपना पेट दिखाकर कहता, 'बाताव, बताबी कर दो।' जाने कब उसके पेट पर हाथ फेरते हुए कहा था 'वातावी भस्मराशि ! वातावी भस्मराशि ! सब आसान हो जायेगा, बिलू बाबू की अब तबीयत नही खराब होगी।' वही बात उसने याद कर रक्खी थी। इसीलिए खाने के बाद रोज उसे पेट पर हाथ फेरकर वातावी कहना होता। फिर वह पीढे पर से उठते हुए घुटने पर भार देकर कहता, 'बाप रे।' बिलकुल बूढे आदमी जैसा, गोया उठने मे उसे सचमुच ही बहुत कष्ठ हो रहा हो। · ·

कितने दिनो की कितनी ही छोटी घटनाएं एक के बाद एक, मन मे आ रही है। बिलू, मैने तुझे इतने कष्ट से पाला था, इस तरह दगा देकर चला जायेगा ? मगर मेरे कष्ट की सोचकर अत समय मे तू दुख मत करना। यो ही तो मेरे कष्ट का बोझा मै किसी भी तरह से हलका नही कर सकी। अभी तेरे मन मे क्या गुजर रही है, मैं क्या समझती नही हू। इस समय अगर मेरी याद से तेरे कलेजे का भार बढे, फिर तो मेरे दुख का अत नही रहेगा। अभी तू यह सोच ले कि तेरी मा तुझे बिलकुल प्यार नही करती थी।

बहुरियाजी से नैना देवी गप कर रही है—आवाज जरा गर्म-सी—'अरे बाबा, इसमें भगवान को क्यो खीचा जाय ? सजा सरकार ने दी और वह दोष भगवान को दे रही है। किस्सा है,—एक ब्राह्मण के एक घोडा था। ब्राह्मण का पडोसी था एक धोबी। ब्राह्मण देवता। जैसे ही पूजा करने बैठते कि धोबी का गधा जोरों से रेक उठता। दुखी होकर ब्राह्मण ने भगवान से प्रार्थना की—'भगवान, यह

गँधा हरगिज तुम्हारी पूजा नही करने देगा। तुम्हारे भजन-पूजन मे यह रोडा अटकाता है। तुम उसे मार डालो। कई दिनो के बाद ब्राह्मण का घोडा बीमार पडा और मर गया। इस पर ब्राह्मण ने भगवान से कहा, 'भगवान, इने दिनो तक तुमने भगवानगिरि की और अभी तक घोडे-गधे की पहचान नही आई—यह वही हुआ। इससे भगवान का क्या वास्ता ?'

नाक बगैर दबाये भी सास बद की जा सकती है, लेकिन कान मे उगली डाले बिना सुनना बद क्यो नही किया जा सकता ? इस समय कान मे उगली डालना ठीक नही लगता। सभी देख रही है। उस बिसमुखी को मै पहचानती नही हू ! वह बहुरियाजी से गप कर रही है या और भी कितना ! जरा देर पहले उससे बेरुखी बाते की थी न, वही जहर अब उगला जा रहा है। मै उसी समय जानती थी, यह बाज आने वाली औरत है ? एक रात भी सब्र करते न बना। आज की रात के लिए भी मुझे माफ नही कर सकी। अरी, तुम भी तो लडके की मा हो ! इस किस्से के न सिर है न पैर। जाने कहा का सुना है। सोचा बडी पडिताई बघारी। अरे, नैना देवी इसी बीच चुप हो गयी ! शायद बहुरियाजी का समर्थन नही पाया।

बिलू-नीलू के सिर्फ बचपन की ही बाते क्यो याद आती है ? शायद वे दोनों मेरे लिए उत्ते छोटे-से ही रह गये है।

दोनो बिस्तर पर सो रहे थे। मै काम-धधे से निबट कर अदर आयी। कहा, 'क्यो बचकन आउर छुटकन, घूमते हो ?' बिलू बचकन और नीलू छुटकन। कि दोनो हस उठे। और नीलू-बोल उठा, 'कितनी बार मा से कहा कि हिंदी मे घूमते हो का मतलब 'घुमोच्छे' (सो रहे हो) नही होता। उसका माने 'घुरछे' होता है, मगर मा को याद नही रहता।' बिलू ने कहा, 'बेवकूफ कही का, यह तो मा जान-सुनकर कह रही है—हम लोगो को हसाने के लिए।' ··· इतने छोटे-छोटे लडके, दोनो कैसे गभीर हो पडित की नाईं आलोचना करते। उस समय अगर वे लोग गाधीजी के पथ पर नही आते ! आने न आने का भार क्या उन पर है ? वह तो कर्ता की इच्छा पर कर्म। इस समय अगर बिलू के पिता को जरा अपने पास पाती, तो कसकर सुना देती कि देखो, बाप होकर लडको को किस रास्ते पर ले आये हो ? मेरी सारी जिंदगी एक ही तरह से गयी। एक दिन को भी शाति नही मिली। लडको को एक दिन भी हसी-खुशी और आनद-मौज

में नही रहने दिया। जीवन भर सुबह से साझ तक जो हड्डी तोड मेहनत करती आयी, क्या इसीलिए ? बच्चे जब छोटे थे, तो जी मे आया किया, इन्हे खीच कर बड़ा करदू । बडे होने पर ये अपना रास्ता चुन लेगे । मर्दो को फिक्र क्या ? घर-गिरस्ती करेगे । यह सोचने से भी शाति ! पर हुआ क्या ? बडे को तो पढाया ही नही ! और जिसने पढा, उसका भी मन इधर ही । अब की जेल से निकलने दो, नीलू को अब मै इस रास्ते रहने दूगी ? छोटे भाई से लात-झाड भी खाना हो तो कबूल, फिर भी नीलू को वही भेज दूगी । किसी न किसी रोजगार का इतजाम वह कर ही देगा । मुझे ब्याह करके ले आये थे, मै तुम्हारे आश्रम के होटल की दासी-बादी से भी गयी-बीती होकर चलाती जाऊगी चिरकाल—मगर अब अपने लडके को मै इसमे रक्खू भला ! मुह सी कर बहुत सहा किया, अब नही । सहने की कीमत मैने पाई-पाई चुका दी है । तुम्हे सनक है, तुम्हे शौक है गाधीजी की सेवा करने की—मेरी, लडको की कभी सोची है तुमने ? तुम्हारी रोज-रोज अलग-अलग धुन । कुछ दिनो तक चना खाकर ही रहे । कुछ दिन रोज बथुआ का साग। कुछ दिन सिर्फ टमाटर का शरबत । कच्चा परवल खाकर उस बार किस कदर बीमार पड़े । एक बार हुक्म हुआ, टमाटर समूचा ही दिया करो, गाधीजी ने कहा है, दात से काट-काट कर खाना ही अच्छा होता है । यो खामखा समय की बरबादी। गाधीजी के आश्रम में शायद यही तरीका जारी किया गया है । अपने आश्रम मे भी यही चला । हाय राम, कोई बात नही, कोई चीत नही, एक दिन हुक्म हुआ, यह नियम अब नही चलेगा । सेवाग्राम आश्रम में टमाटर खाने का नियम बदल गया है । महादेव देसाई ने अखबार मे लिखा है, समूचे टमाटर को दांत से काट-काट कर खाना ठीक नही है। दात से काटते ही कपड़े-लत्ते में रस टपक जाता है। अब क्या था ! बस, अपने आश्रम मे भी यही करना होगा। अजीब है न ? दिन मे भात के सिवाय गिनीगुथी पांच चीजे खाना है। छह खायी नही कि महाभारत अशुद्ध । तमाम जिदगी क्या इतना हिसाब गिन-गिन कर चला जा सकता है ? गाय का घी छोड़ खाया नही जायेगा । अजी, यहा गाय का घी मिलता भी है ? कदम-कदम पर परेशानी । वह भी कुछ सिर्फ गाधी के रास्ते पर ही आकर ? उससे पहले ही क्या था ! कुजी रहेगी अपने पास—स्कूल जाते समय मुझे बाजार खर्च के लिए एक रुपया दिया गया। मेरे पास कुजी रक्खी जाती तो क्या सारे रुपये-पैसे मै अपने पेट में डाल लेती ? या कि तुम्हारा भडार

उजाड कर मै अपने मैके भेज देती ? क्या सोचते थे, पता नही । यह बात मैने कभी पूछी भी नही, जानने की प्रवृत्ति भी नही थी । छोटे लोगो के सामने एक दिन कैसा अपमानित होना पडा था ! तेली बहू सबेरे स्कूल के क्वार्टर मे तेल ले आयी । दूकान का तेल अच्छा नही होता । इसीलिए तेलिन को आगन मे बुलाकर एक रुपये का तेल लिया और उससे कहा, 'बाहर जाकर बाबू से रुपया माग ले ।' हाय राम, जरा देर मे तेलिन आयी और मुझ पर गुबार झाडने लगी—मेरी तेल लौटा दीजिये, नाहक ही मेरा इतना समय नष्ट किया । बाबू ने कहा, 'किसने तेल लेने को कहा है ।' मेरी तो नाक कट गयी । ये सारी बाते मेरे मन मे गुथी हुई है । तुमने देश की आजादी के लिए सब छोडा है, सही है, पर मुझे तो तनिक भी आजादी नही दी । बहुत बार सोचा कि लडके जब बडे होगे, तो उनसे यह बात कभी कहूगी । लेकिन कहू-कहू करते-करते कह नही सकी । लडको से यह सब कहा जा सकता है ? तुम्हारी बात पर कभी चू तक नही की । इतने दिनो तक लडको का मुह जोह कर ही रही । मेरा अपना जो हुआ, सो हुआ । उसके लिए जरा भी नही सोचती । लेकिन तुम्हारी वजह से मेरे लडके का यह हाल हुआ । मेरी गिरस्ती खाक मे मिल गयी । तुम्हारी खातिर, मेरे अपने पेट का भाई, जिसके यहा रहकर बाहर के कितने लडके पढते है, वह अपने भानजो की खोज नही लेता । वीरेन की मा, जो वीरेन की मा है, वह भी आकर एक दिन कितना सुना गयी । कितना फटकार गयी । बगाली होने के नाते काग्रेस ने क्या तो उसके बेटे की नौकरी खाली । मेरे मुह पर ही कह गयी, मास्टर साहब क्या, कद्दू ! एम ए. गधा । बगालियो के मुह पर कालिख-चूना पोत कर नवाबी करने के लिए काग्रेस मे है । अब मेरी यह दशा है कि जिधर भी ताकती हू, अधेरा ही अधेरा ।

गाधीजी, आपने मेरा यह क्या किया ? आपने हमें राह का भिखारी बना छोडा, वास्ताव मे भिखमगा । महीने के अत मे आप हाथ मे कुछ देगे, तब हमे दो मुट्ठी अन्न नसीब होगा । अपने ठाकुर-देवता को छोड कर आपकी पूजा कर रही हू, आपके लिए सगे-सबधी, अपने-विराने सबको छोडा है, हंसी भूल गयी हूं । उसका प्रतिदान आपने खूब दिया ! आपके दिखाये रास्ते पर पति-पत्नी के मन का मेल नही होता, बाप-बेटे मे नेह का नाता नही रहता, भाई-भाई का दुश्मन बन जाता है, घर की अनबन से घर चौपट हो जाता । अपना इष्ट-मत्र छोड़ कर साझ को आपका नाम जपती हू, कितने साल पहले हमारे आश्रम मे आप जिस जगह

पर बैठे थे, वहा पर नित्यदिन शाम को प्रदीप जलाया किया है, एक दिन को भी चरखा कातना नही छोडा,——यह सब क्या इसीलिए ? मेहतर को हरिजन कहा, उसके नगे बच्चे को बिलू-नीलू के साथ रसोई के बरामदे पर बिठा कर खिलाया, टोले के लोग हसा किये। लेकिन उसका नतीजा क्या निकला। दुर्गा की मा वगैरह ने तो ठीक ही कहा था, स्वदेशी किया चाहती हो, करो, मगर ठाकुर-देवता के प्रति यह रवैया मत अख्तियार करो—उस समय आपका मुह देखकर उन लोगो की बात अनसुनी कर दी। आज मर्म से समझ रही हू। आज दुर्गा की मा, खेदी की मा, जितेन की मा-दीदी होती, तो उनके गले लगकर रोकर भी जी को जरा हलका कर पाती। महात्माजी क्या खाक ! ऐसा ही होता है सन्यासी का चेहरा ? ओह, इतने दिनो तक क्या करती रही ! दुनिया के लोगो ने मिल कर मेरा क्या किया ! जलन के मारे अपना ही बदन नोचकर खा जाने को जी चहता है, सर कूट कर मरने की इच्छा होती है। अब नही, चरखे को अभी खीच कर फेक दूगी, पटक कर उसके टुकड़े-टुकडे कर दूगी। उसे टेबिल पर रखा था न ?

चरखे के लिए जोर करके उठी। उठ क्या सकती हू ! माथे के बायी तरफ जैसे एक मन लोहा भरा है। कोई गोया सर को तकिये पर ठेल कर गिरा देता है। बहुरियाजी, कमला देवी हा-हा कर उठी।

'उठ क्यो आयी बगालिन माई ? क्या खोज रही हो ? चारो तरफ इस तरह से ताक क्यों रही हो ? सर पर थोड़ा पानी डाल दू ?'

सबने मिल कर जबरदस्ती मुझे बिस्तर पर लिटा दिया। मैं क्या खोज रही थी, यह इनसे कह नही सकी। वैसे मे ये सोचेगी कि मेरा दिमाग खराब हो गया है। अभी ही क्या सोच रही है, क्या पता ! सर पर ओडीकोलोन दे रही है। कमरे की सभी एक-एक करके मेरे बिस्तर के पास आ जुटीं। गलकट्टी धौकनी जैसे गले से लूसी जमादारनी को बुलाकर क्या कह रही है। शायद मेरे ही बारे में। शोर-शराबा मचा कर वह दई मारी अस्पताल मे खबर भेजकर अनर्थ न करे कही। सखावती जी ने सोते हुए लाड़ली को मेरे बगल से उठा लिया धीरे-धीरे। उसने क्या सोचा कि मैं उसके बच्चे को कुछ कर-वर दूगी ? ले-ले बाबा, जो अच्छा समझ में आये, कर। तू उसकी मा है। उसका भला जितना तू समझेगी, उतना क्या मैं समझूगी ? सब मुझे चारो ओर से घेरकर चुप्प बैठी हैं—अभी सूई भी गिरे तो आवाज साफ सुनी जायेगी। सिर्फ पंखे की एक लगातार आवाज हो रही

है। एक गुबरैला उड रहा है। आवाज हो रही है—भो-ओ । ठक् करके माटी पर गिर पडा। फिर उडा। फिर जाने किस चीज से टकरा कर गिर पडा। अभी भी नही उडा है—अभी भी नही—अभी भी नही। अब जैसे ही उडेगा, एक दो तीन करके दस तक गिनना होगा। दस गिनने के पहले ही अगर गिर पडे, तो बिलू हरगिज नही बचेगा। और अगर गुबरैले के गिरने के पहले किसी तरह से दस तक गिन लू, तो भगवान जैसे भी हो, बिलू को जरूर बचायेगे। खूब जल्दी-जल्दी गिनना होगा, जितनी जल्दी गिन सकू। वह उडा—एक दो तीन चार पाच छह सात—अरे, ज'। गुबरैला गिर पडा। यह क्या किया भगवान ? जो भी एक आशा थी, आपने उस पर भी पानी फेर दिया ? धत्, इन मनगढत बातो का कोई सर-पैर है ? आपही तोडती हू, आपही गढती हू। गुबरैले के बारे मे जो कुछ मैने सोचा था, वह हरगिज ठीक नही। सब कुछ भगवान के हाथ मे है। उसी भगवान की आज तक मैने कितनी हेठी की है ! मा पूर्णेश्वरी, मेरी सारी भूल-चूक को माफ करो। तुम्हारी ही दया से तो मैने बिलू को अपनी गोदी मे पाया था। तुम्हारे ही नाम पर तो मैंने बिलू का नाम रक्खा था पूर्ण। घर के सब लोगो ने तुम्हारे मदिर का महाप्रसाद खाना छोड दिया है, तुम इसीलिए क्या मुझ पर विरूप हो ? बिलू की बीमारी मे जो मन्नत मानी थी, वह पूजा पूर्णेश्वरी के मदिर में दी थी न ? याद तो नही आ रहा है। भूल गयी थी क्या ? क्या ? देखा ? देखो तो भला, एक मामूली-सी गलती से क्या हो गया ? मा पूर्णेश्वरी, तुमने मुझे पहले इसकी क्यो नही याद दिलायी ? नही-नही, पूजा जरूर दी गयी थी। तो फिर ऐसा क्यो हुआ ? मा, तुम तो जागृत देवी हो, बिलू तो तुम्हारी ही सतान है, इस बार उसे बचा दो। अब मैं तुम्हारे चरणो मे कोई दोष नही करूगी। अब मै गाधीजी को तुमसे बडा नही समझूगी।

बरम्हथान में बिलू के होने के समय जो ईंट बाधी थी, उसे खोल दिया गया था न ? हा, वही, मैं और जितेन की मां-दीदी गयी थीं। वही, जिस बार मेरे पैर का अगूठा लोटा गिरने से कुचल गया था ! उसी समय गलती कर गयी हूंगी। किस ईंट के बदले किस ईंट को खोल दिया ! ठीक-ठीक, उतनी ईंटो मे पहचानने का उपाय है भला ?

वही, सरस्वती के घर के पास ही, पीपल के नीचे माटी पर सिंदूर लगा हुआ, वह है 'डिह्वार'। दहीभात गांव का ग्राम-देवता, वह 'डिहि' (गाव की सरहद)

पर पहरा देते है। वहा पर सब लोग मिट्टी का घोडा चढाते है। सरस्वती की मा ने मुझे बताया था, जब मा की दया होती है, हैजा या सूखा होता है, तो साठ हाथ लबे डिह्वार ठाकुर घोडे पर चढ कर गाव मे पहरा देते है। कितनी बार दोपहर रात में गाव के चौकीदार ने देखा है। सरस्वती की मा के मुह पर कुछ कहा नही था, पर मन ही मन हसी थी। साठ हाथ लबा ठाकुर—विश्वास नही किया था। साठ हाथ लबे ठाकुर के एक बित्ते का घोडा। ऐसा भी होता है? डिह्वार देवता ने जरूर मेरे मन की उस समय की बात को समझा था! इसीलिए बिगडकर मेरे नसीब को उन्होने ऐसा किया। या चूकि उनके गाव की लडकी सरस्वती से मैने बिलू का ब्याह नही किया, इसलिए उन्होने मेरी यह गत की। डिह्वार देवता, आज मेरे बिलू को बचा दो। उसके बाद तुम जिसमे खुश होगे, मै वही करूगी।··· तुम लोग नाराज होगे तो मुझ जैसी मामूली स्त्री का दिन कैसे चलेगा, कहो। ·

वह! वह! मोटर का भोपू बजा—ऐ। तो मेरा बिलू

झासवाली वह हरी शीशी शायद मेरी नाक पर रक्खी। ·

नीलू

वार्डर निहाल सिंह के साथ जेल-गेट के सामने के गाडी-बरामदे मे आकर खडा हुआ। गेट के बाहर हथियारबद पहरेदार। गेट के अंदर खासी रोशनी। वहा, रोशनी मे डेस्क के पास एक ऊचे स्टूल पर सूबेदार साहब बैठे। निहाल सिंह के कहे मुताबिक गाड़ी-बरामदे के सामने की कम ऊची दीवार पर बैठ गया।

'बाबू, कबल-वबल साथ नहीं लाये, न ?'

कहा, 'नही।'

वह खुद ही अदर के सूबेदार से जुगाड़ करके सीखचो की राह तीन-चार कंबल ले आया। उन सबको उस दीवार पर मोटा करके बिछाया, और जैसे बोझ उतारा, उसकी धूल झाड़ने की कोशिश की।

मुझसे कहा, 'बैठल जाय बाबू।'

उसके बाद गेट के सतरी और सूबेदार साहब को धीमे से मुख्तसर में बता दिया, आज भोर मे जिन्हे फासी होगी, ये उनके छोटे भाई है। रात भर यहीं बैठे रहना चाहते है। इन्हे कोई तग न करे। मैने देखा, सूबेदार ने इस बात को कुछ अच्छे ढग से नहीं लिया। जेल के भीतर का मालिक हेड-वार्डर और गेट के बाहर के स्याह-सफेद के मालिक है सूबेदार साहब। दरअसल पद नाम है गेट-वार्डर। चूकि लडाई से लौटे है, इसलिए ये सूबेदार साहब कहाते है। जेल के अदर कौन आ रहा है, कौन बाहर जा रहा है—उनके रुपये-पैसे, सामान-वामान, खर्च, बाजार

का सौदा, ठेकेदार—इन सब बातो के कर्ता-धर्ता सूबेदार साहब है ! ऐसे महा-मान्य सूबेदार साहब से एक मामूली वार्डर ऐसी बैमानी विनती क्यो कर रहा है ! जरूर कोई बात है।

लिहाजा सूबेदार ने पूछा, 'तुमको कितना दिया ?' निहाल सिह कुछ दिनो से मुझसे पैसे ऐठ रहा था। रोज ही आकर एक फिहरिश्त पेश करता, 'आज आपके भैया को यह-यह चीज खाने को दी है। बाजार से खरीद कर ले गया था। जेल के अदर छिपाकर कोई चीज ले जाना क्या आसान है ? सूबेदार गोया बाघ है। हर चीज ले जाते समय उसे एक रुपया देना पडता है। तनखा उसकी बावन रुपये है, लेकिन उसका चौगुना ऊपरी आमदनी करता है। बिलकुल फौजी मिजाज है—लडाई पर गया था न !' ऐसी इधर-उधर की बहुत बात कहने के बाद कहता, 'हुजूरलोग ही तो मा-बाप है। आप ही लोगो के भरोसे तो बाल-बच्चो को छोड कर पेट के धदे मे इतनी दूर आया हू।'

इसी प्रकार से वह मुझसे रुपये लेता रहा।

सूबेदार और निहाल सिह दोनो की ही यह इच्छा थी कि मै यह समझू, यहा रहना है तो कुछ खर्च करने की जरूरत है। ऐसा नही होता तो वे इतनी जोर-जोर से क्यो बात करते ? वे जानकर ही मुझे सुना-सुनाकर बात कर रहे है।

सूबेदार की बात पर निहाल सिह ने कहा, 'देगा क्या ? अभी भी धरम है। बेटा किरिया (कसम), कुछ दिया नही है। साहब ने इनको लाश ले जाने का हुक्म दिया है।'

'लाश ले जाने का हुक्म दिया है तो दिया है, यहा रहने का हुक्म तो नही दिया है। यहा किसी बाहरी आदमी को रहने देने की जिम्मेदारी मै नही ले सकता।'

सूबेदार फटाफट और भी बहुत कुछ कहता जा रहा था। मैने निहाल सिह को बुलाकर उसके हाथ मे एक रुपया दिया। सूबेदार साहब ने देखा। उसके बाद इस सबध मे कुछ कहा-सुना नही। हिस्सा-बखरा फिर होगा।

सूबेदार ने सतरी से कह दिया, 'ऐ, इस बाबू को कोई तग न करे। दफा बदलने के समय हर दफा जिसमे बाद के दफा को यह कह दे।'

जाते वक्त निहाल सिह ने कहा, 'परनाम'। इधर नमस्कार का रिवाज नही है। उसके बदले पात्रापात्र का बिना विचार किये 'परनाम' का चलन है। इधर

रहते-रहते हमे भी यह और ऐसी कितनी ही बाते बोलने की आदत हो गयी है।

शिशिर की उस चिट्ठी के वाक्य अभी भी मुझे याद है। वह हम लोगो से पहले ही जेल से छूट गया था। जेल मे हम प्राय कहा करते थे, जो जेल से निकलता है, वह जेल के अदर वालो की कभी खोज-खबर नही लेता। वास्तव मे हर क्षेत्र मे यही देखा जाता। जिनका जीवन महीनो, बरसो जेल के अदर सड जाता है, जिनकी उद्दाम जीवनी शक्ति को नियम के बधन से बेकार कर दिया जाता है, चीनी औरतो के पैरो की तरह जिनके जीवन को स्वच्छद विकास का सुयोग नही मिलता, उन्हे खबर बाहर भेजने की कितनी जरूरते नियमित जमा होती रहती है। सरकारी नियमो से ऐसी जरूरते पूरी करने की सुविधा नही है। इसलिए अधेरी यमपुरी मे दुबली किरण आने का रौशनदान है, नये राजनीतिक कैदी का जेल मे आना। और, बाहर के जिस कर्म बहुल ससार के सैकडो मीठे सबधो से विच्छिन्न करके कैदी को लाया गया है, उससे सामयिक संपर्क जोडने की नाकामयाब कोशिश होती है। छूटने वाले कैदी के मारफत तुरत छूटने वाला कैदी जेल यत्र का 'सेफ्टी वाल्व' है। वह जेल के अदर की सैकड़ो नाकामयाबियो, अपार निष्फल आक्रोश, अपरिमित आसू-वेदना और दुर्निवार आकाक्षा के निकलने का रास्ता है। जेल से बाहर जाते समय लिखने की कितनी बात, कितने इटरव्यू की बात, काम कर देने की कितनी प्रतिज्ञा, प्राय चाह कर ली हुई कितनी फरमाइशे,—जाने के दिन की माला फूल की, विदाई का समारोह, प्रणाम-नमस्कार, अदाब-आलिगन, अनमागे परिचय का बाहुल्य, जुलूस-सा बना कर द्वार तक पहुचा आना,—ये प्रत्येक काम जेल की चिराचरितता का अग होते हुए भी किसी मे आतरिकता की कमी नही। फिर, उसके बाद ? उसके बाद क्या होगा, यह भी आखे मूद कर कह दिया जा सकता है। डाक विभाग के अधि-कारी भी कह सकते है, अनुमानत' देश के कितने लोग अगले साल पता लिखे बगैर ही डाक मे चिट्ठी डालेगे। और राजनीतिक कैदी भी बता सकते है कि छूटे हुए कैदी फाटक से बाहर जाने के बाद ही जेल के अदर के लोगो की बात भूल जायेगे। ' हमारी इस गणना को झुठलाते हुए शिशिर ने जेल के बाहर से भैया को चिट्ठी लिखी हे। भैया ने उस खत की कुछ पक्तियो के नीचे लकीर खीच दी—अभी भी याद है। 'अधिकाश लोग जैसे है, मुझे उनकी कोटि में मत

डाल देना। जेल से छूटने के सात दिन के अदर ही खत भेज रहा हू। अमुक-अमुक-अमुक को मेरा प्रणाम कहना।'

हरदा के दूबेजी की स्त्री बूढी है, वह भी मुझे प्रणाम करती है। जोकि भैया को कहती है 'धरम बेटा'। गरीब आदमी है, पर उस दिन भेट जो हुई, भैया के मुकदमे की तारीख के लिए आचल की गाठ से खोल कर तीन रुपये दिये—दोनो आखे उसकी छलक आयी थी। लगा, दूबेजी से छिपाकर रुपये दे रही है। क्यो, पता नही

दूबेजी ने खुद ही मुकदमे के समय भय और सकोच से मुझसे पूछा था कि अगर रुपए-पैसे की जरूरत हो तो मै कुछ बदोबस्त कर सकता हू। दूबेजी ने कहा था, 'भगवान अप्रसन्न है, जभी तो पुलिस ने मुझे और मेरी पत्नी को नही पकडा। नही तो मै तो जुलूस मे शामिल हुआ था। मेरे हाथ मे सबसे बडा तिरगा था। जब मुझे जेल से बाहर रखना ही भगवान को मजूर है, तो काग्रेसी के नाते बिलू बाबू के मुकदमे का उपाय करके मुझे अपना फर्ज अदा करना चाहिए।' मैने उस समय रुपया लेने से इनकार किया। दूबेजी ने इसका यह मतलब किया कि मैं भैया के मुकदमे मे पैरवी नही करना चाहता। गरचे मैने इनकार इसलिए किया था कि ताईजी ने जाने कहा से मुझे मुकदमे के खर्च के तीनेक सौ रुपये दिये थे। ताईजी ने इतना ही कहा था, 'हरेन बाबू वकील को दे देना।' रुपया देते वक्त ताईजी के चेहरे का भाव हूबहू दूबेजी की पत्नी जैसा था। उसके बाद से दूबेजी खुद ही वकील के यहा जाता-आता था।

घोडे की पीठ पर दूबेजी। लाल घोडा जरा लगडा कर चल रहा था। घोडे से उतर कर दूबेजी ने उसकी पीठ पर एक थाप जमायी। पीठ की टाट को हटा कर घोडे को हरेन बाबू के गेट के किनारे के युक्लिप्टस मे बाधा।... दूबेजी ने शायद रुपया भी बहुत खर्च किया था। मैंने बेशक ताईजी के दिये रुपये भी हरेन बाबू को दिये थे। वह पिताजी के मित्र है, पर ताईजी के रुपये देने के बावजूद उन्होने दूबेजी के रुपये लेने मे आगा-पीछा नही किया।

उसके बाद दूबेजी की स्त्री अपनी बात बोल ही बैठी—'मेरे स्वामी ने तो 'बेटे' के मुकदमे में काफी पैरवी की। झीकटे की तरह पैसे खर्च हुए। पर नतीजा क्या हुआ? असल में पुलिस जिसकी ओर, मुकदमे में जीत उसी की। तुम्हारी बात तो पुलिस सुनती है। सुना है, कलक्टर साहब तुम लोगों से सलाह किये बगैर कुछ नही करते। तुम्हारी ही पार्टी के नोखेलाल को देखो न, हरदा बाजार के सभी

दूकानदारो की नाक में दम किये हुए है। परंतु दरोगा बाबू उसकी मुट्ठी मे है। सुना है, सरकार तुम्हारी पार्टी के लोगो को तनखा देती है।' अब मैने दूबेजी से छिपाकर रुपये देने का मतलब समझा। बिलू बाबू उसका 'धरम बेटा' है। उसके लिए, अपनी सरल बुद्धि से उसने जो जरूरी समझा, उसे करने मे झिझकी नही। मुझे वे लोग पुलिस का आदमी समझते है। उनका कसूर भी क्या ? वे लोग और सोच भी क्या सकते है ? तमाम देश के ही लोग तो यही सोचते है। साफ दिल की दूबेइन ने तो पहले के परिचय के नाते मेरे मुह पर बात साफ कह दी। जी मे आया, तीनों रुपये उसके मुह पर मार दू। पर मुह से बोला, 'मुकदमे का फैसला तो हो गया। अब रुपयो का क्या होगा ?' मैने देखा, उसे यकीन नही आ रहा है कि कलक्टर या लाट साहब अब कुछ नही कर सकते। उसके बाद हताश हुए-से मुह की ओर ताकने से लगा, रुपया ले लेना चाहिए। कहा, 'अच्छा, रुपये दे दो।' एक नि सतान स्त्री के पराई सतान के प्रति वात्सल्य के आवेग के आगे मेरी युक्ति और सिद्धात ने सर नवाया। परतु मुकदमे के समय अपने राजनीतिक सिद्धात को जरा लचीला बना लेने से क्या नुकसान होता ? उस समय मै गोया साधारण आदमी नही था। उस समय उस जनमत के खिलाफ जाने-अजाने सबके खिलाफ मेरे सर ऊचा किये खडे होने की बात थी, निदक और विरोधियो को अपने सिद्धात की दृढता दिखाने का सवाल था। राजनीतिक मत की बात छोड भी दें, शायद वहा पर मेरी निजी जिद की बात आ पडी थी। मुझ पर दबाव डाल कर मेरा मत बदल देगा, ऐसा लचीला राजनीतिक सिद्धात मै नही रखता। लोगो ने क्या वह बात समझी, जो मेरे हृदय की गहराई मे थी ? दूबेजी की स्त्री ने मेरे विषय मैं जो समझा, लोग शायद उससे भी बुरी धारण मेरे प्रति रखते है। शायद क्यों, जरूर रखते है। इसका प्रत्यक्ष प्रमाण तो रोज ही देखा करता हूं। उस रोज फुट-बाल मैदान के किनारे बैठ कर छात्रो की जो जमात सिगरेट पी रही थी, बगल से साइकिल पर गुजरते हुए मैने उनका जोर-जोर से खासना सुना था। मुहल्ले के लड़के-लडकियों को विस्मित और जिज्ञासु दृष्टि से मेरी ओर ताकते देखा है। बचपन का साथी सौरीन मुझसे कतरा कर निकल जाने से नहीं हिचका। मारने की धमकी वाली बेनामी चिट्ठी। पहले तो यह याद दिलाई कि मै कैसे ऊंचे हृदय के पिता का पुत्र हू, और अतिम पक्ति मे मेरे पितृत्व पर ही शुबहा जाहिर किया है ! ताईजी और सझली-दी तक काम की बातों के सिवाय मुझसे नही बोलतीं।

डिस्ट्रिक्ट बोर्ड के एक मेबर को दूसरे एक मेबर से कहते सुना है कि दोनो भाई को सहदेव की बहन से प्रेम था। शायद इसी के चलते मैंने भैया के खिलाफ गवाही दी है, नही तो भला फासी के मुकदमे मे अपने भाई के खिलाफ गवाही दे सकता है ? सरस्वती के बारे मे इस ढग से मैने कभी नही सोचा। और, भैया की तरफ से भी ऐसा कुछ कभी नही देखा, जिससे समझा जा सके कि वह उसे प्यार करता है। परतु लोगो का मुह कौन बद करे ?

· जेल मे जब भैया का मुकदमा चल रहा था, जिस दिन मेरी गवाही थी, जेल के बाहर किस कदर भीड थी ! मुकदमा जेल के भीतर चल रहा था। वैसे खूखार मुजरिम का खुले इजलास पर कैसे विचार किया जा सकता है ? कई चौकीदार, दफादार, कासटेबुल, दरोगा सहित पुलिस बैन से जेल के गेट पर उतरा। जनता की तरफ ताक नही पा रहा था, पर शिकायत और धिक्कार की निगाहो का अनुभव कर रहा था। जनता के क्षोभ की मै परवा नही करता, यह भाव दिखाने के लिए एक बार जोर करके सर उठाकर ताका। शायद हो कि मन की चंचलता के कारण, किसी खास व्यक्ति के चेहरे की ओर मनोविश्लेषण की दृष्टि से देखने की जुर्रत मुझ मे नही थी। चिडियाखाने मे जिस दृष्टि से जगली जानवर की ओर ताकते है, उस दिन जेल के वार्डरो ने उसी दृष्टि से मेरी ओर ताका था। जजसाहब ने प्रशंसा की दृष्टि से देखा था। मैने महज जेल के पुराने कैदियो में ही उदासीनता का भाव देखा—और किसी की आंखो मे वैसा नही था। जेल के राजनीतिक कैदियो से उस समय भेंट नही हुई। होती तो उनकी नजर कैसी हिंसक होती, महसूस कर सकता हू। उस मुकदमे मे भैया के साथ और दो जने मुजरिम थे—सुरजदेव और हरिश्चदर। मै इजहार देने को उठा कि हरिश्चंदर मुजरिम के कठघरे से चीख कर बोल उठा था—'छि छि छि छि।' मैंने उलट कर उस ओर देखा था। उसकी आखो से नफरत छिटकी पड़ रही थी। उसकी तीखी आवाज मे जितना तीखा व्यग्य था, उससे भी ज्यादा था निष्फल आक्रोश।· एक बार आश्रम में एक हरहरा सांप को चीमटे से पकड कर भैया के पास ले गया था। भैया बगीचे मे काम कर रहा था। साप के सफेद पेट की ओर देख कर हठात् जो भाव भैया के चेहरे से व्यक्त हो उठा था, वही भाव मैंने सुरजदेव के चेहरे पर देखा। तीखी घृणा से वह मेरी ओर से अपनी निगाह हटा लेना चाह रहा था। और भैया,—कठघरे के अदर एक कंबल पर बैठा, लाल

जिल्द वाली एक किताब पर आखे गडी सारा मुखमडल व्यजनाविहीन। मुझे लगा, वह वास्तव मे ध्यान लगाना नही है, चाहकर आखे लगायी गयी है। क्योंकि तब तो भैया हरिश्चदर को जरूर ही कुछ बोलने से मना करता। उसके बाद जज साहब से सरकारी वकील की हरिश्चदर के खिलाफ शिकायत, हाकिम का गरम होना तथा हरेन बाबू की तरफ ताक कर खोज जाहिर करना, हरेन बाबू मे उद्वेग और खास कर उसे दबाने की कोशिश करना, असिस्टेट जेलर ऑन ड्यूटी और दरोगा मे परेशानी? इजलास नही होता तो वे मुजरिम को वही मजा चखा देते—दोनो मे इसी भाव से नजर का आदान-प्रदान हुआ—ये सारी ही तसवीरे आखो के आगे नाच उठती है। हरिश्चदर जान पर खेल कर बोला, 'करोगे क्या? फासी से भी कुछ ज्यादा दोगे क्या?' वार्डर और सिपाही ने मुजरिम के कठघरे को घेर लिया। हरिश्चदर ने उसी स्थिति में तेज गले से मुझे कहा, 'कुत्ता, कही का!' जज साहब चश्मा पोंछने लगे। पेशकार लपक कर हरिश्चदर को जाने क्या कहने गया। भैया से हरिश्चदर की चार आखे हुईं। भैया की आखो में मिन्नत भरी निगाह—कहना चाह रहा था, हरिश्चदर, अब चुप हो जा। एक दृश्य हो गया! हरिश्चंदर थम गया। इजलास का काम शुरू हुआ।

ककरीले रास्ते पर एक ही साथ बहुतेरे जूतो की आवाज। अधेरे मे रास्ते की तरफ कुछ भी नही दिखाई दे रहा था। दूर पर दीख रही थी, सिर्फ वार्डरो के लबे बैरक के बरामदे पर काली शेडवाली बत्ती। बैरक मे वार्डरो का ढोल-मजीरे के साथ भजन चल रहा था, उसकी तेज आवाज कानो मे आ रही थी। तिरती आ रही थी, नही कहा जा सकता। कानो मे बदस्तूर चोट कर रही थी लेकिन उस आवाज को छापती हुई क्रमश॰ नजदीक आती हुई जूतो की आवाज जेल-गेट पर पहुची। देखा, वार्डरो की एक टोली आयी। अधिकाश के पैरो में पीले रंग का काबुली सेंडल। दो के पैरो मे बहुत ही पुराना बूट। लड़ाई की वजह से बूट जूते शायद मिलते नही।

जेलगेट के दुमजिले पर एक वार्डर ने ग्यारह का घंटा बजाया। एक साथ टन्-टन् करके दो-दो पाच बार, उसके बाद और एक बार। इसी बीच दो घंटे बीत गये। दस कब बजा, जान भी न सका। गेट पर वार्डर लोग खोजी निगाह से मुझे देख रहे थे—यह कबख्त इस अदा से कौन आ पहुचा! एक ने मुझसे दियासलाई है या नही, यह पूछा। मैने कहा, नही है। इसी बीच अदर के वार्डर ने ताला खोल

दिया। वार्डर लोग शोर करते हुए अदर दाखिल हुए। वही पर नाम लिखा गया।

गेट-वार्डर ने हसते-हसते पूछा, 'कोई नाजायज चीज तो अदर नही ले जा रहे हो ?'

एक ने कहा, 'हुजूर, सरच किया जाय।'

सूबेदार ने जबाब दिया, 'खूब ! फिर मुझे घर जाकर स्नान करना पडे, क्यो ? तुम लोगो का तो मुझे पता है। तुम लोग तो वर्दी की जेब मे सामान रखते नही।'

रजिस्टर मे नाम लिखा गया। जेल के अदर का लोहे का फाटक खुला। पूरा नही जरूर, फाटक के एक पल्ले के बीच के दरवाजे को खोला। जेल के अदर जमा हुआ अधेरे। एक-एक करके, एक को छोडकर दूसरे सारे नये वार्डर पैसेज की साफ रोशनी से जेल के अदर के अधेरे मे मिल गये। गेट के जमादार ने दरवाजा बद करके ताल लगाया। एक बहुत बडे रिग मे सौ से ज्यादा कुजिया। ताला बद करके एक बार अनमने भाव से झटका मार कर देख लिया, ठीक से बद हो गया है न। वह झटका देना रीफ्लेक्स एक्शन जैसा लगा। उसके बाद वह मेरी तरफ के दरवाजे के पास आ खडा हुआ। गेट के बाहर बदूकधारी सतरी वदला। पहले वाला गभीर प्राकृति का था, यह जरा और किस्म का। भीतर के जमादार ने बाहर के संतरी से खैनी मांगी। वह गुज-गुज करके गप करने लगा। शायद मेरे ही बारे मे। गेट के अंदर नयी टोली का जो वार्डर रह गया था, वह सूबेदार साहब से गप कर रहा था। सूबेदार एक ऊंचे स्टूल पर बैठा, एक कापी से हवा कर रहा था। हो सकता है, कुछ लेन-देन की बात हो, या जेलगुदाम से कुछ चुराकर बाहर ले जाना होगा। चुराकर कोई चीज बाहर ले जाना एक आदमी के बूते की बात नही। जेल के भीतर का शासन यंत्र कुछ ऐसा है कि जब तक जंजीर की सारी कडिया मिल नही जाती, चोरी की योजना सफल नही हो सकती। खाओ, मगर मिल-जुल कर खाओ। छोटे को नजर अदाज करने की गुजाइश नही।

टन्-टन् करके कलक्टरी के टावर क्लाक में ग्यारह बजे। देखता हूं, सभी जगह के जेल की घड़ी पंद्रह मिनट तेज रहती है।—जेल के सामने सड़क। उसके किनारे-किनारे जेल के कर्मचारियों के क्वार्टर। परदा लगे झरोखो के अंदर कहीं स्पष्ट रोशनी दिखाई पड रही थी। उनमें से एक जगह अधेरे के भीतर हठात् चौकोर रोशनी की झलक मिली। एक क्वार्टर का दरवाजा खुला। प्रकाश की किरण

आकर बाहर पडी। सरल रेखा मे, एक आलोकमय ट्रापिजियम, चौकठ की ओर का बाहु छोटा। रेल लाइन की समानातर रेखा दोनो जैसे दिगत की ओर निकट आने की चेष्टा करती हैं, वैसी ही। एक मूर्ति दरवाजे से बाहर निकली और एक 'सिलहुट' दरवाजे तक आकर कुछ देर खडी रही। दूसरी मूर्ति ने दरवाजा बद किया। उनकी गिरस्ती की रोशनी जेल के इलाके के अधेरे को दूर करने की कोशिश क्यो करे ? दरवाजा गोया जोर करके उस प्रकाश को अपने सीमित क्षेत्र मे समेट रखने का यत्र भर है। लुगीधारी डाक्टर साहब जेल के गेट के पास पहुचे। बदन पर गजी। पान चबा रहे थे। गाल मे पान रखने से सचमुच ही क्या कैसर होता है ? कधे पर कमीज, खाकी हाफपैट, शायद और भी दो-एक कपड़े। चलते समय पाव दोनो को फेकते हुए आगे बढाते है। सतरी झट एटेनशन की मुद्रा मे खडा हो गया। इनके काबुली सैडिल टिकेगे भी कै दिन! सतरी ने सलाम बजाया। अदर के वार्डर ने आदाब करके ताला खोला। डाक्टर साहब सलाम के जवाब मे सर हिलाकर अदर घुसे। गेट का ताला बद हो गया। सूबेदार साहब ने स्टूल पर बैठे-बैठे ही डाक्टर साहब से पूछा, 'कधे पर के ये कपड़े किसलिए ?'

डाक्टर साहब ने कहा, 'ड्यूटी तो अस्पताल मे है। लेकिन क्या पता, भोर-भोर मे डाक्टर, हाकिम, सब लोग आयेगे। उस समय अगर जरूरत पड़ जाय ! उस समय यह लुगी पहन कर तो साहब के पास नही जा सकूगा। लेकिन फासी के समय ड्यूटी बड़े डाक्टर साहब की है, मेरी नही। मगर क्या ठिकाना, जरूरत की तो कही नही जा सकती—और, जो गरमी पड रही है !

डाक्टर साहब की बातचीत मे जरा लाड़ले जैसा भाव। देखा, डाक्टर साहब सूबेदार से खासे अदब के साथ बोलते हैं। इसलिए कि सूबेदार नाराज होगा, तो जेल का विशुद्ध दूध नही पाने से बाल-बच्चे दुबले होगे। अस्पताल के लिए निश्चित मास का थोडा-सा हिस्सा भी उनके घर नही पहुचेगा, किरासन तेल शायद गाठ के पैसे से बाजार से खरीदने की नौबत आये। इनके सिवाय और भी कितनी चीजे, जिन्हे वे अपनी तनखा का ही अग समझते है, शायद हो कि कल से बद हो जाये। अस्पताल की नेट वाली मसहरी, बिस्तर की चादर, सेमल की रूई, चीनी, पुराना चावल आदि कितनी ही चीजो की इन्हे जरूरत रहती हैं, सवेरे जो गैग बाहर के कमाड मे काम करता है, उन्ही मे से शायद कोई बाहर जाते समय

साजी मे डाक्टर-गृहिणी के लिए पूजा का फूल ले जाता है। फूलो के साथ रहता है एक कच्चा बेल और कुछ कागजी नीबू लडके रोज कच्चा बेल आग मे पकाकर खाते है न! और, डाक्टर साहब, वह तो जेल की नौकरी करते-करते चिकित्साशास्त्र शायद भूल गये है। रोज बधा-बधाया काम—हिसाब, नाम, फाइल, दफ्तर, वजन लेना, रिटर्न भेजना, साहब के साथ फाईल मे घूमना, अस्पताल के मेट से लेकर सब लोगो का मन-जुगाकर चलना—इन सबके बीच डाक्टरी करने की कहा फुरसत है? उस बार जेल मे डाक्टर साहब ने मुझ से एक रिटर्न लिखाया था। डाक्टर साहब का नाम शायद नरेन बाबू था। रिटर्न के बहुत सारे विषयो मे से एक था स्पलीनिक इडेक्स। उसका हिसाब कैसे करना होता है, मुझे मालूम नही था। डाक्टर साहब से पूछा। देखा, उन्हे भी नही मालूम है। बोले, 'छोडिये। मैं पिछले साल का रिटर्न देखकर अदाज से भर दूगा।'

जेल गेट से अदर दाखिल होने ही दीवाल मे, दायी ओर, एक ब्लैक-बोर्ड नजर आता है। स्टेशनो पर जैसे चौकोर फलको पर टाइमटेबिल चिपकाया रहता है, वैसा ही। उस पर लिखा है—इस जेल मे कितने कैदी है, उनमे अडर ट्रायल कितने है। और सबसे नीचे लिखा रहता है, उस डाक्टर का नाम, जो आज की ड्यूटी पर है।

डाक्टर साहब ने खड़िये की टुकडी उठाकर अपना नाम लिखा कि रात के नौ बजे से ड्यूटी कर रहे हैं। उसके बाद उन्होने हसते-हसते कहा, 'दफ्तर में फैन है, आपके यहा नही है?'

सूबेदार साहब ने कहा, 'तकदीर।' और उन्होने अपना कपाल दिखा दिया। कपाल के बीचो-बीच एक खासी ऊची नस—इतनी दूर से भी दिखाई पडती है! ··

जितेनदा के जनेऊ के समय ताईजी के बिस्तर पर लेटे-लेटे एक गरीब ताती की कहानी सुनी थी। ताती के कपाल पर राजटीका का सुलक्षण था। उसके बाद से कुछ दिनो तक जिसे भी देखता, उसके कपाल को खूब गौर करता। मैंने और भैया ने तो एक दिन उगली से घिस-घिस कर चमडा लगभग उधेड ही डाला था। कपाल मे ठीक तिलक लगाने जैसा दाग हो गया था। मा की डाट और टोले के लोगों के मजाक के डर से कई दिनों तक हम दोनों घर से बाहर नही निकल सके।

दरवाजा खुला। डाक्टर साहब अंदर दाखिल हुए। भीतर खुले दरवाजे से

बहुत-से जूतों की आवाज सुनाई पड रही है। शायद जेल के भीतर से बहुत-से लोग मार्च करते हुए गेट की ओर आ रहे है। दरवाजा फिर बद हो गया। लेकिन कुछ ही क्षणो मे दरवाजे का छे इच आकार का गवाक्ष खुल गया। किसी ने भोजपुरी भाषा मे दरवाजा खोलने को कहा। फिर दरवाजे का ताला खोला। वार्डरो के ताला खोलने और बद करने का विराम नही। इससे वे लोग थकते भी नही। अभी-अभी तो डाक्टर साहब के अदर जाने के समय दरवाजा खोला था। उसी समय तो पैरो की आहट से जान गया था कि कुछ लोग आ रहे है। कुछ देर के लिए दरवाजा खुला रखने से ही तो होता। दुबारा परिश्रम करने की जरूरत नही पडती। ये जो यत्र चालित की तरह काम करते है, वह जेल के नियम की खातिर या अभ्यासवश ? दरवाजा खोलने के नियम भी अजीब है। जेलगेट के बीच मे दो फाटक है। एक तो मै जहा बैठा हू, इसके सामने है, और दूसरा है गेट से दस-पद्रह हाथ भीतर जाकर। दोनो फाटको के बीच की जगह बडे हॉल जैसी ही। जेल के अदर का कर्म केद्र है 'गुमटी' और जेल के बाहर का कर्म केद्र है वह खाली जगह। शायद चार बैलगाडिया ईट लेकर जेल के अदर जायेगी। उसके बाद बद करेगा। उसके बाद अदर का दरवाजा खोलेगा, जो गाडियो को अदर जाने देगा, अदर का दरवाजा बद करेगा, फिर आयेगा, सामने के दरवाजे को खोलकर बाकी दोनो गाडियो को अदर जाने देगा। एक साथ दोनो फाटक खोल कर चारो बैलगाडियो को जाने देने से मानो महाभारत अशुद्ध हो जायगा।

अदर के वार्डर शोर कर रहे है। किसी वार्डर से पूछू क्या कि फासी सेल में किसकी ड्यूटी थी ? उससे यह जाना जा सकता है कि भैया इस समय क्या कर रहा है। न:, छोडो। जाने क्या सोचे। शायद हो कि टिटकारी मार कर बोले। हो सकता है, उसे मेरे गवाही देने की बात मालूम हो।

सभी बैरक मे लौटने के लिए हड़बड़ाये हुए हैं, काफी रात हो चुकी हैं। एक रजिस्टर मे नाम लिखा गया। एक वार्डर ने ऊंची डेस्क के नीचे से हाथ घुसाकर सूबेदार को कुछ दिया जैसे—ख्वाहिश यह कि कोई देख न पाये। एक-एक करके सभी बाहर निकल रहे है। उनमे से गोरे-गोरे एक कम उम्र के वार्डर को सूबेदार ने पास बुलाकर पगडी उतारने को कहा। सूबेदार ने उसकी कमर, हाफ पैट आदि की खानतलाशी ली। कुछ मिला नही। बाहर निकलते हुए वार्डर बुदबुदा रहा है—'जितना आक्रोश मुझी पर। सूबेदार का ख्याल है मै हेड वार्डर की

जमात का आदमी हू। आपस मे मूछ की लडाई और खीचातानी हम लोगो को लेकर! रुको-रुको, जेलर साहब से कहकर मै अगर इसका किनारा न करू । उसमे मेरी नौकरी रहे चाहे जाय, मै परवा नही करता।'

उसके बाद एक भद्दी गाली देकर बोला, 'नौकरी के लिए न कुछ कहा हो!'

भजन की लगातार चीख। एक भी शब्द पल्ले नही पड रहा है। बीच-बीच मे केवल 'रामा हो रामा!' बचपन मे एक कविता पढी थी, उसमे एक पक्ति थी। 'दरवान, रामा हो।' कविता याद नही आ रही है—पहली पक्ति थी उसकी—'भोर होलो खुकुमणि जागो' (सुबह हुई, मुन्ने राजा जागो), ऐसी ही कुछ।

जितेनदा, ताईजी के बड़े लडके ने ताईजी के बक्स से रुपये चुराकर बहुत-सी कहानियो की किताबे मगवाई थी। कलकत्ते से जब किताबो का पार्सल आया, तो घर मे राज फाश हो गया। जितेनदा घर से भागकर हमारे आश्रम मे दो दिन था। ताऊजी ने कहा था, अब उसे घर नही घुसने दूगा। उन किताबो मे से दो ताईजी ने हम दोनो भाइयो को दी थी—उन्ही में मे एक मे वह कविता थी। जितेनदा ने पैसे चुराकर कितनी बार जो ऐसा पार्सल मगवाया है, उसका ठिकाना नही। बैडमिटन का सेट, कैरमबोर्ड, फुटबॉल का पप, कितना पार्सल वह मगवाता था, उसका लेखा है? एक-एक खेल मे कुछ दिन उत्साह रहता था। कोई भी खेल वह कामचलाऊ भी नही खेल सकते थे। ··वही जितेनदा आज किस गभीर प्रकृति के आदमी है। ठेकेदारी से किस कदर कमाते है! हमें यानी जो गरीब कार्यकर्ता राजनीति के क्षेत्र मे हैं, उन्हे बड़ी कृपा और हिकारत की निगाह से देखते है। उन्हें यह कौन समझाये कि कोशिश करने से हम भी उनसे ज्यादा पैसा पैदा कर सकते थे। ·· नथिग सक्सीड्स लाइक सक्सेस··

अंदर के दरवाजे का वह छोटा गवाक्ष खिसक गया। किसी ने वार्डर से मानो कुछ कहा। अधेरे में उस आदमी की शकल हरगिज नही दिखाई पडी। अलीबाबा वाली गुफा—चिचिंग फॉक! अलीबाबा की गुफा ढेरो धन-रत्न के सिवा और क्या दे सकती? पर, इस फाटक के खुलने से कितने जीव-मृत लोग सचमुच ही फिर से जी उठ सकते हैं।

जेल का कुल प्राचीर ही नही है। उसके अंदर भी काफी खाली जगह है। जहां खुली हवा मिल सकती है। कम से कम साधारण गृहस्थ-घर के अगना से जेल

का अंगना बहुत बडा है। मगर उससे क्या होता है ? जेल के भीतर फूलो का बगीचा, नीम का एवेन्यु, छाह वाले पीपल और बरगद के होने से क्या होता है ? सारा वातावरण विवाद से भरा है, प्राणहीन, कठोर और क्लेदमय है। आबहवा कैसी तो भारी-भारी। आलिवर लॉज, लेड वेटर, कैनन डायल——इन्होने फिजिकल फिजामिना के बारे मे क्या ठीक ही कहा है ? गभीर चितन और आलोडन के समय हम लोग क्या चिता-मूर्तियो को उसी जगह छोड देते है ? हमारी चितन-समष्टि क्या आज जैसी है कि उससे एक-एक छिलके और दाने को छुडा ले सकते है——कौन मोटा, कौन पतला ! सचमुच क्या इसीलिए किसी पुराने घर मे जाने में हमारा बदन छम-छम करता है ?

अदर से जो आये, वह अस्पताल के कपाउडर है। हजरत बडे शौकीन है। हाथ मे एक लालटेन।—साप के डर से ? असल मे जेल मे आते समय वह लालटेन को खाली करके लाते हैं। घर लौटते समय उसमे किरासिन तेल भरकर ले जाते है। हा, सभी जानते है, सभी समझते है, पर कोई कुछ कहता नही। ऐसी छोटी-छोटी चीजे जो मिल जाती है, उन्हे वे ऊपरी पावना नही समझते—यह तो उनकी नौकरी के वेतन मे ही शामिल है। शायद हो कि वेतन पचीस रुपया है। पर कपडा-लत्ता, जूता-छाता मे इतना पैसा कैसे खर्च करता है? डाक्टर से पावने की जरूर हिस्सेदारी है। 'क्यो, कपाउडर साहब को आज तो बडी देर हो गयी ?'—सूबेदार ने सहानुभूति के स्वर मे पूछा।

'हा सूबेदार साहब, जेल की नौकरी लेकर कैसी गुखोरी की है कि कहिये मत। एक मिनट की छुट्टी नही। वही सुबह आया हू और रात के बारह बज गये। दोपहर मे सिर्फ खाने के लिए घर गया था। सिधेसर बाबू को अस्पताल ड्यूटी में नौ बजे आने की बात थी। अब आये। रात के बारह बजे, खा-पीकर, पान चबाते हुए।'

उसके बाद एक भद्दी गाली। अपनी किस्मत को, सिधेसर बाबू को या कुरते में जो कीड़ा घुस गया था उसे, किसे गाली दी, ठीक समझ मे नहीं आया। इतना ही समझा कि जरा देर पहले जो डाक्टर साहब जेल में गये—उनका नाम सिधेश्वर बाबू है। ··कुरते के अदर से कीड़े को निकाल रहा है। जो शकल बनायी है, देखकर हसी आ रही है।

कपाउडर साहब अपने सुख-दुख की कहता जा रहा है। 'मिसिर साहब के

नाइट ड्यूटी रहती है, तो गनीमत है। वह जब आते है, नौ ही बजे आते है या फिर आते ही नही।'

दोनो ने आखो-आखो मे क्या तो इशारा किया और हस उठे। फिर गये।

'वह सब जेल का साहब भी जानता है। कितनी बार रात के राउड मे जेलर साहब ने अस्पताल मे जाकर देखा है कि डाक्टर साहब का कमरा खाली है। और अपनी आखो न भी देखे, जेल की कोई खबर छिपी तो नही रहती! पहले का साहब था, तो एक दिन पकडा गया। जवाब मे कहा, 'किया क्या जाय, अस्पताल और वार्ड मे जिस कमरे मे ड्यूटी वाला डाक्टर सोता है, उसमे दरवाजा नही है। रात मे कही कोई आकर मार-पीट करे, इस डर से नही सोता हू।' वह साहब भी एक ही घाघ था। बोला, कैदी तो रात मे बद रहते है, मार-पीट कौन करेगा? डाक्टर ने जवाब दिया था, जिन मेटो को रात मे वार्ड की ड्यूटी दी जाती है, वे तो नही बद होते है! इस घटना के ठीक पहले जेल मे म्युटिनी हो चुकी थी। लिहाजा साहब ज्यादा कुछ नही बोल सके। पर अभी? मुजफ्फरपुर जेल के कुछ राजनीतिक कैदियो के भाग जाने के बाद से तो मेटो की रात-ड्यूटी बद कर दी गयी है। सुना, मेट लोगो ने ही उन्हे भागने मे मदद दी। अभी तो पहले वाला बहाना नही चलेगा। अब शायद दूसरा कोई बहाना निकालेगा। अच्छा यार, एक सिगरेट तो पिलाओ। बिलकुल थक गया हू। हाड-गोड़ टूट रहा है।

सूबेदार साहब ने सिगरेट निकाली। कपाउंडर साहब ने सुलगायी। उसके बाद धीरे-धीरे क्या सब बातें हुई। लालटेन की बत्ती को उसकाकर कपाउंडर साहब ने उसे उठा लिया। अधजली सिगरेट मे जोर का एक कश लगाकर सूबेदार को दी। गेट से निकलते हुए बोले, 'उसके लिए फिक्र मत करो। मैं ही दे दूंगा'—अब तक काहे की बात हो रही थी? क्या दे देंगे? इजेक्शन तो नही? देख रहा हूं, सूबेदार और कपाउडर साहब मे काफी अंतरगता है। गेट से बाहर आकर कंपाउंडर साहब ने सूबेदार से पूछा, 'तुम तो आज यही सोओगे?'

'हां, आफिस वाले कमरे में बिछौना कर रक्खा है। अब सोने जा रहा हूं।' कंपाउडर साहब के सर के पीछे के बाल कितने बडे-बडे हैं! ज्यादा सफेद ही हो गये हैं। उन्होने कितने ही, कैदियो की फासी देखी है। भोर को होने वाली फासी की कोई बात ही उनके मन में नही आ रही है। जितने भी कंपाउडर है, सभी क्या पीछे के बाल बढ़ाकर रखते हैं?

· वह हरीश कपाउडर। माथे मे अध-बाबरी बाल। वह माधव बाबू के लिए दवा बना रहा था। सदेहाल माधव बाबू ठीक उसके पीछे खडे थे! वजन ठीक हो रहा है या नही, यह देखने के लिए। कुछ देर खोजकर और अधीर होकर हरीश के भोटे को खप् से पकडकर उसके सर को हिला दिया। बोले, 'बाल को छोटा नही कटवा सकते? पीछे से तुम्हारा दवा बनाना जरा भी नही देखा जाता।' मैने जाकर भैया और मा को यह किस्सा सुनाया था। सबकी हसी की न पूछिये! हसी दबाने की बेकार कोशिश करते हुए मा बोली, 'हाय मेरी मा, सब कुछ क्या तुम्हारी ही नजर मे पडता है?' मा के हसते ही उसकी आखो मे आसू आ जाता है। और भैया जब भी हसता है, कोई आवाज नही होती, बाये गाल पर जरा गढा पड जाता है। अजीब है! दोनो मे नही, एक ही गाल मे गढा पडता है। हसते समय दोनो आखे अधमुदी हो जाती है। भैया का हसता मुखडा आखो के सामने तैर रहा है!

रोशनी की लौ क्रमश दूर चली जा रही है। इधर-उधर डोल रही है। कपाउडर साहब की लालटेन। कपाउडर बाबू क्या इतना हिलते-डोलते चलते है! गुरिल्ले इसी तरह से चलते है। नजदीक से इतना गौर नहीं किया था। उतनी दूर क्यो जा रहे है? लगता है, सरकारी मकान नही मिला है। दूर से लालटेन की शिखा और दीये की शिखा मे कोई फर्क समझ मे नही आता।

रानीपतरा से एक किसान-केस की पडताल करके लौटते समय मै, भैया और सहदेव, बहुत थक गये थे। अधेरी रात में टिमटिम रोशनी देखकर। रात काटने के लिए उसी तरफ जाना तै किया। जुगनू जैसी मद रोशनी—धीरे-धीरे समीप पहुच कर देखा, एक डिजु लालटेन की शिखा है। लालटेन पुरानी है—जग लगी।··

··महातमा लोगो के लिए खटिया, कंबल, तकिया आया। वालंटियर सहदेव के लिए बरामदे पर एक चटाई डाली गयी। खटिया घर के बाहर एक दोपाले मे डाली गयी। दीवाल या बेड़ा नहीं थी। इधर इसे 'हवाटुगी' कहते है। कंबल पर मैली चादर और तेल-चिटका तकिया देखकर मेरा बदन घिन-घिन कर रहा था—जाने कितने रोगो के कीटाणु इसमे होगे। मैने खटिया से वह सब उतार दिया और सिर्फ कबल पर बैठा—कबल पर गदगी नही दिखाई पड़ती, इसलिए मन की तृप्ति जरा। जिस आदमी ने चूडा-दही परोसा, उसकी आख आयी हुई थी। भैया

तो दही-चूडा खाकर मजे से निश्चित होकर उसी तकिया-बिस्तर पर सो गया। मैने भैया मे भाग्यवादिता की झलक बराबर देखी है। पारिवार्श्विक से मेल मिला कर चलने की उसमे गजब की क्षमता है। इसकी बात उठाते ही कहता, यदि किसी मूल सिद्धात मे चोट न पहुचे, तो अपने सौजन्य को बलि देने की क्या जरूरत है? उसका आत्मकेद्रिक मन चिता मे अपने आपको ही डुबोये रखना चाहता है। हर सवाल वह अपने ढग से सोचता है, किसी भी सूक्ष्म विषय को मुझसे ज्यादा अच्छा समझता है, पर व्यावहारिक क्षेत्र मे, व्यक्तिगत जीवन मे उसका आचरण युक्ति मे सामजस्य नही रखता। जिस बात को सुनकर मेरे तन-बदन मे आग लग जाती है, एक छोटा-सा जवाब देकर उसे सह गया। बिलकुल नीलकठ है। साहस की कमी उसमे नही है, डर से किसी करने योग्य काम को छोड देते उसे मैने आज तक नही देखा है। लेकिन उसका खून मानो गर्म ही नही होता। बुद्धि की तीक्ष्णता और अनुभूति की तीव्रता होते हुए भी आवेग की उग्रता और प्राणशक्ति की प्रचडता उसमे नही है। हर कदम उसका नपा-तुला होता है। जैसे, फिसलन वाले रास्ते मे बहुत तोल-तोल कर कदम रखते हुए चलता हो।

थ्रीलेगेड रेस के समय भैया किस कदर सकुचा कर पैर बढाता है। एक बार कुमार साहब के मेले मे मैने और भैया ने थ्रीलेगेड रेस मे भाग लिया था। हम लोग बहुत पीछे रह गये थे, सफल नही हो सके। यह आइटेम जब खत्म हो गया तो क्रोध और दुख से मैंने भैया से कहा था, 'तुमको साथ लेकर दौड़ना और गले मे एक विराट ढाक बांधकर दौड़ना एक ही बात है।' भैया ने कहा, 'मैने तो पहले ही कहा था। तू तो स्पोर्ट्स मे सब में फर्स्ट होता है। नाहक ही मुझे साथ घसीटा। पन्ना को साथ लेता!' भैया को इतना शर्मिंदा और इतना अप्रतिम होते कभी नही देखा था। 1943 और 1922—इक्कीस साल पहले की घटना है। ...भैया का मुह पसीने से तर, थका हुआ मुखड़ा ... इधर-उधर बिखरे हुए बाल धूल से भरे। हाफते हुए धोती के छोर से पैरो की धूल झाड़ने लगा। मेरा मन खराब हो गया। दूसरी-दूसरी प्रतियोगिताओं मे जो ईनाम मिला था, उन्हें मा को दिखाकर मुझे आनंद नही आया। भैया ने खुद ही वह सब मां को दिखलाया। दूसरे दिन उन सब चीजों को बधु-बांधवों को दिखाया। मां से कहा, 'रोजारिओ साहब की करतूत नीलू से सुनना, मैं तो ठीक से कह नही पाऊगा।' समझ गया कि भैया ने मेरे मन के भाव को ताड़ लिया है। उसकी पैनी और दरदी दृष्टि मन

के अतस्तल तक पैठ जाती है। भैया मेरे जी को हलका करना चाहता है। मेरी ओर से अपनी रूढता का प्रायश्चित होना चाहिए था। रोजारिओ साहब की करतूत कहनी पडी। रोजारिओ साहब कुमार साहब के मैनेजर थे। स्पोर्ट्स उन्ही की देख-रेख मे होता। सौ गज की दौड मे खोकनदा से कोई जीत नही सकता। उसका अच्छा नाम है क्षीकरी रजन दत्त। वह फर्स्ट हुआ था, मै सेकड। लडको की रेस मे कुरते मे नबर नही दिया जाता। ठिकाने पर पहुचने के बाद रोजारिओ साहब लोगो से पूछकर नाम लिखते। खोकनदा से नाम पूछा। चारो तरफ भीड, शोरगुल। हर प्रतियोगिता खत्म होने पर ऐसा ही होता है। खोकनदा ने नाम बताया। साहब ने दो-तीन बार पूछा, फिर भी उसका नाम वह ठीक से समझ नही सका। उसके बाद मेरा नाम लिखा, मेरे बाद और दो-जने का नाम लिखा। प्राइज देते समय देखा, उसने मुझे फर्स्ट प्राइज दिया। खोकनदा की आखे डबडबा आयी, उसका नाम नही था। जितेनदा ने उससे मजाक मे कहा, 'भला क्षीकरीरजन दत्त—यह नाम साहब लिख सकता है ? बाप-मा के दिये हुए नाम की वजह से तुम्हे प्राइज से हाथ धोना पडा। अब कल सबेरे तुम कुमार साहब के पास जाओ।' सोचा था, यह किस्सा सुनकर मा हसेगी। लेकिन नतीजा उलटा हुआ। प्राइज मे मिली चायदानी मुझे दूसरे दिन खोकनदा को दे आनी पडी। और मेरा प्राइज यो ही गया। रोजारिओ साहब को देखने से दुख की वह बात मुझे आज भी याद आती है।

भैया लेकिन फिर कभी मेरा पार्टनर बनकर खेलने को राजी नही हुआ। किसी न किसी बहाने उसने टाल दिया। भैया को खेल-कूद का विशेष शौक कभी भी नही था। एक बैडमिंटन के अलवा कोई भी खेल वह अच्छा नही खेल सकता था। पर उसमें भी वह कोई मैच मेरा पार्टनर होकर नही खेला। प्रीति, सौजन्य, नमनीयता मे उसकी दृढ़ता असीम है। एक स्थान पर पहुच कर फिर उसको छूआ नही जा सकता,—इतना निकट, फिर भी मानो जरा अलग-अलग, स्वतंत्र। उसका वह रूठना मै इक्कीस साल मे लाख कोशिश करके भी नही तोड़ सकता।

बैरक का भजन-कीर्तन अभी चल ही रहा है। कोलाहल से लग रहा है कि खूब जम गया है। अब सियाराम का नाम-कीर्तन नही हो रहा है। अब लगातार एक सुर सुनाई पड़ रहा है, 'नारायण-अ, नारायण-अ, ना ··आ रा यण अ।'

इनका कीर्तन आम तौर से ऐसे ही नाम-कीर्तन से समाप्त होता है ! 'साहब सुपरिटेडेट अपने क्वार्टर के पास यह विकट चीत्कार कैसे बरदाश्त करता है।' शायद वार्डरो को नाखुश करना नही चाहता। उन सबके हार्दिक सहयोग के बिना जेल का शासन पलभर को चल जो नही सकता !

कितने दिनो की बात हो गयी। दुबला लिकलिक जज स्पीलर साहब अधपगला किस्म के आदमी थे। व्यायाम के लिए हर रोज कुल्हाडी से लकडी फाडा करते थे। जर्मन सम्राट कैजर को भी यह सनक थी। फजले मिया नाजिर जज साहब के लिए लकडी जुटाते-जुटाते परेशान। बजरग प्रसाद वकील की बेटी के ब्याह मे स्पीलर साहब ने जो किया था ! रात मे ब्याह का बाजा-गाजा जब खूब जम उठा, तो हठात् उन्हे लगा कि उससे उनकी शाति मे खलल पहुच रही है। कि हाथ मे एक लाठी और एक 'बुल्स आइ' लालटेन लिये बजरग बाबू के यहा जा धमके। वहा कहा-सुना कुछ नही, उस लाठी से उन्होने ढोल मे छेद कर दिया। दूसरे दिन बजरग बाबू ने जज साहब पर मुकदमा दायर किया। कुछ दिनो के बाद समझौता हो गया। दिमाग जब ठडा हुआ तो वकील साहब ने समझा, जब वकालत करके ही गुजर-बसर करना है, तो जज साहब से झगडा करने से क्या लाभ ? सगेसबधियो के सामने जो अपमान होना था, सो तो हो चुका ! बात को बढाने से ही बढ़ती है।

अपने देश के लोगों को क्या दोष दू ? सभी देश के लोग एक ही-से है। साहब लोग भी हम लोगो की तरह अवसरवादी होते है। काग्रेस मिनिस्ट्री के समय जिला मजिस्ट्रेट वर्नन साहब खुद से आकर हमारे आश्रम मे भात-दाल मागकर खा गये है। श्रीमती वर्नन हाथ से भात खाते समय कौर को ठीक से मुह तक पहुंचा नही पा रही थी। हाथ पर भात को रखती थी, ठीक उसी तरह जैसे चम्मच मे भात लेते हैं। और हूबहू चम्मच जैसा ही हाथ को मुह मे डालती थी। तमाम मुह में भात-दाल लग गया था। ···जिस-तिस बहाने वर्नन साहब जब-तब भेट करने आ जाते थे। खद्दर और गाधी टोपी की कैसी खातिर ! साहब की बेटी ने एक नेवला पाला था। 'घर का नेवला बेहद तग करता है, तुम लोग अगर आश्रम में रक्खो, तो दे दू।' यह कहकर उन्होने भैया को नेवला दे दिया था। उसके बाद उस नेवले को देखने के बहाने, समय नही असमय नहीं, कलक्टर साहब बीवी-बच्ची को लेकर जब-तब आ धमकते ! 'बिटिया रिकी को देखना चाहती है।' और फिर रिकी को लेकर बच्चे जैसा कितना दुलार, कितना हो-हल्ला।···

चिंता के सूत्र को तोडते हुए, अधेरे और सन्नाटे को चीरते हुए, वातावरण को कपाते हुए बारह का घटा बजा। डाक्टर के क्वार्टर का एक कुत्ता भौक उठा—उसकी सुख-तद्रा शायद टूट गयी। 'हो-ओ-ओ है !' इस विकट चीत्कार के साथ झाल-मजीरा ढोलक पर चलता हुआ वार्डरो का भजन-कीर्तन बद हो गया। ये लोग क्या घडी देखकर बारह बजे तक भजन गाते है ? खाकी की अधबहिया के नीचे का एक जोडा हाथ एक आधे हाथ व्यास के झाझ को बजाता जा रहा था। बाये हाथ की कलाई मे एक सस्ती हाथ घडी और उसके ऊपर के हिस्से मे नीले-लाल गोदने की एक नारी-मूर्ति।

पिताजी का कीर्तन ठीक आठ बजे समाप्त होता था। 'रघुपति राघव राजाराम, पतित पावन सीताराम'—महात्माजी का यह प्रिय भजन सबसे अत मे गाया जाता। आश्रम मे जो भी काग्रेस कार्यकर्ता होते, कीर्तन में साथ देते। सब सोचते, पिताजी इससे खुश होगे। सच, पिताजी के कीर्तन की इस आदत को तमाम जेल के लोग जानते है। मीटिंग के कमरे मे ही कीर्तन। सीमेंट का फर्श, माटी की दीवाल, फूस का छप्पर, दीवाल मा के अपने हाथो झकमक लीपी हुई—बीच-बीच में छोटी-छोटी खिड़की, किवाड नदारद। पूरी दीवाल मे बीच-बीच मे नेताओ की तसवीर। एक तरफ दो काग्रेस के झडे—क्रूस की तरह लगाये। उसके ऊपर लाल कपडे पर सफेद रूई से नागरी मे लिखा—'स्वागतम्'। नीचे गाधीजी की बड़ी-सी तसवीर। घर के उत्तर-पूरब का कोना जरा गदा। कास्टिक सोडा, लोहे का कडाह और कपडा धोने का साबुन बनाने का सरजाम भरा लकडी का एक विशाल संदूक उस तरफ रहता है। वह सदूक फुलवाहा के नद लाल तिवारी ने काग्रेस कमिटी को दिया था। कोने मे एक धुनकी खडी की हुई रहती है और छप्पर के बीम से झूलता रहता है एक धनुष। दिन मे प्युनी बनाने के लिए रूई धुनने के समय धुनकी को उसके साथ बाध दिया जाता है। आश्रम का कीर्तन शुरू हुआ। 'देश के बच्चे, गांधीजी को जाना ना, पहचाना नारे' पिताजी का खुद का लिखा हुआ गीत। मा धूपदानी लेकर बैठक वाले कमरे में गयीं। गाधीजी की तसवीर के सामने फूल की माला देकर सामने धूपदानी रक्खी और उसके बाद एक कोने मे हाथ जोडकर अलग बैठ गयी। पिताजी ने लालटेन को मद्धिम करके सुर पकडा। सहदेव वगैरह सभी विकृत बगला उच्चारण से कीर्तन करने लगे। पहला गीत खत्म हुआ। मां ने झुक कर प्रणाम किया। इतने-

इतने लोगो के खाने-पीने का इतजाम उन्ही को करना है, कीर्तन मे बैठी रहे तो रसोई कौन करेगा ? मै और भैया, बचपन मे दोनो कीर्तन मे बैठा करते थे। जनेऊ होने के बाद भी कई साल बैठे थे। भैया ने जब कीर्तन करना बद कर दिया, उसके कई दिन बाद से मैने भी कीर्तन मे जाना बद कर दिया। इसके लिए मा किस कदर रोयी। 'तुम लोगो के नही जाने से वे दुखी होते है। तुम्हारा जी न चाहे, फिर भी उनकी सोच कर क्यो नही बैठते ?' भैया ने कोई जवाब नही दिया। वह घर मे कीर्तन नही करता था। लेकिन काग्रेस के कामो के सिलसिले मे जब गावो मे जाता था, बडे-बडे गावो के लोग हम लोगो के मनोविनोद के लिए कीर्तन का प्रबध करते थे। पिताजी के लिए ऐसा करने के वे आदी थे, इसलिए मास्टर साहब के लडको की भी यह खातिरदारी करते। उस कीर्तन से भैया ने कभी ऊब नही दिखायी। मै कुछ उकड़ू लगने जैसा करता, तो इशारे से मुझे धीरज रखने को कहता।

वैसी थाना के खगहा हाट मे मीटिंग होगी। लोग-बाग अभी पहुचे नही। काग्रेस के झडे को गाडकर सहदेव 'इनक्लाब जिदाबाद', 'गाधी जी की जै' कितनी बार बोल चुका। ढिंढोरा पीटना, घंटा बजाना, आदि जितने तरीके है गाव की हाट मे भीड बटोरने के लिए सब कुछ किया जा चुका। लेकिन लोग नही जुट रहे है, आखिर स्थानीय कार्यकारी रामदत्त मडल ग्वालो की कीर्तन पार्टी को बुला लाया। साथ मे सिगल रीड का एक हारमोनियम। दस मिनट के अंदर हाट के सारे लोग टूट पडे। और हमने जल्दी-जल्दी अपना भाषण समाप्त किया। लोग बाग हाट के काम मे आये थे। वे दाद के मलहम के कनवासर और महात्माजी के चेला के भाषण में फर्क नही समझते। हाट आये है, सब तरह के तमाशे के साथ महात्माजी का तमाशा भी दो मिनट देख लेंगे। उनमें से बहुतों ने महात्माजी के दर्शन, 'नमक सत्याग्रह' के पहले किये है—वे भला इन सब नये चेलो के मुंह से नयी बात सुनेंगे—क्या जो बोलते हैं, पद्रह आना बात तो समझ मे ही नही आती। हमारे मवेशियो की चरी का इंतजाम करे, लगान कम कर दे, तहसीलदार-पच की गाय भैंस जो खेत उजाडा करती हैं, उसे बद करे, जब तो समझे। सो नही, सिर्फ मेबरी का चंदा वसूलने का उपाय ! मिनिस्ट्री गद्दी पर बैठकर लगान बाकी का कानून बनाया है। हाट मे भाषण दे गया कि दवाखाना मे किसी को चार आने से ज्यादा खर्च नही पड़ेगा। और खर्च पड़ा उसका बीस गुना। आधे लोगों की दर-

खास्त तो खारिज ही हो गयी। महात्माजी के चेला पुण्यदेवजी को तदवीर के लिए दरखास्ते दी थी। उन्होंने भी फी दरखास्त आठ आने के हिसाब से मेहनताना लिया था। एक सिर्फ मास्टर साहब है कि इस जिले मे महात्माजी का कुछ काम हो रहा है। नही तो इनमे से आधे लोग तो ठग है।—सच ही तो, काग्रेस सगठन तो पूरी तरह धनी किसानो के हाथ मे है। वे जमीदारो के शोषण से बचना चाहते है, लेकिन खुद अपने सीमित खेतो मे अधियादार, बटहिदार या बेसहारे खेत मजदूरो पर शोषण करना बद नही करना चाहते। काग्रेस मिनिस्ट्री के समय निरे गरीब रैयतो के लिए जो कानून बने थे, अपने कूटकौशल से सबको इन लोगो ने बेकार कर दिया। सहदेव जैसे काग्रेसी-कार्यकर्ताओ ने भी अधियादार के कायमी स्वत्व को बद करने के लिए 'बदोबस्ती' का झूठा दस्तावेज तैयार किया है।

'दहीभात गाव की वह प्रौढा स्त्री, जो प्राय: काग्रेस आफिस मे आया करती थी,—गले मे बहुत बडा घेघ—आते ही रोना शुरू करती। भैया से कहती, 'तुम्हारे विना इसका उपाय कोई नही करेगा। आसमान मे चाद-सूरज के रहते मुझ पर यह जुल्म! सहदेव का बडा भाई कपिलदेव मेरी सारी जगह-जमीन ले लेना चाहता है। कोई पचास बीघा जमीन। उसके घर के बगल की जमीन है न, उसमे 'माधाता' तबाकू की खेती खूब होगी। इसलिए इस जमीन पर आखे गडी हैं। पुरुख तेली था। जवान बेटा 'पुरुख' के रहते ही मर गया। पतोहू के उस समय पेट था। एक साल के अदर मेरा पुरुख मर गया, उसके बाद गयी पतहू। साल पूरा होते न होते रत्ती भर के पोते के भी वायु उखड गयी। वह चौबीसो घटा दादी की ही गोदी मे रहता था। कितना इलाज, दवा-दारू हुआ। तकलीफ होगी, इसलिए बच्चे को सूई नही लगवायी। यदि लगवा देती तो शायद बच जाता। उसे नहीं बचा सकी। टोले के गोरे गोप का लड़का इसके कुछ दिन के बाद गुजरा। सो, कपिलदेव ने पचायत बुलाकर मुझ पर यह इलजाम लगाया कि मैं डाईन हू। पहले अपने घर का सफाया किया, अब 'बान' मार कर गोरे लाल के बेटे का काम तमाम किया। अरे 'बेकूफ' इतना नही समझा कि मै खसम, बेटा, नाती-पोते, सबको खा चुकी हू। मेरे पेट मे अब जगह कहा है! उसके बाद गांव से मुझे निकाल बाहर करने के लिए उस दिन रात को राधो, सनीचरा, छेदी—इन सबने मेरे घर को आग लगाकर फूक डाला। मुट्ठी भर धान तक नही साबित रहने दिया। मै लेकिन अपना 'डिह' नही छोड़ने की। सुना, मेरी जमीन हड़पने के लिए

सहदेव ने सदर मे मुझ पर डिग्री करायी है। मै क्या दुधमुही बच्ची हू कि इस बात पर विश्वास करू ? खेत है दहीभात गाव मे और डिग्री करायी पूर्णया मे ? ऐसा भी होता है कही ?' ऐसी कितनी ही बाते कहती, कभी-कभी टक्-टक् करके सर कूटती और ढाढे, मारकर रो पडती। कहती मास्टर साहब को समय कहा है, नही तो उन्हे ही एक बार दहीभात ले जाती। लिहाजा बिलू बाबू के सिवाय और चारा नही। भैया और मैने इतनी कोशिशे की, पर कपिलदेव के इस अन्याय को कोई किनारा नही कर सका। हम लोग दहीभात जाते तो कपिलदेव पूरी-तरकारी खिला देता, पर काम की बात पर कान नही देता। घुमा-फिरा कर कहता कि हम भी तो गाधीजी के भक्त है, मै जिला काग्रेस कमेटी का मेबर हू, आश्रम के छप्पर की छौनी के लिए पुआल हर साल मे ही देता हू, एक भाई को तो काग्रेस को दान कर दिया है। असल बात यह कि बडे सयुक्त परिवार मे काम, जगह-जमीन देखने के काम के लिए सबकी जरूरत नही पडती। घर के अन्न का श्राद्ध करके गाव मे भीड करने से एक का काग्रेस मे शामिल होना अच्छा है। बडे किसानो की यही मनोवृत्ति है। काग्रेस सगठन से जितनी सुविधा पाना सभव है, वह इस 'दान' से निश्चित हो जाता है। और क्या चाहिए, भाई अगर क़ाग्रेस के अधिकारियो का मन जुगाकर चल सके तो डिस्ट्रिक्ट बोर्ड का मेबर तक बन सकता है। और अगर काग्रेस निहायत ही किसी बात में धनी किसानो पर दबाव डाले तो उसका ख्याल न करने से ही हुआ ! आखिर तक नैतिक प्रभाव के अलावा और कोई भी शक्ति तो कांग्रेस में नही है।…

बाद मे उस तेलिन ने क्रोध और दुख से भैया को कहा था, 'मै जानती हू, दरोगा साहब को कपिलदेव ने खरीद लिया है। पर, तुमको भी खरीद लिया है क्या ?' वह और भी बहुत कुछ कहने जा रही थी, पर अचानक सहदेव के आ पहुचने से रुक गयी। दुश्मनी हो चाहे, सहदेव भूमिहार ब्राह्मण है—ऊंची जात। गाव का एक गणमान्य' आदमी। उसके सामने एक तेलिन जोर से बोल नही सकती। और हम सहदेव को कहते तो वह कहता, 'भैया मालिक हैं। मैं इसका क्या जानता हूं।'

मेरे जी में आ रहा था, गरदन पकडकर सहदेव को काग्रेस आफिस से निकाल दू ! उसके बहुत दिनो तक मैंने उससे बात नहीं की। भैया ने बाद में मुझे कहा, 'अरे, उस पर बिगड़ कर क्या होगा, गलती तो सगठन के मूल मे है।'

सन् 1930 और 1932 के आदोलन मे कैंप जेल में रहते हुए अपनी राजनीतिक दृष्टि भगिमा के निकम्मेपन का एहसास हुआ। इस सबध मे जेल में कितनी आलोचना, वाद-विवाद मनमुटाव हुआ। जो उस निरर्थकता की बात खुलकर नही कहते, उनके चेहरे पर हताशा की छाप साफ थी। वही बीज इतने दिनो के बाद अकुराया। भैया और मै काग्रेस सोशलिस्ट पार्टी मे शामिल हो गये। तेलिन बुढिया की उस घटना ने सोए बीज पर ताप और पानी सीचा। वह औरत अभी तक अपने पति के 'डिह' को अगोरे हुए है या नही, नही जानता। पर, उसकी आखो के आसू हमारे हृदय की सारी दुविधा, सारे सदेह को बहा ले गये थे। हृदय-कदरा की अधजगी आकाक्षा ने रोशनदान से उषा की किरण को देखा। उसके बाद मैंने और भैया ने एक ही पार्टी मे रह कर उत्साह से कितना काम किया। वह तो केवल सहकर्मी नही, केवल कामरेड नही—वह मेरा भैया जो है! सुख-दुख की कितनी स्मृतिया जड़े एक सूत्र मे गुथा हुआ है हम दोनो का जीवन। किस बात से मेरा भला होगा, किस बात से मुझे थोड़ा आनद मिलेगा, यही चिंता सदा उसके मन में रहती। स्वय उसने कालेज में नही पढा। इसका कुछ कम गम भैया के मन में नही था। अर्थक्वेक रिलीफ के काम से मिलने वाला एलाउंस उसने मेरी पढाई मे खर्च किया। अपने मन की साध उसने मुझ पर ही मिटायी। रिलीफ का काम समाप्त होने पर जब सामानो की नीलामी हुई, भैया ने एक साइकिल खरीद कर मुझे दी। यह सब तो निहायत मामूली चीज हैं। भैया के प्यार के प्रसग में चीज की बात लाना भैया के प्यार को मात्र छोटा कर देना है। मुझे सरदर्द होता तो भैया घबरा जाता। जेल मे 'रविवार' करके जो गुड मिलता था, मे गौर करता था कि भैया आप उसे नहीं खाता। क्योंकि उसे पता था कि मुझे भात खा चुकने के बाद थोडा-सा मीठा न मिले तो मुझे लगता है खाना पूरा ही नही हुआ। जेल मे नियमित रूप से उसने मेरा कुरता-जाघिया साफ किया है। टोकने से कहता, 'रहने दे, तुझे इसकी आदत नही है।' मैंने भी जोर नहीं किया। लगा, भैया मेरे लिए यह सब कर दे, यह तो मेरा वाजिब हक है। इसमे अस्वाभाविक कुछ नही है।

किंतु ··बिलु भैया का क्या मुझ पर कुछ भी हक नही? हो सकता है। हो क्या सकता है, है। उसका स्थान राजनीतिक क्षेत्र से बाहर है। राजनीति के क्षेत्र मे मैं नीलू और वह भैया नही। यहा तो व्यक्तिगत प्रश्न को छोडकर, युक्ति की कसौटी

पर प्रत्येक कार्यपद्धति को कसना होगा। दुनिया मेरे सबध मे जो भी इच्छा हो, सोचे। भैया मेरे मनोभाव को ठीक समझेगा। वहा सकीर्णता का नाम भी नही है।

1940 मे मैं और भैया जब गिरफ्तार हुए, हम दोनो सी. एस पी के मेबर थे। लेकिन जेल मे कुछ महीनो के अदर कैसा परिवर्तन हो गया। वार्ड के कटहल के पेड के नीचे, चद्रदेव से पहली बार परिचय कटहल के नीचे कबल बिछाकर लेकचर का क्लास सब कुछ आखो के सामने नाच रहा है। उसकी लाजवाब दलीलो के सामने सर झुकाना पडा। लगा, नजर के सामने का गहरा परदा खिसकता जा रहा है, भैया के पक्षपुट मे रहकर जिस ढग से राजनीति को देखता था, वह रूग्ण, जाडिज्ड, भ्रात था, वह सुविधावादी निम्न मध्यवित्तो की भाव-प्रवणता का उच्छ्वासमात्र था। वहा वास्तविक सर्वहारा की सावलील उद्धामता का स्थान नही—जातीयता से बाहर देखने की क्षमता उसमे नही। चद्रदेव की पार्टी मे दाखिल होने से पहले भैया से बात कर लेने की सोची थी। कहू-कहू करते-करते आखिर कह नही सका, मुख्यतया सकोच की खातिर, और गौणत यह खतरा था कि उसकी युक्ति का जवाब देते नही बनेगा। गोकि मन ही मन यह महसूस कर रहा था कि भैया की युक्ति गलत है। हर युक्ति का जवाब अगर चद्रदेव से सुनकर फिर भैया से कह सकता, तो होता। अत तक भैया से कहे बिना ही नयी पार्टी मे शामिल हो गया था। और, पूछता भी क्यो? राजनीति मे क्या सदा नाबालिग ही रहना है? उसी समय से हम दोनों के बीच जो एक दुर्लंघ्य व्यवधान खडा हो गया, वह आज तक रह गया। राजनीतिक कार्यकर्ता का जीवन उसकी पार्टी मे होता है—पार्टी के बाहर के अस्तित्व को उसे लुप्त कर देना चाहिए। उसके बाद से मैंने भैया से कतराकर चलने की कोशिश की है। निरी निजी बातों को छोड कर दूसरी कोई बात आपस मे नही हुई। मुझे सदा यह डर बना रहता कि मेरी पार्टी के लोग क्या सोचेगे! भैया तो एक प्रतिद्वंद्वी दल का नामी कार्यकर्ता हैं। उससे मेरी अतरंगता को मेरी पार्टी के लोग जरूर पसद नहीं करेंगे। शायद हो कि मुझे कुछ न कहे, पर आपस मे वे लोग जरूर इसकी आलोचना करेंगे। इन दो पार्टियो के अलावा और भी कई राजनीतिक उप दल के कार्यकर्ता वहां थे। हर पार्टी की यह धारणा थी कि उसकी पार्टी मे गैर पार्टी के खुफिया है। और सच भी, जितना ही गुप्त रखना चाहो, एक पार्टी की बात दूसरी पार्टी के लोग जरूर जान जाते। जेल में दीवाले भी सुनती हैं।

मेरा सकोच देखकर भैया भी मुझसे कतरा कर चलता। पार्टी के क्लास से लौटता तो देखता, मेरा बिस्तर झाड़ा हुआ है, उस साफ-सुथरे बिस्तर मे भैया के दरदी हाथो के स्पर्श का अनुभव करता। जिस रोज मा या पिताजी का पत्र आता, उसी दिन भैया से बाते करने का सुयोग मिलता। मा का पोस्टकार्ड आया, मैने पढकर भैया के बिछौने पर रख दिया। 'किस की चिट्ठी है, मा की ?' मैंने कहा, 'हा।' भैया पढने लगा, 'सवेरे खाली पेट चाय मत पीना। कभी-कभी त्रिफला और सबगोल खाया करना। बेल को आग मे पकाकर खाने का बदोबस्त हो सके तो सबसे अच्छा। मुझे बडा डर रहता है, जेल मे तुम लोगो को हर बार पेचिश हो जाती है। सिक्युरिटी कैदियों के लिए तो यह सब बदोबस्त करना कठिन नही है। यदि रुपये की जरूरत हो, तो लिखने मे शर्माना मत। जैसे भर बनेगा, भेज दूगी।'—'मा का रवैया।' कहकर भैया हलका-हलका हसने लगा। बाये गाल पर गड्ढा पड़ गया। कितनी बाते जी खोलकर कहने को जी चाहता है। पहले मा के बारे मे कितनी बाते होती थी। अब सिर्फ कह दिया 'हा'। कलेजे की कितनी बात पर सकोच के शैत्य से सब जम गयी। बचपन मे एक रजाई मे मै और भैया लेटे हैं। भोर के चार बजे से ही गप शुरू हुई उस गप का अत नही। अब मुख्तसर एक 'हा' कहकर लगा, अब बात नही फूट रही है। बात खत्म हो जाने की परेशानी आख-मुह में फूट उठती। उसे छिपाने के लिए किसी काम का बहाना करके वहा से चल देना पडता। ··

उसके बाद, जिस दिन देवली ट्रासफर हुआ। महज हम कई को ही देवली भेजा जा रहा था। उसमे भैया नही था। जाने के दिन भैया ने मेरा बक्सा सहेज दिया। बक्से के नीचे ताड़ का एक पंखा रख दिया। पंखे मे मां की बनायी झालर लगी हुई थी। उसमे एक जगह लिखा था—'नीलू-बिलू—पिलू-पिलू'। किसी वैसी घड़ी में मां के मन में जाने क्या आया था, क्या सोचकर उन्होने 'पिलू-पिलू' लिखा था, नही जानता ·· अपना फाउटेन पेन भैया ने मेरी जेब मे खोंस दिया। वह कलम अभी भी मेरी जेब मे है।

'बाबू साहब, सो गये क्या ?'

देखा, सूबेदार साहब मेरे नजदीक आकर खडे है।

'नही, क्यो ?'

वह ड्यूटी छोड़कर गेट से बाहर क्यो आया ?

'आपकी ड्यूटी खत्म हो गयी शायद ?'

'हा—नही, रात को तो मेरी ड्यूटी नही रहती। आज भोर-भोर मे अफसर-वफसर के आने की बात है। इसीलिए सोचा, आज यही सो जाऊ। इसके पहले जो फासी पडी थी, साहब राउड मे आया था। फासी मच के चारो ओर बडी-बडी बत्ती लगाकर उस स्थान को दिन जैसा कर दिया जाता है, और चार वार्डर वहा पर पहरा देते है। साला जेलखाने का मामला, कितनी तरह के कैदी, कितनी तरह के वार्डर। पैसा-वैसा लेकर कोई अगर फासी-मच मे कुछ गोलमाल कर दे तो ऐन वक्त से पहले जाना नही जा सकेगा। इसीलिए इतनी चौकसी। एक फासी मे गडबडी होने से साहब से लेकर वार्डर तक की नौकरी मे नुक्स लग जायेगा। और, इन सबकी सारी जिम्मेदारी होनी चाहिए हेड जमादार पर। लेकिन उस नवाबजादे ने जाने साहब को क्या पट्टी पढा दी थी, पता नही। देखा साहब मुझ पर बेहद खफा है। साहब इस 'डिपाट' मे नया आया है। जेल के कायदे कानून का न तो कुछ जानता है, न कुछ समझता है। लडाई के दिनों ऐसे कितने साहब को देखा है। कितनी मेम-साहब के हाथ का दिया सतरा खाया है। अब पेट की खातिर बिना कसूर के गाली-गलौज सुनना पडता है।'

देखा, सूबेदार साहब मुझसे कुछ कहा चाहता है, उसी की भूमिका बाध रहा है। पूछा, 'तो आप इस समय जा कहा रहे हैं ?'

'जो मच्छर है, सोने का उपाय है ? आफिस के कमरे में बिस्तर भी बिछा रक्खा है, पर बड़ी गरमी है। आपको भी तो जरूर मच्छर लग रहा होगा। इसी से सोचा, घर जाकर चाय पी आऊं। लडाई में जाने से यह बुरी लत लग गयी है। आप भी चलिये न ? मच्छर मे यो तमाम रात पडे रहने की क्या जरूरत है। नोखेसिह परिवार के साथ नही रहता है। उसी के क्वार्टर में रात बिताइये। आपकी दिमागी परेशानी को तो हम घटा नही सकते, पर जो थोडी-सी सेवा आपकी कर सकते हैं, वह क्यो नहीं करेंगे ? हम सब के भी बाल-बच्चे है। हम भी बिलायत के आदमी नही हैं।'

मैंने कहा, 'छोड़िये भी। मजे में तो हू। मच्छर ज्यादा नही है। इस रात को अब कहा भाग-दौड करू ?'

उसके भद्र व्यवहार ने मुझे अभिभूत किया। मेरी हल्की आपत्ति को न मानकर एक प्रकार से जबरदस्ती मुझे खीचकर उठाया। मैं कबलों को उठाने लगा। सूबे-

दार ने कहा, 'छोडिये—कुछ मुझे भी दीजिये। दोनो बाट-चूटकर ले चले।'

मैने कहा, 'ऐसा क्या भारी है!'

चार कबलो मे से तीन उसने लिए, मैने एक लिया।

बोला, 'बगल मे ही तो क्वार्टर है।'

रास्ता पार करके डाक्टरो के क्वार्टर से आगे हम वार्डरो के क्वार्टर के सामने जा खडे हुए। क्वार्टर ज्यादा नही है। सिर्फ सीनियर वार्डरो को ही घर मिलता है। बाकी लोग बडे बैरक में रहते है। एक दरवाजे के सामने जाकर धक्का देते हुए सूबेदार साहब ने कहा, 'अरे, ताला बद है! बाबू, मै बिलकुल भूल गया था। नोखेलाल अभी ड्यूटी पर है। नाहक ही आपको तकलीफ दी।'

मैने कहा, 'तो क्या हुआ, मै वापस चला जाता हू। दूर भी क्या है?'

'रुकिये, बत्ती तो आयी।'

'नही-नही, रहने दीजिये, बत्ती की जरूरत नही है।' रात के सन्नाटे को चीरत हुए एक कर्कश आवाज हुई 'लेफ्ट टर्न'। दूरी ने आवाज की कर्कशता को कुछ कम करके स्वर को कुछ मधुर किया। आवाज जेल के अदर की थी। शायद वार्डर बदल रहे है। ऐन गेट के सामने बैठ कर दो घटा पहले के 'दफा बदल' के समय यह नही सुना था। अभी गेट के कुछ फासले पर हू, इसलिए सुन पाया। गेट क्या 'साउड प्रूफ' है?

फिर लौटा। उसी पहली जगह मे कबल बिछाया। सिर्फ एक कबल बाकी तीन सूबेदार के पास रह गये। क्या सूबेदार साहब की इतनी सहृदयता इसीलिए थी? इसीलिए क्या दो पहर रात मे उन्हे घर जाने की याद आयी? कोई अगर एक कबल जेल से चालान करना चाहे तो उसे और भी तीन कबल अपने सहकर्मियो को देना पडेगा। जेल की चीज को बाहर चालान करने का यही चालू तरीका है। नहीं तो जाने का खतरा है। इस तरह अनायास तीन कबल घर ले जाने का लोभ रोक सकना सूबेदार साहब के लिए असभव है। तिस पर अभी युद्ध का बाजार· ·

फिर उसी पहले वाली जगह पर आ बैठा। राष्ट्र के विराट पेषण-यन्त्रो मे जेल का स्थान नगण्य नही है। चक्र मे चक्र—उन्ही मे से एक के सामने बैठा हूं। जेल-गेट—बडा ही कठोर और प्राणहीन है। घडी के काटे की तरह सब रुटीन के अनुसार चल रहा है। और घडी के यत्र के मुख्य-मुख्य स्थानो मे जिस प्रकार जुएल लगाया रहता है, उसी प्रकार पेषण यत्र के दो हीरक-यत्र है—गेट का सूबेदार

और अदर के सेंट्रल टावर का हेड-वार्डर।

इन्ही चार पाच घटो मे जेल गेट की एकरसता असह्य हो उठी। अधेरे मे वार्डरो के क्वार्टर तक चक्कर काट आने से मानो उस एकरसता से जरा जान बची।··· फिर वही वार्डरो का दल, घडी की सूई के अनुसार दरवाजा खोलना और बद करना। गेट पर वार्डर रखने के बजाय मशीन से काम लिया जाय, तो क्या हो? जहा एक ही काम की पुनरावृत्ति होती हो, वहा मशीन के सहारे काम लेना निश्चय ही सभव और समीचीन है।

गेट के ऊपर की मजिल से एक वार्डर सीढी से उतर रहा है। जेल के दुमजिले पर जेल के साहब का क्वार्टर है, उसी के सामने के खुले बराडे से बदूकधारी वार्डर घटा बजाता है—सर्दी-गरमी-बरसात, धूप-ठड, दिन-रात। घटे-घटे घटा बजाना तो है ही, इसके सिवाय साहब के अदर आने से एक घटा ठोकता है, माने-जाने अतिथि जेल मे आते है तो दो बार बजाता है। यह शायद अदर वालो को सावधान और गलती सुधारने के लिए काफी समय देने के लिए है। इसके सिवाय कभी-कभी 'पगली' का घंटा है। उस समय तो इसके बजने का विराम नही रहता। दूर से वह इतवार के गिरजे के घटे जैसा सुनाई पडता है।··· गिरजा अपने दल को सम्हालने मे व्यस्त और 'पगली' एक वर्ग के स्वार्थ की रक्षा मे लगा।··

···घंटा बजाने वाला वार्डर दो घटे का गुरुदायित्व निबाहकर गर्व के साथ गेट के सामने से चला गया। गेट के बाहर के सतरी ने पूछा, 'तुम्हे इतनी देरी क्यों हुई भैया? नये 'दफा' का वार्डर तो कबका ऊपर गया।'

'अरे यार, पूछते क्या हो? ड्यूटी शुरू करने गया तो पहले का वार्डर कह गया, एक बजे जेलर साहब को पुकार देना। सोचा, साहब शायद राउड में निकलेगे। दरवाजे पर जाकर हांक-पुकार की, तो बिगड़ उठा। बोला, 'क्यो चीख रहा है?' बड़ा अफसर है, जो कहे, वही सोहता है। पहले तो गरम हो उठे, फिर कहा,'नये वार्डर से कहना, तीन बजे जगा देगा।' यह वार्डर यदि न पुकारे तो खूब हो! साहब खुद आकर पुकारेगा। तब मजा मिले।'

गेट के सतरी ने कहा, 'अरे रुको, जा कहां रहे हो। खैनी-वैनी खालो।'
'नही भैया, सो जाए जाकर इतनी रात को खैनी क्या खाना?'

यह कहकर भी वह खैनी के इतजार में खडा रहा। पगड़ी उसने उतार ली—

शायद गरमी लगने से । सर काफी गजा ।

सतरी ने पूछा, 'सर मे थोडा ठडा तेल लगाओगे ? दिमाग ठडा होगा । जमादार साहब तेल यहा भूल गया है । शायद बी डिवीजन के कैदी का होगा । बेशक ठेकेदार साहब का 'नजराना' है । गजी खोपडी मे लगा लो । बाल उग आयेंगे तो गजी जगह पर मच्छर नही काट पायेगे ।'

इसके सर के गजे होने की उम्मीद ही नही की थी । मेरी स्टुअर्ट के घुघराले बालो की देश-विदेश मे शुहरत थी । वध-भूमि मे ले जाने के बाद लोगों को मालूम हुआ कि वह केश-दाम उनका स्वाभाविक नही, पर चूला है । · पुलिस कासटेबुल का सर वैसा सफाचट कभी देखा है, यह याद नही आता । उनके सर रहेगी पगडी, सन्यासी के माथे होगी जटा ·

मै और भैया जमीदार अखौरी सिह की बैठक मे गये थे, उनके मैनेजर ने मिलने के लिए लिखा था । ···धूर्त संताल 'माझी' ने अपनी जमीन जमीदार के हाथो से बचाने के लिए महात्माजी को दान दे दी थी । वह जमीन जमीदार के मेला लगाने की जगह पडती है । मेले मे जिन तबुओ का सौदा नारियो का देह-लावण्य होता है, वे तबू उसी जमीन पर खडे किये जाते है—कतार मे । इस बढते हुए मेले में इस तरह जगह की कमी पड रही थी । इसीलिए उस पर जमींदार की नजर पडी थी । माझी ने सोचा था, महात्माजी के लोग जमीदार से लड़े, बाद में हम जमीन पर दखल नही देगे, बस । हम लोग पहले उसके इस छिपे इरादे को नही समझ सके थे । पिताजी ने कहा था, वहा जमीन लेने की क्या जरूरत है ? मैने जमीदार को चिठ्ठी भेजी थी । उसी के जबाव मे यह बुलाहट थी—चमकता हुआ गजा सिर । सिर्फ पीछे की ओर चुटिया के पास एक गुच्छा बाल—लबा-लंबा रक्खा हुआ । वही स्पाअरल की तरह घुमा-घुमा कर 'ब्रिलेन्टाइन' देकर सर के सामने की ओर किया हुआ था । गजे सरवालो को क्या सचमुच ही बहुत रुपया होता है ? ·· मैथेमैटिक्स के शिक्षक रामेश्वर बाबू गणित पढा रहे थे । उनके सर के ठीक बीच मे थोडा-सा हिस्सा सपाट ! ब्लैक बोर्ड पर लिखा, 'टेक ओ दि मिडिल पोएट ।' क्लास के सब हंस पडे । पुराने जमाने में इसलिए क्या नकली बाल पहनने की प्रथा थी ? अखौरी सिंह ने मैनेजर से अगरेजी मे क्या तो कहा । मैनेजर साहब ने पूछा, 'आप लोग मास्टर साहब के लडके है ? काग्रेस वालटियरो ने माझी की जमीन पर छपर खडा किया है ! सुना है, उधर के तबुओ का वाय-

काट करने के लिए धरना किया जायेगा। जानते है न, कल रात पुलिस ने दो वालटियरो को पकडा है—आधी रात को, उन तबुओ से निकलने के कारण ? मेले की पुलिस का नियम जानते हो शायद। रात बारह बजे के बाद कोई उन तबुओ से निकल नही सकता हैं। या तो बारह बजे तक निकल आओ या फिर भोर मे निकलो। किसके पाले पड गये है आप लोग ? किसकी ओर से किससे लड रहे है ? उस माझी को और कही दो-दो बीघा जमीन दे देने से ही तो वह हम लोगो की तरफ आ जायेगा। काग्रेस के लिए मोटा चदा लेना चाहते हो, दे सकते है, पर जान-सुन कर यह झमेला अपने मत्थे लेना चाहते हो तो

'आदाब बाबू साहब।'

घटा वाला सिपाही जाते वक्त मुझे आदाब क्यो करता है ?

उसने कहा, 'परसो दोपहर को फासी सेल में मेरी ड्यूटी थी, देखा, बाबू अखबार पढ़ रहे है।' यह आप ही मुझे भैया की खबर देने आया। बडी देर से यह इच्छा हो रही थी कि इन वार्डरों से भैया के बारे मे पूछू। वार्डरो की जो भी टोली ड्यूटी पूरी करके बाहर निकलती थी, उसी से पूछने को जी चाहता कि उनमे से किस की ड्यूटी फासी सेल मे थी। कैसी तो झिझक-सी हो रही थी, इसलिए नही पूछ सका। शायद ये सभी मेरे गवाही देने की बात जानते है,—जेल ही मे तो विचार हुआ था। पता नही ये मेरे बारे मे क्या सोच रहे है। ··

अप्रत्याशित रूप से भैया की खबर मिल जाने से बड़ी खुशी हुई। वार्डर से खोद-खोद कर कितनी ही बातें पूछीं। जो खबरें निहाल सिंह से मिली थी, उन्हें एक-एक करके मिलाकर देखने लगा। समझ मे नहीं आता कि उसके खाने का कोई अलग प्रबध किया गया है कि नही। तो क्या निहाल सिंह ने सारे रुपये खुद ही खा लिए ? भैया के लिए उसने कोई प्रबंध नही किया ? भैया कब तक सेल मे पायचारी करता हैं, कब उठता है, कब नहाता है, कब सोता है—सभी बातों का जवाब वार्डर ने दिया। लगा, ज्यादातर वह अदाज से कह रहा है। दरअसल उसने खुद ध्यान से नही देखा है। एक दिन उसने देखा था कि बाबू बिल्ली को दही खिला रहा है। हो भी सकता है! झूठ-सच मिली-जुली बातें सुनने में अच्छी लगी। कम से कम इतना तो सच है, उसने भैया को देखा है। · वार्डर चला गया। पैरो में पट्टी या मोजे नदारद, जैसी गरमी पडी है न! खाकी हाफपैंट के नीचे दोनो पैर धनुष जैसे टेढे लगते है!

·· चीनी के पाव। दैत्य की छाया जहा खत्म हुई है, वहा दो चलते हुए

पांव—अधकार—गेट की एक झलक रोशनी से आलोकित पिच के रास्ते का एक टुकडा—अधेरा भरी दीवाल—गेट का गराद—फिर गेट पर आखे जा टिकी। घूम-फिर कर वह आलोकित अश ही नजर को खीचता है। इससे बाहर इससे कितना बडा अधकार और योजनव्यापी तारो भरा आकाश है। वह मेरी निगाह और मन को खीचे नही रख सकता। गेट के भीतर जाते ही बीच मे हॉल, दाये जेल का दफ्तर, बाये जेलर और सुपरिटेडेट—दोनो के बैठने के कमरे। दफ्तर के बाहर की ओर के सीखचो पर लोहे का जाला। कैदियो के सगे-सबधी आते है तो इन्ही जालघिरे सीखचों के बाहर खडे रहते है। अजीब है जेल का रवैया! मिलने वालो के लिए धूप और बारिश से बचने के लिए उस पर कोई आच्छादन तक नही—जाल से घिरा इसलिए कि कही कुछ लेने-देने की कोशिश हो! अनजान मिलने वाले एक तो काफी खर्च और मशक्कत करके जेल-गेट तक पहुचते है, तिस पर दरखास्त का हंगामा और उसे मजूर कराने के खर्च से ही उनकी अक्ल गुम हो जाती है। इस दुस्तर समुद्र को पार करने के बाद, घटो इंतजार करके जब कुछ मिनट के लिए सीखचे के उस पार कैदी की पोशाक मे रूखे केशो वाली एक दुबली-सी मूर्ति को देखते है, तब यह सोच लेने में भी समय लगता है कि वह मूर्ति उनके अत्यत परिचित प्रियजन की है। मामूली मेट और वार्डरो की अपमान-जनक बातें उन पर बेखटके बरसती है। कैदियो की पोशाक, खाकी वर्दी-पगडी, गराद, ताला, सी आइ डी.—कुल मिलाकर आबहवा को ऐसा बना देते है कि अकल गुम न होना ही ताज्जुब है। इधर-उधर की कुछ बातो के बाद ही मालूम होता है कि समय हो गया। मिलने वाले की आखो मे कुछ देर बाद प्रिय परिजन की दो मूर्तिया तिर आती हैं, एक तब की, जब वह सीखचो के सामने आकर खडा होता है, उद्ग्रीव, सलज्ज, अप्रतिभ मुखडा, दूसरी चले जाने के क्षण की—करुण, असहाय, आशाहीन। उस समय जबरन होंठो पर हसी लाने की नाकामयाब कोशिश कलेजे को चीरने वाली सलाई से भी मार्मिक लगती है।

·· 1933 मे पिताजी से मिलने के लिए हजारीबाग जेल गया। ताईजी ने उनके लिए एक टिफिन केरियर भर कर खाने का सामान साथ कर दिया था। वहा पहुचा तो पता चला, आज अपर डिवीजन के कैदियो से मिलने का दिन नहीं है, आज सी. क्लास के कैदियो से मिलने का दिन है। कई मिलने वाले उसी तरह से धक्कम-धुक्की कर रहे थे, जैसे स्टेशन के टिकट घर के सामने करते है। शोर-

शराबा मे कौन क्या कह रहा है, किससे कह रहा है, यह समझ सकना असभव है। एक प्रौढा स्त्री फुक्का फाड कर रो रही थी और रोते हुए ग्राम्य भाषा मे क्या-क्या कहती जा रही थी। उसका एक शब्द भी उसका लडका समझ रहा था या नही, शुबहा है। एक बुढा भुडा कई अमरूद और एक ठोगा फुलौडी ले आया था। अपने बेटे को वह सब खाने देने के लिए वार्डरो की खुशामद कर रहा था। वार्डर अपनी दर बढा रहा था, 'डाक्टर साहब के कहे बिना कैसे दू ? 'सी' क्लास वालो के लिए बाहर की चीज लेने का हुक्म नही है। 'सी' क्लास वाले को खाना देने मे मुझे एक रुपया देना पडेगा। और डाक्टर साहब की मजूरी के लिए अलग एक रुपया। इसमे मेरी नौकरी का खतरा है। बिना पैसे के मै यह काम क्यो करू ?' बहुत-बहुत निहोरा-विनती के बाद आखिर एक रुपये पर सौदा तय हुआ। उस बूढे भुडा का यह शायद एक साल का सचय है। रुपये को सिपाही जी ने पगडी मे खोस कर रख लिया। और, फुलौडी का वह ठोगा ठीक जगह पर पहुचा या नही, कौन जाने !

गेट के बायी ओर की दीवाल पर कांच के फ्रेम मे एक नोटिस बोर्ड। उसके अदर काले रग की पृष्ठ भूमि मे सारे सफेद कागज सटे हुए है। काहे की नोटिसें —मालूम नही। दूसरे जेलो मे तो देखा है, जेल कमिटी के मेबरों का नाम लिखा रहता है। इतनी नोटिसें ! लगता है, जेल निरीक्षण के लिए शीघ्र ही आइ. जी. आने वाले है। नोटिस-बोर्ड के नीचे टेलीफोन का रिसिवर। उससे पश्चिम वजन का यत्र—जैसा रेल-स्टेशन में रहता है। और गेट के ठीक बीचो-बीच गयी है रेल की पटरी—नैरोगैंज की लाइन जितनी चौड़ी ··· डि. एच. आर की किसनगज लाइन में उस बार छोटे इंजन से एक बैल को धक्का लगा था। चुगी पाडा के पास इजन लाइन से गिर पडा था। जेल की फैक्ट्री की चीजों से लदी ट्रालिया, गेट की इसी लाइन पर चलती है। लोहे की पटरियों के अगल-बगल गोबर पड़ा है। शायद बैलगाडी गयी है। साहब और हाकिम आयेंगे, इसलिए सभी चौकन्ने हैं। देख रहा हूं, पर गोबर की सफाई की किसी को याद नहीं। शायद हो कि याद हो, पर सुबह के कैदी जब तक नहीं आते—साफ कौन करे ? रेल की पटरी, नोटिस बोर्ड, वजन का यंत्र, टेलिफोन, पत्थर का फर्श—कुल मिला कर वहां स्टेशन जैसा भाव ला दिया है। लग रहा है, गाडी के इतजार मे प्लेटफारम पर कबल बिछा कर बैठा हू।

सौरीन से कह रक्खा है रामकृष्ण मिशन की दाह-सस्कार समिति को खबर

दे रखने के लिए, ताकि सवेरे सब लोग खडियाघाट मे मौजूद रहे। छोटा-सा शहर ज्यादातर लोग ही किसी न किसी रूप मे सरकार से जुडे है—वकील, मुख्तार, किरानी। सबको सरकार के मौजूदा मनोभाव से ताल मिलाकर चलना पडता है। वे लोग कही न आये ? पुलिस के डर से नही भी आ सकते है। तो ? फिर तो जेल के लोग ही दाह-क्रिया करेगे ! ये लोग पाच रुपया और लारी तो सभी को देते है। सौरीन का ख्याल है, जलूस निकाला जाय। वृहस्पति के दिन कलक्टर साहब से मिलने गया था। कलक्टर साहब ने इस शर्त पर मुझे लाश देना कबूल किया कि किसी तरह का जलूस न निकाला जाय। लेकिन लोग शायद नही मानेगे। सब लोग अगर श्मशान मे जाकर जमा हो, सो जितनी बडी भीड़ भी क्यो न हो, उससे कुछ जाता-आता नही। वैसे मे मेरी बात रह जाय। मगर मना किसे करू ? जूटकल यूनियन के सेक्रेटरी भैया है, इक्केवानो के यूनियन के प्रसिडेट भैया है—उन सारे यूनियनो के सदस्यो को कौन रोकेगा ? और कलक्टर साहब से मैने क्या वादा किया, नही किया है, वही बात बड़ी हो गयी ? न, निकले जुलूस। भैया का शव, बिलु बाबू का शव, शहीद का शव, मास्टर साहब के बेटे का शव, लोग इसमे भी जुलूस नही निकालेगे तो किसमे निकालेगे ? गाड़ी, मोटर, भीड—फूलो की माला, देवदारु के पत्ते ··· घर-घर से गगाजल की वर्षा, दुतल्ले पर से कुछ ताड़ के पंखे गिरे, उसके लिए छीना-झपटी, भीड, धक्का-मुक्की, ठेला-ठेली और उसके बाद ओर-छोरहीन जनप्रवाह की सर्पिल गति। ··सब मौन। 'गाधी जी की जय' नही, 'बिलू बाबू की जय' शोक का मर्सिया नही··बेतरतीब जन समुद्र की उद्दडता नही। है शोक से मुरझाई हुई निष्क्रियता, है एक राष्ट्रीय परिवार के मात्र एक को छोड़कर सबके प्रति सीमाहीन सहानुभूति, है सोये देशात्मबोध का धिक्कार—है भस्म की दिखती हुई शीतलता मे व्यर्थ आक्रोश की जगती हुई आग। एक इशारे पर यह असहाय शात जनता खूखार और पागल होकर फाड़कर मुझे टुकेड़े-टुकड़े कर दे सकती है। पूर्ण हडताल। ताईजी के घर के सामने जुलूस जरा देर के लिए रुका। ताईजी मृतदेह के ऊपर के फूलो को हटाकर एकबार क्या उस मुखडे की तरफ ताक सकेगी ? सिर्फ मुह खोला जायेगा। गले को मैं कपडे से ढक दूगा—फूल चदन से मुह की वीभत्सता छिप जायेगी। मुह के कोने से जाने कब कई बूदे लाल-सी लार निकल आयी है—सूखकर अब रक्त चंदन-सी दिखाई दे रही है। ·न, ताईजी के घर के सामने से जुलूस को हरगिज नही जाने दिया

जायेगा। श्मशान घाट मे फैला हुआ जन समुद्र, चारों ओर लाल पगडी से छा गया है—बदूकधारी अगरक्षक के साथ मजिस्ट्रेट और पुलिस साहब मोटर से उतरे। ' दाह-सस्कार में माहिर मनती-दा चिता सजा रहा है। वह हर प्रकार के उच्छ्वास और भावुकता से परे है। पूछा—'लकडी म्युनिसिपैलिटी की है? लाश जलाने के लिए जबसे लकडी जमा करना शुरू किया है, तब से यही लकडिया देख रहा हू। घुन लग गयी है। क्यो न लगे? थर्डक्लास म्युनिसिपैलिटी—लकडी का खर्च कहा है?'—लाश फूकने के दिन मनती-दा को एक बोतल शराब ज्यादा देनी पडती है। यह बात सबको मालूम है। तो क्या मनती-दा आज भी मुझसे शराब मागेगा? राख के लिए कैसी छीना-झपटी हो रही है! महिलाए आचल मे बाधे ले रही है, कोई-कोई बच्चो के कपाल पर लगाये दे रही है! इस समय क्या कोई मा बच्चे को प्राणो से लगाये मन ही मन कह सकी—'बिलु बाबू जैसा होओ।' हरगिज नही।' उस बार बदन पर पान-बसत (चेचक) के दाने लिए मै और भैया एक ही साथ बैलगाडी से आश्रम मे आये। मा के हाथ में पखा—हम दोनो दो बिस्तर पर लेटे। मन की उत्कठा और गहरी पीड़ा को दबाने की कोशिश करते हुए मा ने सिर्फ कहा, 'तुम लोग मुझे पागल बनाओगे?' मा ने ठीक ही कहा था। ··लमहे में जनता के सयम का बाध टूट गया—'जय!', 'गाधी जी की जय', 'बिलु बाबू की जय'। 'नौकर शाही नाश हो!' जय के नारे से आकाश-वातास गूज उठा। मिल के उस कुली ने ऐन मौके पर नारा लगाने की अगुआई ली। दुबले आदमी का ऐसा दराज गला कैसे सभव होता है? वह कह रहा है 'वदे' और जनता कह रही है 'मातरम्'। वह कहता है 'बिलु बाबू की', जनता कहती है 'जय'! हर बार बोलते समय वह दाये हाथ को ऊपर उठाता है—लगता है, अपनी तर्जनी से वह आसमान के किसी अज्ञात व्यक्ति को दिशा दिखा रहा है। पुलिस ने भीड़ को हटा दिया। हलके लाठी-चार्ज की जरूरत नही पडी। कुलियो के नेता का गला बैठ गया। हाथ उठाकर बीच-बीच मे जयकार की कोशिश कर रहा है, उससे हवाभरी रबर की टायर में हठात् छेद हो जाने से जैसे आवाज होती है, वैसी ही एक आवाज निकल रही है।

जिधर जेल सुपरिंटेडेट का कमरा है, जेल गेट के उस कोने मे दीवाल पर दड देने के तरह-तरह के यत्र टगे हैं, तरह-तरह की हथकडियां, 'डंडाबेडी', 'सिकडी-बेड़ी'। किसी ने जेल के वार्डर से रुखाई से बात की है, किसी ने शायद हो कि

जेलर साहब को दिखा दिया है कि 'फैल' (परोसने का वर्तन) मे साढे पांच छटाक चावल के बदले साढे तीन छटाक चावल आता है, किसी ने शायद कहा सुनी की है कि तीन महीने से कोहडे की तरकारी छोड कर दूसरी कोई तरकारी क्यो नही दी जाती, किसी ने शायद एक बेल तोडा है—ऐसे असख्य जेल-अपराधो की सजा देने के लिए ये सारे साज-सरजाम। कई बडे-बडे पीपो मे लाठिया खडी रक्खी है—सौ से ज्यादा पके बांस की लाठी। उसके पास एक स्टैंड के छेद मे खडी मोटी-मोटी बेत की लाठिया। उन लाठियो को हाथ में झुलाने के लिए ऊपर की ओर नेवार लगा हुआ है। ऊपर वाली दीवाल पर बहुत से पुलिस-बैटन टगे है और दाये बाजू दीवाल की हुको मे टंगी है कुछ लाल बालटिया—उन पर लिखा है फायर। एक तरफ लत्ता लिपटी कई दर्जन मशालो की ढेरी लगी है। जब रात को किसी भी प्रकार से गिनती मिलान नही होता, तो इन्हीं मशालो को किरासिन तेल में जलाकर वार्डर लोग कैदियो को ढूढा करते है। उनके हाथो में लालटेन या टार्च देने से ही तो हो सकता है। सो नही

··उस बार कैदी भागने का रिहर्सल चल रहा था 'पगली घंटी' बज रही है। साहब सेंट्रल टावर पर खडे हैं। वार्डर लोग साहब को अपनी कुशलता दिखाने के लिए मशाल लेकर इधर-उधर दौड रहे है—पेड तले और पाखानो पर ही उनकी नजर ज्यादा। वार्डर से चिल्ला कर योगीलाल ने सुपरिटेडेंट साहब से पूछा, 'सुपरिंटेडेट साहब है, सुपरिंटेडेट साहब, सचमुच कैदी भागे है या प्रैक्टिस-पगली है?' खोज-ढूढ खत्म हुई, तो सुपरिंटेडेड साहब हमारे वार्ड मे आये। हम सब उस समय सुशील लडके जैसे अपने-अपने बिस्तर पर। बात ज्यादा दूर तक नहीं गयी।

टन्-टन् करके दो बजे।

अब सिर्फ तीन घटे। आजकल नये टाईम से साढे पाच से पहले शायद सूर्योदय नहीं होता। उसके बाद सूर्योदय? सूर्योदय से पहले ही इन लोगो का सारा काम खत्म हो जाना चाहिए। क्योकि सूर्योदय होते ही जेल के रोजमर्रे का काम शुरू हो जायेगा। सात बजे के पहले ही प्रात. कालीन लप्सी-पर्व समाप्त कर देना होगा, इसलिए कि सात बजे से फैक्ट्री खुलेगी। साढे पाच बजे चूल्हे मे आच नही देने से सात से पहले सुबह का जलपान कैसे खत्म होगा? जो कैदी 'भट्ठी कमाड मे काम करते हैं' उन्हे नित्य क्रियादि करने का भी तो समय देना होगा न! पाच बजे से पहले ही काम समाप्त हो जायेगा।'

भैया अभी क्या कर रहा है ? शायद हो कि सीखचों को पकडे तारे जडे अधेरे आकाश की तरफ ताकते हुए आकाश-पाताल सोच रहा है। वह क्या मेरे बारे मे भी जरा सोचेगा ? भैया मुझे गलत नही समझ सकता। काश, इस विषय मे उससे मैं साफ-साफ बात कर सकता। जानता हू कि भैया के आगे खोलकर मेरा आचरण समझाने की जरूरत नही होगी, पर इससे शायद मन का भार कुछ हलका होता। उसकी पार्टी के कार्यक्रम को कामयाब करने का मतलब ही है फासिस्ट शक्ति को मजबूत करना—भैया ने क्या यह नही समझा है ? पर इन सारी दलीलो को हराकर हत्या के भीतर कहा तो क्या खच्-खच् करके गड रहा है। शायद युक्तिहीन भावुकता का अहेतुक अनुपात है। मेरी अपनी पार्टी के स्थानीय शाखा के सदस्यो की भी राय है कि मेरा भैया के विरुद्ध गवाही देना ठीक नही हुआ, भैया के विरुद्ध की बात नहो, उनकी राय हे कि हमारा कर्त्तव्य है देशवासियो की आखो मे उगली गड़ा कर उनका भ्रम दिखा देना, उन्हें समझाना। उनको पुलिस से पकडवा देना हमारा काम नही है। दुनिया के और सभी जो चाहे समझें, मगर मेरे काम के बारे मे मेरी पार्टी की यही राय है—यही 'अनकाइडेस्ट कट आव आल'। मार्क्सवाद का सूक्ष्मविश्लेषण शायद मै नहीं समझता। जब तक भैया की पार्टी में था, उसी के हुक्म तामील करता आया। उसी की बात को वेदवाक्य समझता रहा। 1942 की फरवरी मे भैया हजारी बाग जेल से छूटा। नजरबंदों के मामलों की स्क्रुटिनी चल रही थी। हाईकोर्ट के एक जज पर यह भार था—मराठी-जस्टिस था वो—माटे नाम था। भैया के छूटने के बाद हम लोगो को देवली से हजारी बाग जेल मे लाया गहा। सुना, सबको अपने-अपने प्रदेश मे ले जाया जायेगा। उसके बाद 18 जून को मुझे छोट दिया। फासिस्ट विरोधी दल वालों को जेल मे नही रखा जाय, उस समय सरकार यही चाहती थी।… जेल से निकलने मे इतनी खुशी और किसी बार नही हुई। सर्वहारा के जात-दुश्मन फासिज्म के खिलाफ अपने को लगा पाऊगा, जरूरत पड़ने पर इसके लिए हसते-हसते प्राण निछावर करूगा, यह सुयोग देने के लिए सरकार के प्रति कृतज्ञता से मन भर गया। स्पेन के लोगों की कहानी चीन के मरणजयी वीरो की कहानी—माओ-त्से-तुग के शौर्य और एकनिष्ठता, चन्द्रदेव के क्लास का प्रतिदिन का भाषण इन सबने शरीर की नस-नस में उत्साह की आग सुलगा दी थी। मेरे जिले के कितने काम मेरे इंतजार में पड़े हैं—जहा लोग महात्माजी

और मास्टर साहब के सिवा और किसी को नही जानते। अधविश्वास की इस अनजोती जमीन मे मुझे युक्ति की फसल उपजानी है। आश्रम मे लौटकर एक बार मा से मिले बिना भी नही चलने का, मेरे आपरेशन की वजह से निश्चय ही वह बहुत चिंतित होगी। वहा एक बार सबसे मिल-जुल लेने के बाद तब काम शुरू किया जायेगा। बस, कोडरमा स्टेशन, गया के वेटिंग रूम मे किस कदर मच्छर! किऊल, साहबगज, मनिहारी घाट, कटिहार—रास्ते का अत नही।

उसी अकुलाहट ने आज मुझे इस स्थिति में लाया है। भैया जनमत और सबसे ज्यादा दुस्सह, मेरी पार्टी के स्थानीय कामरेड का मत। गलती! सारी दुनिया के लोगो से गलती हो सकती है, मुझसे गलती नही हुई। 1942 के अगस्त की घटनाओ के परिप्रेक्ष्य मे मेरे काम का विचार करना होगा। एक बिजली की शक्ति ने सहसा सारे देश के लोगों को उन्माद और उतावला बना दिया। जिधर जाओ, लगता गोया पगला गारद का फाटक खोल दिया गया है। विक्षुब्ध लेकिन नशे मे विभोर जनता—क्या करे, सोच नही पा रही है। मीलो ··· रेल की पटरी उखाड़ कर फेक दी, लोहे की रेल-लाईन, भारी-भारी रेलवे स्लीपर, और भी जाने कितनी चीजे। दूर नदी मे जाकर टेलिग्राफ का तार काटना, डाकघर और शराब की दूकान जलाने का भार गांवो के बालको पर। वयस्क लोग ये काम करके अपनी हथेली मे गंध नही लगाना चाहते। तार काटना इतना आसान है, टेलिग्राफ के तार इस आसानी से टूटने वाला होता है, पता नही था। प्लायर्स, औजार, कैंची-कटारी—किसी चीज की जरूरत नही। लडके रस्सी लगा कर झूल गये या मरोड़ कर तोड डाला। बड़ो को चाहिए नया कार्यक्रम। और क्या करना चाहिए, सोच नही पा रहे थे। रेल स्टेशन, खासमहाल कचहरी, सब-रजिस्ट्री ऑफिस और थाने का अध्याय खत्म हो चुका। हाथ मे कोई काम नही। टोली बना कर वे जहा भी जा रहे थे, उनके सामने वहा के शक्तिस्तभ जमींदोज हो रहे थे और जुल्म के प्रतीक सर झुका लेते थे। सरकारी कर्मचारी जनता की खुशामद करते, मारवाडी बेझिझक चदा देते, जमीदारी कचहरी के नायक एक साल की मालगुजारी माफ कर देने का वचन देते, खासमहाल कचहरीके मैनेजर सबके भोज का आयोजन कर देते, दरोगाजी सर पर गाधी टोपी और हाथ में तिरगा लिए उनको खुश करने की कोशिश करते, चौकीदार अपनी वर्दी जलाकर नौकरी से इस्तीफा देते। गरीब किसान खूब खुश—अब जमीदार को लगान देने से वास्ता

नही, चौकीदारी टैक्स नही देना होगा। नया कुछ करने का मौका नही मिल रहा था। फारबिसगज लाइन मे रेल की पटरी जहा तक ठीक थी, वहा तक ड्राइवर और गार्ड जनता के हुक्म से गाडी चला रहे थे। हर स्टेशन पर टिकटघर के सामने लिख दिया गया था, टिकट लेकर सफर करना मना है। गढ बनैली स्कूल के कई छात्र लगातार चिल्ला रहे थे—'गाडी किसकी !'—'हमारी'। 'स्टेशन किसका !', 'हमारा'। 'इजन किसका !'—'हमारा'। कुछ लोग गाडी पर टिकट-चेकर का काम कर थे। जिसके पास टिकट है, उसे उतारे दे रहे थे। एक मुसाफिर के पास सेकड टिकट का आधा हिस्सा निकल आया—'उतर जाओ। फौरन उतरो। तुम स्वराज नही चाहते हो।' वह आरजू-मिन्नत करने लगा। बोला, 'यह पुराना टिकट है।' कौन तो सुनता है ! जजीर खींच कर गाडी रोकी गयी और उसे उतार दिया गया। थोडी दूर चल कर गाडी बीच रास्ते मे फिर रुकी। तिवारी जी जाने उस ओर कहा मीटिग करने गये थे। दो घटा रुककर इतजार करने के बाद, तब तिवारी जी की तिरगा झडे वाली बैलगाडी दिखाई दी। तिवारी जी आकर गाडी पर चढ गये। 'इनकिलाब जिंदाबाद' के नारे से आसमान फट गया। गाड़ी खुली। स्टेशन-स्टेशन पर कुर्सी, टेबिल, घडी, स्टेशन मास्टर लिखा साइन बोर्ड, बड़ी-बड़ी रजिस्टर बहियां जमा करके फूकी जा रही थीं। रेल के कर्मचारियों की भी इसके प्रति सहानुभूति दिखाई दे रही थी। कहीं भी रोक-थाम की कोई कोशिश नही, बल्कि बहुत जगह वे अपनी इच्छा से मदद कर रहे थे। एक छात्र प्लेटफारम पर एक बत्ती लिये नाचने की अदा से सबके मनोरंजन की चेष्टा कर रहा था। कसबा स्टेशन पर स्कूल कालेज के छात्रो ने टिकट-चेकर बच्चा सिह को भर पेट पीट कर दिलो का गुबार निकाला।

···चुकरी थाने में 'महात्माजी का इजलास' लगा। अब कोई सरकारी इजलास मे नही जायेगा। दरोगा बाबू को गिरफ्तार किया गया। उन्हे 'कौमी जेल' में ले जाया जायेगा। उनको 'दूसरे डिवीजन' का कैदी रक्खा जायेगा। रोज पूरी खिलाना। और देखना, उनकी स्त्री जहा जाना चाहे, उन्हें वहां पहुचा देना—हिफाजत के साथ। जेल का फाटक खोलकर कैदी भागने लगे। जेल के ऊपर 'राष्ट्रीय पताका'। सरकारी ट्रेजरी के नोटो को जलाया जाने लगा। पश्चिम में गोरखपुर जिले से लेकर पूर्णिया तक तमाम एक ही हालत। बिलकुल अराजकता—फासिस्टो का राज—राष्ट्रीय शक्ति की बरबादी—असगठित, विशृखल,

अदूरदर्शी, मगर दुर्लभ, निस्वार्थ, त्याग की महिमा से महान । लाल पगडी, काला मुह, हेलमेट पहने लाल मुह, बदूक, टामीगन—कुछ भी जनता को विचलित नहीं कर पा रहा था । दूर पर, बीर गाव स्टेशन की हाट मे टामीगन की आवाज—और इधर मकई के खेत मे लडके उसकी नकल करते हुए स्टेशन के फाग-सिगनल की आवाज कर रहे थे । क्यो ऐसा कर रहे थे, उन्हे नही मालूम । होली के दिन लोग भग-वग पीकर जैसा हो जाते है, ये लोग वैसा ही हो गये थे । इस अधीर उत्तेजना को ही भैया की पार्टी वाले क्राति का ड्रेस-रिहर्सल कहते—यही क्या तो 'क्राति की प्रचेष्टा' है । वीर गाव की 'क्रांति प्रचेष्टा' का नेता कौन ? विनायक मिसिर । वह, जहा देखो, वही है । आस-पास के गावो मे 'सत्य नारायण की कथा' सुनाता है, 'छठ पर्व' की पुरोहितगिरी करता है, हिदू मिशन का लेकचर देता है, ईसाई सतालो की शुद्धि करता है, काग्रेस मिनिस्ट्री के समय मत्री के दौरे के दौरान मोटर पर उनके बगल मे बैठता । वह हाथ देखकर, ब्याह की तिथि बताकर, टिप्पण तैयार करके, होम्योपैथी, आयुर्वेदी और टोटका दवा दे देकर खासा रोजगार कर लेता । मोटी-सी एक हिदी किताब उसकी पूजी है । उसमे बुझौवल-के जवाब से लेकर दवा-दारु तक सब लिखा है । धागड-बस्ती मे काली पूजा का मतर पढ़ते समय उसी पुस्तक से रामायण की कथा पढ देता । ऐसी नेता-गिरी, ऐसे सगठन, ऐसे समय मे 'क्राति' होगी ? भैया वगैरह को यह कौन समझाता ? मैने हरगिज अन्याय नही किया है। अपना कर्त्तव्य किया है । और, अगर मै गवाही नही देता, तो दूसरा कोई देता । सरकार को आदमी की कमी नही । फर्क इतना ही होता कि मैंने गवाही दी अपने राजनीतिक सिद्धात और कर्त्तव्य के नाते और दूसरा कोई देता लोभ से । भैया से अगर इस पर खुल कर बात कर पाता ? न, वह बेमानी होता । मैं कितना क्या कहता जाता और भैया चुपचाप धीरज के साथ सुनकर बीच-बीच मे मुस्कराता । हो सकता है, एकाध ऐसी बात कहता, जिससे मेरी युक्ति की धारा गदली हो जाती । उस हलकी हंसी से बाये गाल पर गड्ढा पडने से ही मैं समझ जाता हूं कि मेरी आपात तीक्ष्ण युक्ति उसकी दृढ़-विचारशक्ति पर जरा भी लकीर नही खीच सकी है । वह हसी मुझे हराने के लिए नही होती, होती मेरे उससे बाज आने के लिए । दो-एक मुख्तसर सवाल से मेरी युक्ति का महल धराशायी हो जाता ।

पिछले हफ्ते जब भैया से भेट करने आया था, तो मैंने उससे यह प्रश्न नही

किया था। उसकी युक्ति से हार जाने के डर से नही, सकोच से। वह क्या अपराधी के मन का सकोच है ? नही मैने कोई अपराध ही नही किया। तो फिर अपराध से आने वाला सकोच मेरे मन में कहा से आये ? उन बातो का उठाना सुशोभन नही होता, सकोच इसी का था। अतिम घडी के इतजार मे जिसे तुलसी चौरे के नीचे लिटा दिया गया हो, उससे क्या पूछा जाय कि वसीयत कहा रख गये है ! न, भैया को समझाने की जरूरत नही, उसने मेरी स्थिति ठीक ही समझी है।

खाकी हाफपैंट वाले एक कम उम्र के अफसर गेट के अदर गये। शायद असिस्टेट जेलर रात के राउड मे जा रहे है।

पिछले हफ्ते भैया से उसके सेल मे जाकर मुलाकात करनी पडी थी। साथ मे सी आई. डी सज्जन थे। एक वार्डर पहले से ही वहां खडा था। उन सब के सामने बात भी क्या ज्यादा होती ? मेरे हाथ मे रूमाल में बधे कुछ फल थे। अदर जाते समय सी आई डी. ने मजाक किया, 'देखिये जनाब, उसमे कोई गडबड चीज तो नही है ? अत तक मेरी नौकरी नही खा जाये। इस ओर बगाली की नौकरी, आजकल क्या मुसीबत है, जानते ही है। इस डिपार्टमेट में क्या यो ही आया !' रूमाल खोलकर उसे दिखाने लगा, तो बोला, 'रहने दीजिये, अरे, वह तो मैने यों ही कहा। आप भी जैसे ! हम लोग आदमी पहचानते हैं जनाब !' सी. आई. डी. भी मुझ पर विश्वास करता है। राजनैतिक कार्यकर्ता के लिए इससे बडा सर्टि-फिकेट और क्या हो सकता है? मैं इतने ज्यादा के लिए तैयार नही था। भैया के खिलाफ गवाही देने के बाद से ही मुझ पर से इनका सदेह जाता रहा है। "भैया, सेल मे सीखचों के पीछे खड़ा। रूखे बाल, काफी दुबला गया है। नाक कटार जैसी ऊंची हो आयी है। रंग पहले से और साफ हो गया लगता है। हाथ-पाव में फोडे-फुसी के दाग। उसके हसते से चेहरे, उत्सुकता भरी कोमल दृष्टि ने मुझे कुंठा का मौका नही दिया। पहले खुद वही बोला, 'रूमाल मे क्या है रे।' पहले आरंभ करने का मेरा सकोच जाता रहा। 'ताई जी ने भेजा है।' 'अच्छा ! ताई जी कैसी है ? कुछ कहा है क्या ?' पहले तो सोचा, सच ही बता कि उन्होंने तो नहाना-खाना छोड दिया है। नही, अब नाहक ही भैया के स्नेहातुर मन को बोझिल क्यो बनाऊ ? कहा, 'है तुम्हारी चर्चा प्राय करती हैं।' चेहरा देखने से लगा, भैया ने मेरी सच्चाई को दबाने की चेष्टा भांप ली है। सी आई. डी. ने कहा, 'दरवाजा खोल देता हू, आप बल्कि भीतर जाकर बैठिये न।' मैंने कहा,

'छोडिये', पर वार्डर ने दरवाजा खोल दिया। अदर जाकर भैया के कबल पर बैठा। उस दिन मै अपनी ओर से कोई प्रश्न नही कर सका। बात जाने कैसी तो खो जा रही थी। भैया ने शायद मेरे मन की हालत समझी थी। वह खुद ही मुझसे कितनी बाते पूछता गया। मै जवाब देता गया। आने के समय भैया ने कहा, 'मा से मिलना।' मुझसे भैया की यही आखिरी बात थी। उसकी इस आखिरी बात अतिम अनुरोध को भी मै नही रख सका। रो-रोकर वह मुझसे क्या कहेगी, यह सोचकर ही मै सिहर उठा। भैया मेरे मन का इतना सब समझता है और यह नही समझ सका कि इस समय क्या मा से मिलना मेरे लिए सभव है? उसे यह मालूम है मुझे क्या अच्छा लगता है, क्या नही लगता है। एक बार मैने भैया से एक अच्छी-सी कविता लिख देने को कहा था। मै बडे-बडे कवियो की उच्छवासित रुलाई का सुर समझ नही पाता। भैया ने मुझे मेरे समझने लायक कविता लिख दी थी।

चाहता हू मै सबका पूर्ण अधिकार
उससे कम मे तुष्ट कभी न होऊगा,
पर पुष्ट धनियो की उपेक्षा न सहूगा
श्रमिको के पेषण का कब होगा प्रतिकार।
  उसी दिन की देख रहा हू राह।
मुझको इसका है निश्चित विश्वास
यत्र पिसे श्रमिको का हताश निश्वास,
प्रलय लायेगा। और न कोई राह।
सूरज नया उगेगा, आयेगी भूख-दुखे मुखो
हसी। न हो चाहे धन किसी को अतुल अगाध,
साम्य राज्य मे कर्म चिता स्वाधीन होगी, होगी अबाध।

और याद नहीं आ रही है। पूरी की पूरी कविता ही मुझे याद थी। दो वर्षो मे मुझमे कितना परिवर्तन हो गया है। भैया के प्रभाव से छुटकारा पाने की मैने जी-जान से कोशिश की है। शायद इसलिए मेरे अचेतन मन ने स्मृति-पट से इस कविता को भी पोछ डालने मे मदद की है। कविता को मैंने आश्रम मे मा के कमरे के बरामदे मे टाग रक्खा था। अब भी है या नही, क्या जाने। इतने दिनो मे उसकी एक बार भी याद नही आयी। अब की जाकर जरूर ढूढ देखूगा।

'जगे हुए है, क्या बाबू ?'

देखा, सूबेदार साहब क्वार्टर से लौट रहा है। उसके आख-मुह से लगा, कुछ देर सो लिया है। मै हडबडा कर उठ बैठा।

'बैठिये-बैठिये, आराम कीजिये।' किसी से बोलने की इच्छा नही हो रही थी। सूबेदार गेट के अदर गया। दफ्तर की ओर जा रहा है। शायद शाम के बिछाये हुए बिस्तर को उठा रहा है। · भैया अभी क्या कर रहा है ? चिट्ठी लिख रहा है शायद। वह जरूर ही कुछ चिट्ठिया लिख जायेगा। निहाल सिंह को कापी-पेंसिल के लिए जो पैसे दिये थे, उनसे उसने वह सब सामान खरीद कर भैया को दिया था या नही, क्या पता। देने पर भी सेल मे वह सब रखना कठिन ही है, निश्चय ही रोज तलाशी होती होगी। लिखने की सुविधा रहने के बावजूद भैया शायद औरो की तरह चिट्ठी नही लिख जायेगा। गजब है उसका मन ! वह जो किस काम को अशोभन और दृष्टि-कटु समझता है, मै उसकी धारणा भी नही कर सकता। · सुना है, मृत्यु दड की पहली रात मेरी ऐतियोनेत के सारे बाल पक गये थे। भैया के सफेद बाल, कल्पना भी नहीं कर सकता। शायद हो कि वह मजे मे बेखबर सो रहा है ! सर वाल्टर रैले ने यूपकाष्ठ पर सर झुकाने से पहले जल्लाद से मजाक करते हुए कहा था, 'देखो भैया, मेरे बड़े ही शौक की इम दाढी को काट मत देना।' पहले यह अतिरजना-सी लगती थी। मगर भैया के बारे में कहते हुए यह अत्युक्ति नही लगती। कितने ही राजनीतिक कैदियों के फासी-मच पर चढने से पहले कितना कुछ करने की बात सुनी है। कोई बेहोश हो गया, किसी ने सुपरिंटेडेंट को गालिया दी, किसी ने अपने को कसूर वार माना, किसी ने भगवान का नाम लिया, किसी ने भाषण देने की असफल चेष्टा की। और कोई, 'सरफरोशी की तमन्ना' गाते हुए निर्विकार भाव से सीढी पर से होते हुए फासी के तख्ते पर जा खड़ा हुआ। पर भैया जरूर यह बात कहेगा, कि कमोबेश यह सभी नाटकीय है। भैया ऐसा कुछ नही करने का। उसके होंठों पर लापरवाही की हसी लगी रहेगी। उस बेपरवा भाव के आगे सुपरिंटेंडेंट की आखें झुक जायेगी, मजिस्ट्रेट अपनी निगाह दूसरी ओर फेर लेंगे, जेलर साहब खामखा टार्च जला कर कलाई की घडी को देखेगे, जो निर्विकार कैदी कुछ रेमिशन और पांच रुपये के लिए जल्लाद का जघन्य काम कर रहा है, उसके भी दिल की धडकन कुछ तेज हो जायेगी। भैया का इससे दूसरा आचरण ही मेरे लिए अप्रत्याशित है। ··

खट्, खट, खट्। गेट के दुतल्ले पर से कोई जीने से उतर रहा है। बलदृप्त गर्वाध व्यक्ति के पौरुष को जताने वाली पदध्वनि—धरती, यह जान लो, इस जगह और किसी की भी ताकत या हुक्म नही चल सकता—यहा मै ही सर्वेसर्वा हू—कुछ ऐसा भाव। बडी देर से इसी आवाज का इतजार कर रहा था। खाकी रग की जेल की पोशाक पहने एक बलिष्ठ सज्जन उतर आये। गेट के सतरी ने जूता ठोककर सैलूट किया, उसके बाद सीधा तनकर चुपचाप खडा हो गया। भीतर के वार्डर ने सलाम बजाकर दरवाजा खोल दिया। सूबेदार साहब गेट के सामने खडा है। उसके सामने के काले-सफेद दात निकल आये है। हसी मे, खुशामद की व्यजना झलकाने का प्रयास साफ समझ मे आ रहा है। सूबेदार के सलाम करने पर साहब ने पूछा, 'सब ठीक है न ?'

सूबेदार साहब ने कहा, 'हा हजूर' गोया तमाम रात यही इतजाम करते-करते वह पसीने-पसीने हो गया है।

जेलर साहब की नजर ट्राली लाइन के आस-पास जहा-तहा बिखरे गोबर पर पड़ी। पाव उलटकर उन्होने जूते के तल्ले को देखा—चेहरे पर खीज की झलक। सूबेदार भी भयमिश्रित दृष्टि से उन जूतो की ओर ही देख रहा है, खैर जूतो के नीचे गोबर नही लगा है—उसने राहत की सास ली।

जेलर साहब ने पूछा, 'गोबर की सफाई क्यो नही करायी है ?'

'जी कोई कैदी नही मिला।'

'क्यो ? बैल तो लॉकअप के बाद गेट से नही गुजरा है।'

ज्यादा कुछ कहने की जरूरत नही पड़ी। भीतर का वार्डर खुद ही इस काम में जुट गया। सूबेदार साहब का दिन आज अच्छा नही बीतेगा—भोर होते न होते यह काड ! भीतर का दरवाजा खोलकर जेल के अदर गये।

कहते गये, 'देखू जरा, अदर का क्या हाल है। आप लोगो पर कोई जिम्मेदारी सौंपकर निश्चित होने का उपाय तो नही है। साहब का और मेरा आफिस जिसमे दुरुस्त रहे।'

'जी हुजूर, कहना नही होगा। सब ठीक कर रक्खा है।'

सूबेदार साहब ने वार्डर से कहा, 'उल्लू जैसा मुह किये देख क्या रहे हो। जाकर देखो साहब का कमरा साफ किया गया है या नही। इन नये-नये 'बहालियो से काम चलाना कठिन है। काग्रेस आदोलन की वजह से जितने गाडीवान, हरवाहा

'चरवाहा' भर्ती हुए है। न कोई बात समझता है। न कोई काम समझता है। आजिज आ गया।'

छोटे से बडे तक सभी, अपने से नीचे के कर्मचारी से एक ही जैसा व्यवहार करते है।

चार का घटा बजा। फिर नये वार्डरो की टोली आयी। एक टोली मे बाईस आदमी रहते है। एक ही दृश्य का पुनराभिनय—सब जैसे एक ही रात मे मुखस्थ हो गया है। जैसे स्टेशन का प्लेटफार्म—बहुत- से लोग गाडी से उतरे—कुछ लोग गाडी पर चढे—कोलाहल, विश्रृखला,—फिर जैसे का तैसा।· भैया क्या सेल का सीखचा पकडे उस चरम घडी की प्रतीक्षा कर रहा है? चार का घटा जो बजा, उसे भैया ने सुना? गेट पर की शब्द तरगे वायुमडल मे कपन जगाती हुई कडेम्नड सेल् मे पहुच रही है—मेरी चिता तरगे क्या नही पहुच सकती? भैया अतिम क्षण मे किसके बारे मे सोचेगा—मा के, ताई जी के या मेरे? मेरे बारे मे क्यू सोचेगा? जरूर सोचेगा। उसकी वह चिता भरी होगी ग्लानि से, विषाद से, मुझ पर अभिमान से। वह युक्तितर्क से बहुत ऊपर की चीज है। 'इसके बाद मेरा पूर्णिया मे रहना असभव होगा। ताई जी को मैं मुह कैसे दिखाऊगा? टोले के लोगों के सामने निकलूगा कैसे? गवाही देने के बाद से इतने दिनो मे यह अवस्था बहुत कुछ सहा गयी है, पर मा के सामने जाना, नामुमकिन है वह तो। भैया के अतिम दिन की यह छवि अप्रत्याशित और आकस्मिक नही। पिछले कई महीनों से मन को इसके लिए तैयार किया है। समय मे, असमय मे इस चित्र ने मन को बोझिल बनाया है! ·· 'पाकुड मर्डर केस' की खबर रोज-रोज पढ़कर मैंने और भैया ने मा को समझा दिया। मां बोली, 'हाय मेरी मा, भाई-भाई में ऐसा होता है?'—और आज! इतने दिनो तक जनमत की परवा नहीं की। पर अब दिल टूट क्यो रहा है? जनमत की उपेक्षा की जा सकती है, पर मा की अव्यक्त वेदना भरी दृष्टि, ताई जी की मौन भर्त्सना की उपेक्षा नही की जा सकती। क्यो नही की जा सकती? सेंटिमेटल नानसेन्स! मेरे सामने पीडा-जर्जर समाज के बहुत सारे काम पडे हैं। जिस पर समाज के युग-युग से सचित आसू पोछने का भार है, उसका भला सकरे घर के कोने की दो-चार बूद गर्म आसू की सोचने से चल सकता है? खद्दर की साडी के आचल से ही आसू की वे कुछ बूदें पुछ जायेंगी। जीर्ण-कथा और मलिन उपाधान उन कुछ अश्रुबिंदुओ को गर्म

बालू की भाति सोख लेगे। मेरा क्या उसके लिए पडे रहने से चलेगा ? अभी मैं अपने भविष्य के लिए ही चिंतित हूं। मेरा क्या होगा, मेरे लिए यही बडी बात हुई, भैया का क्या हो रहा है, यह नही ?

· कन्हाई लाल के शव का मुखडा याद आ रहा है। भैया को भी क्या उसी तरह लोहे के स्ट्रेचर पर सुला देगा ? अधखुली आखे, अंतिम सास लेने की जी-जान से कोशिश करने के कारण मुह वीभत्स नही हुआ है—आखों की दोनो पुत-लिया कोटर के बाहर नही निकल आयी है—शात निद्रा का भाव—सिर्फ गला फूला हुआ—लहू जमने से नीला दाग पड गया है।

जेल के डाक्टर अघोर बाबू जेल गेट मे घुसे। जल्दी आने की धुन में भले आदमी परेशान हो गये है। उन्हें किसी भी तरफ ताकने की फुरसत नही है। जेल मे शायद पाच-छे डाक्टर हैं—लेकिन जेल के बडे डाक्टर सिविल सर्जन शहर में रहते है। उनका यहा क्वार्टर नही है, गरचे लड़ाई के पहले सिविल सर्जन ही जेल सुपरिटेंडेट होते थे। अघोर बाबू क्यो आये ? सूबेदार साहब ने पूछा, 'डाक्टर साहब, आप किस लिए ?'

'यों ही आ गया।'

सूबेदार साहब खुद भी माजरे को समझता है। आज साहब के सामने अपनी कर्त्तव्य-परायणता दिखाने की इच्छा सबको है। अघोर बाबू से मेरा परिचय है। गनीमत कि मुझ पर उनकी नजर नही पडी, नही तो जाने क्या पूछ बैठते। ·· वह आफिस में गये। जेलर साहब लौट आये है। उनके कमरे की बत्ती जली, पंखा घूम रहा है। हाफपैंट और सफेद हाफशर्ट मे सुपरिंटेंडेट साहब आ पहुचे—साथ मे सफेद और कत्थईरग का एक बुलटेरियर। वार्डरो के चेहरे पर त्रस्त भाव—सैलूट—अटेनशन—वह कुत्ता अंदर जाने से पहले जाने क्या सोच कर एक बार मेरे पास से चक्कर काट गया। भीतर के वार्डर ने कुत्ते के लिए दरवाजे को अध-खुला रक्खा है। साहब की अपेक्षा उनके कुत्ते पर जेल-कर्मचारियों का कम ध्यान नही—सभी यह जताने मे सजग हैं। जेलर साहब कमरे से बाहर निकल आये—साहब की अगवानी के लिए। अघोर बाबू भी आकर वहां खड़े हो गये। सूबेदार जेलर साहब के सम्मान के नाते एकबारगी उनसे सट करके न खडे होकर, जरा दूर पर खडा हुआ। साहब हस-हस कर जाने क्या गप कर रहे है और अनमने भाव से हाथ की टार्च को एक बार जला रहे है, एक बार बुझा रहे है। कुत्ता कभी

आफिस मे और कभी पैसेज मे जा-आ रहा है—मशालो को सूघ रहा है—साहब के पास आकर क्या जाने कौन-सी खबर जता कर चला गया। रात के सन्नाटे को चीरते हुए लारी की आवाज हुई · नजदीक आ रही है—भो—भो—मोटर का भोपू इतना जोर से बजता है—भैया, मा, पिता जी, शायद सभी के कानो यह आवाज पहुची। एक मोटर वान आकर गेट से कुछ दूर पर खडा हुआ। उसका दरवाजा खोल कर बदूकधारी पुलिस के जवान मानो कूदे, एक के बाद एक—एबाउटटर्न— राइट व्हिल। न, कोई तो नही उतरा! सभी शायद गाडी के अदर ही रह गये। ड्राइवर ने गाडी की बत्ती गुल कर दी—रास्ता और क्वार्टर सब फिर अधेरे मे डूब गये। साहब का कुत्ता भौक रहा है—कुत्ता गेट के सीखचो से बाहर आया—देख रहा है, उसके राज्य की शांति किसने भग की। रोशनी हठात् चमकी ही क्यो और फिर बुझ ही क्यो गयी—इसी की पड़ताल मे वह निकला।

राष्ट्र का सचालन चक्र चल रहा है—धीमे लेकिन निश्चित गति से—रात-दिन। कब, कितने दिन पहले किस अभागे मूरख ने इसके सामने सर ऊचा किये खडे होने का व्यर्थ दुस्साहस किया था। उसकी पुनरावृत्ति जिसमे न हो, इसी लिए सारे देश मे छोटे बडे असख्य चक्र नियोजित हुए हैं। उस घटना का, या उसके नायक का नामो-निशान मिटाकर ही राष्ट्र को शाति या चैन नही है। जिस स्वप्नविलास ने कुछ नवीनो के हृदय को उद्वेलित किया था, भविष्य मे भय से वह बेकार और पगु हो जाय, वह यही चाहता है। कोडा थाना, वेकटेश्वर दरोगा, फौजदार, सेशंस कोर्ट, सरकारी वकील, जज साहब, सरकारी गवाह नीलू, जेल-कर्मचारी—माला में एक के बाद दूसरा रग-बिरगा दाना स्थिर उद्देश्य से पिरोया जा रहा है। जिस उद्देश्य से ये सब नियोजित है, उस चरम मुहूर्त में अब देर ही कितनी है। · सिर्फ घातक को ही जिम्मेदार बनाने से कैसे चलेगा? इस बर्बरता का नैतिक दायित्व जज से लेकर वार्डर तक सबका समान है। विशेषज्ञ के इस युग मे, अपने सीमित क्षेत्र से बाहर कोई नही ताकता। वह आप यत्र के जिस अश का जिम्मेदार है, भले-भले वही निभ जाय, बस। विराट सचालन-शक्ति का उत्स कहा है, इसे जानने की उसे क्या पड़ी है? बेल्टिग के द्वारा इजन मे वह शक्ति अंशतः उसके पास पहुचने से ही हो गया। उसके बाद वह अपना आधा तैयार कच्चा माल आगे तक पहुचा देगा। इतनी दूर तक जितने हाथो से होता

हुआ यह मामला आया है, उसके सर्वत्र ही हासूदानव की नग्नता और बर्बरता को ढकने की एक चेष्टा थी। लेकिन अब वह ऐसी जगह आ पहुचा है, जहा आखो की शर्म की गुजाइश नही। 'ऋश और बी ऋश्ड !' जगन्नाथ का रथ अपनी गति के गर्व से चलता ही रहेगा। उसके पहिये के नीचे स्वप्नविष्ट कोई बदनसीब चूर-चूर हुआ या नही, यह जानने का उसे जरा भी आग्रह नही। वर्ग स्वार्थ के स्टीमरोलर को रास्ते से हरदम चलाते रहना होगा। विराम देने से ही निकम्मे पौधे सर उठायेगे। आश्रम मे प्रवेश करने का रास्ता भैया के अपने हाथो बनाया हुआ है। दोनो किनारे रजनीगधा की क्यारी। समय मिलता कि भैया निड़ानी लेकर रास्ते पर घास-वास निडाने बैठ जाता। सफेद खद्दर की एक गजी ·

एक मोटर और आ खडी हुई। वर्दीधारी चपरासी ने दरवाजा खोल दिया है। हैट-कोटधारी सज्जन—मुह मे चुरूट। सिविल सर्जन। सुपरिटेंडेंट साहब वगैरह ने उनका स्वागत किया।

सिविल सर्जन ने कहा, 'मुझे देर हो गयी क्या? मेरा इतजार तो नही कर रहे थे न?' 'नही-नही।' 'मजिस्ट्रेट साहब अभी नही आये है।' सुपरिटेडेट ने रिस्ट-वाच देखा। चेहरे पर ऊब। 'आइये, कमरे मे बैठे। कुर्सी खीचने की आवाज हुई। कमरे से गपशप की धीमी आवाज आने लगी। फिर मोटर का भोपू बजा। एक गाडी आकर खडी हुई। हाफपैंट पहने एक कम उम्र के सज्जन—गाडी से उछल कर उतरे। वह दौड़ते हुए जेलगेट मे घुस रहे है। जेलर साहब उनका स्वागत कर रहे है।

'नहीं-नही, आपको देरी नही हुई है। हम लोग ही जल्दी आ गये है। डाक्टर और सुपरिटेडेट उस कमरे मे आपकी राह देख रहे हैं। चलिये, वही बैठियेगा।'

कमरे में जाने की नौबत नही आयी। जेल के अंदर जाने के लिए सुपरिटेडेट, सिविल सर्जन—सब कमरे से बाहर निकले। एक-एक करके सभी अदर गये। दरवाजा कम ऊंचा हैं। सबको माथा झुकाना पड़ रहा है।' दिल्ली दरबार में ऐसे एक दरवाजे के होने की सुनी थी। कहा के तो राजा इसे अपमान समझकर नही आये। यक्षपुरी के अधकार ने एक-एक करके सुपरिटेडेंट के दल को लील लिया ···इस समय यहा से भाग जाऊ तो कैसा हो। शव की ओर मुझ से देखते न बनेगा! यहा से भाग जाने से कोई देख भी नही सकेगा।·· मजिस्ट्रेट का हुक्म

जेल के लोगों को दिखाना होगा। नही तो वे मुझे लाश क्यो देने लगे ? वह कागज गया कहा ? किसी भी जेब मे तो नही देख रहा हू। क्या हो गया ? घर ही तो नही छोड आया ? फिर तो जाना ही पडेगा। खैर अच्छा ही हुआ। नही कितना ही अच्छा।' 'अगली गाडी से पटना या बबई चल दू तो कैसा रहे ? अपनी पार्टी के इटेलेक्चुअल कामरेडो से मिलना बहुत जरूरी है। न, कागज तो जेब मे ही है, यह रहा कल अपने हाथो से इस जेब मे रक्खा था, जायेगा कहा ? मगर, अभी-अभी सभी जेबो मे ढूढ गया—कही नही मिला।

सूबेदार साहब के चेहरे पर नजर पडी। वह भी मेरी ओर ताक रहा था। उसने आखे फेर ली। मेरी ओर अब वह ताक नही पा रहा है!

लग रहा है, दूर पर एक-एक करके लोग जमा हो रहे है। हथियारबंद पुलिस के खौफ से शायद ज्यादा लोग नही आये है। नही तो अब तक तो इस स्थान को लोकारण्य हो जाना चाहिए था! एक क्वार्टर का दरवाजा खुला। सब लोग मानो लाश देखने के लिए उत्सुक है। ··भैया के गले में एक काला तिल हे ? जाडों मे गेरुआधारी पजाबी ज्योतिषी लोग हर साल पूर्णिया आया करते है · उन्हीं में से एक उस बार हम लोगो के आश्रम मे आया था।···आकर बिगडे उच्चारण से हसते हुए बोला—'मैं 'फारचुन टाइलर' हू।' भैया के इनकार करते रहने के बावजूद भैया का हाथ देखकर उसने बताया था, 'आपकी परमायु अस्सी साल है।' मक्कार, झूठे कही के। भैया उसकी बात पर हसने लगा, बोला,'यह काग्रेस आफिस है। आपने जो कष्ट उठाया, हम उसके लिए पैसा नही दे सकेंगे।'

अच्छा, भैया अगर बेहोश हो जाय, तो ये लोग क्या उसी हालत मे उसे फासी पर लटकायेंगे ? ऐसा भी होता है ?

फासी की रस्सी को लेकर मेट और पहरा छीना-झपटी कर रहे हैं। जेल की उस बार की याद आ रही है। रस्सी को वे लोग काटकर टुकड़े-टुकडे करने की कोशिश कर रहे है। चर्बी लगी चिकनी रस्सी पर लोहे की भीतरी पत्ती फिसल-फिसल जा रही है।···भाग्यवानों को एक-एक टुकड़ा मिला। उससे क्या तो आशुफल देने वाला वशीकरण कवच बनता है।

अब अदर का फाटक खुला। सुपरिंटेडेट, मजिस्ट्रेट, सिविल सर्जन, जेलर, अघोर बाबू, असिस्टेंट जेलर,—वार्डर, वार्डर, वार्डर, कुत्ता, वार्डर—

सभी मानो जबरदस्ती होठो पर हसी लाने की कोशिश कर रहे हैं। दिखाना

चाहते है कि इस मामूली-सी घटना मे वे जरा भी विचलित नही हुए है, सिर्फ चाय पीने मे जरा देरी हो गयी, बस। सुपरिटेडेट ने सिविल सर्जन और मजिस्ट्रेट को अपने क्वार्टर मे चाय पीने का आग्रह किया। गेट खोला गया। कुत्ता आगे-आगे रास्ता दिखाता चलने लगा। दोनो मोटरे उनके पीछे-पीछे बगले के पास जाकर खडी हुई। लॉरी का ड्राइवर स्टीयरिंग पकडे तैयार बैठा है। वार्डर ने अदर के दरवाजे को अभी भी जरा फॉक करके रखा है आ गया शायद · अभी ही ·

'अरे, नीलू बाबू ? नमस्ते। इतनी भोर मे इधर ? इटरव्यू की कोशिश मे शायद ? सी आई.डी तो आठ बजे से पहले नही आता। चलिये मेरे यहा चलिये। तब-तक चाय-वाय पी लीजिये, क्या ख्याल है ?'

अघोर बाबू ने मुझे जवाब देने का मौका नही दिया। बडे कष्ट से कहा, 'नही, इंटरव्यू के लिए नही आया हू—आया था,—आज भैया का · ' आगे बात नहीं फूटी। होठ काप रहे है। पर बात नही निकल रही है, किसने तो जैसे सख्त हाथो गले को दबोच दिया है। मेरी आखो मे भी आसू आ गये। दूसरी ओर देखते हुए किसी तरह से मजिस्ट्रेट साहब की चिट्ठी उन्हें दी। अघोर बाबू चिट्ठी पढ़ने लगे। मैंने आसू पोंछ लिये।

'अरे, तो यह कहिये ! क्यों आप लोगो ने सुना नही ?' उन्होने मुझे गले से लगा लिया।

'गवर्नमेट की चिट्ठी जो आ गयी, फासी की सजा अभी मुलतवी रहेगी।' ऐं ! कह क्या रहे है ? अघोर बाबू पागल हो गये क्या ?' मैने उनके दोनो हाथ कसकर पकड लिए। वह कहते गये—

'फौजी इलाके को छोड़कर भारत मे तमाम अगस्त आंदोलन मे सैबोटेज करने के जुर्म मे जिन्हे फासी का हुक्म हुआ था, उनकी फासी अनिश्चित काल के लिए स्थगित कर दी गयी हैं। दूसरी जगहो मे इस आदेश के पहले ही फासी हो गयी। जिन पर हत्या का इलजाम था, वे लोग अवश्य इस आदेश के अदर नही आते। ·· आज एक साधारण कैदी की फासी थी। वह तीन नबर सेल मे रहता था। परसो आर्डर आया। आपके भैया को एक नंबर सेल से हटाया नही गया। साहब ने कहा हगामा बढाने से क्या फायदा ? उसी से गलत फहमी हुई। और जेल के कैदियो को फांसी का हुक्म पहले से बताने का तो नियम नही है। अदाज से ही जेल के लोग जो भाप लें। इसी से आप लोगो को गलत खबर मिली।' मेरी बोलने की

शक्ति जाती रही। सब शात। नसो में लहू का चलना भी बंद। पेड के पत्तो तक मे स्पदन नही। ग्रह अपनी गति भुलाकर स्थिर खडे। वीर भोग्या वसुधरा की अपर्णा मूर्ति।—सास लेने मे भी भय होने लगा। उमा की तपस्या भग न हो

धमनी मे फिर स्पदन हुआ। पेड़-पेड पर पक्षियो की काकली——पत्ते-पत्ते पर प्रभात समीर का डोलना लास्यमयी धरती फिर नाना छदो मे लालायिता हो उठी। · पत्थर के जेलगेट के ऊपर वाले तल्ले पर हठात् उषा की आरक्तिम आभा की मधुर झलक !